व्याकरण-प्रदीपः

(Sanskrit Grammar and Composition Made Easy)

BY

Prof. M. K. Sircar
M A, (Cal. and Dac.)
Head of the Department of Sanskrit D. A. V. College., Lahore,
Lecturer, the Panjab University
and
Member of the Board of Studies in Sanskrit and Hindi, University of The Panjab.

&

Sant Gokul Chandra Shastri, B.A.
Head Sanskrit-teacher (Retired),
D. A. V. High School, Lahore.
and
Formerly member of the Board of Studies in Sanskrit and Hindi, University of The Panjao.

ORIENTAL BOOK DEPOT
HOSPITAL ROAD.
LAHORE.
1945.

तीसरा संस्करण] [Price Rs. 4-12-0 (corrected by hand to 15)

Printed at the Arorbans Press, Anarkali, Lahore. For Sant Goakal Chandra, Publisher.

मैट्रीकुलेशन का सिलेबस (Syllabus) इस पुस्तक के पृष्ठों के अनुसार—

1. अच्-सन्धि 17—22
2. हल्-सन्धि, विसर्ग-सन्धि 23—32
3. Change of न् into ण् 42
4. Change of स् into ष् 43
5. Declensions of simple bases of nouns 42—103
6. Declensions of Pronouns 74—84
7. Prominent feminine affixes 61—67
8. Prominent uses of cases 285—296
9. Numerals 104—115
10. Degrees of Comparison 297—300
11. Conjugation of Roots in लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्, लृट्।

(a) भ्वादि–भू (P), इष् (P), पठ् (P), रक्ष् (P) वद् (P), पच् (P), नम् (P), गम् (P), दृश् (P), सद् (P), स्था (P), स्मृ (P), पा (P), जि (P), सेव् (A), लभ् (A), वृत् (A), वृध् (A), मुद् (A), सह् (A), ईक्ष् (A), याच् (U), नी (U), हृ (U), 120—150.

(b) अदादि—अद् (P), अस् (P), स्तु (P), ब्रू (P), रुद् (P), दुह् (P), जागृ (P), स्वप् (P), हन् (P), विद् (P), शास् (P), इ (प), आस् (A), शी (A), अधि+इ (A), 180—194.

(c) जुहोत्यादि—हु (P), भी (P), दा (U), भृ (U) 196—201.

(d) दिवादि–दिव् (P), नृत (P), व्यध् (P), नश् (P), श्रम् (P), भ्रम (P), विद् (A), युध् (A). जन् (A) 150—159.

(e) स्वादि—सु (U), आप् (P), शक् (P) 201—206.

(f) तुदादि—तुद् (P), इष् (P), स्पृश् (P), प्रच्छ् (P), मृ (A) विद् (U), मुच् (U) 159—168.

(g) रुधादि—रुध् (U), भुज् (U), युज् (U) 206—211.

(h) तनादि—तन् (U), कृ (U), 212—215.

(i) क्रयादि—क्री (U), ग्रह् (U), ज्ञा (U) मुष् (P) 215—223

(j) चुरादि–चुर् (U) चिन्त् (U) तड् (U) कथ् (U) भक्ष् (U) 166-176

12. Prominent Causal forms 224—229.
13. Voices, an elementary knowledge only 230—236.
14. Compounds, an elementary knowledge only 267—283
15. कृदन्त—क्त, क्त्वा, तुमुन् 237—252.
क्तवत्, तव्य, अनीय, यत्, शतृ, शानच् 255—265

विषय-सूचिका

प्रारम्भिक

मनुष्य और इतर प्राणियोंमें प्रमुख भेद यही है कि मनुष्य अपने भावोंको यथेष्ट प्रकट कर सकता है और मनुष्यभिन्न प्राणी नहीं कर सकते। भावोंको प्रकट करनेका साधन भाषा है। 'भाषा' शब्द 'भाष्' (बोलना) धातुसे बना है और इसका अर्थ है—मुखसे उच्चरित शब्दों और वाक्योंका वह समूह जिसके द्वारा हम अपने भाव व्यक्त कर सकते हैं।

मनके भाव सामने खड़े हुए व्यक्तिसे तो बोलचालसे व्यक्त किए जा सकते हैं किन्तु परोक्ष व्यक्तिसे इस साधनका प्रयोग नहीं हो सकता, इसलिए उसके लिए लिखित भाषाका प्रयोग होता है। इसलिए भाषाके दो भेद हुए—भाषित और लिखित।

भाषा भावोंको तभी व्यक्त कर सकती है, जब वह शुद्ध हो। भाषाको शुद्ध रखनेके लिए विशेष नियमोंका अनुसरण करना पड़ता है। इस लिए भाषा सीखनेवालोंके सुभीतेके लिए ऐसे नियमोंका एकत्र समावेश आवश्यक है।

१—वह विद्या या शास्त्र जिसमें किसी भाषाके शब्दोंके शुद्ध रूपों और वाक्योंके प्रयोगके नियमों-आदिका निरूपण होता है, उसे *व्याकरण* कहते हैं।

इसी कारण शुद्ध भाषाके ज्ञानके लिए उस भाषाके व्याकरणका ज्ञान आवश्यक होता है।

जो भाषाएँ सदा बोलचालमें व्यवहृत होती रहती हैं, उनको सीखनेके लिए व्याकरण-ज्ञानकी इतनी आवश्यकता चाहे न भी हो, परन्तु जिन भाषाओंका व्यावहारिक प्रयोग सदियोंसे बंद है, उनका ज्ञान बिना व्याकरणके ज्ञानके कभी नहीं हो सकता। इसी कारण संस्कृतका

ज्ञान प्राप्त करनेके लिए संस्कृत-व्याकरण का ज्ञान अनिवार्य है।

संस्कृत-भाषाका प्राचीनतम नाम दैवी वाक् (देवताओं की भाषा) आर्य-भाषा है। वैदिक कालमें वह बोलचालकी भाषा थी। उसमें कालान्तरमें परिवर्तन होने लगे, जिनका परिणाम यह हुआ कि इतर भाषाओंके संमिश्रणसे अनेक भाषाओंका उदय होने लगा। संस्कृत आर्य-भाषाकी ज्येष्ठ पुत्री है, अन्य भाषाएँ उसकी सहोदरा या तनुजा हैं। जैसे बूढ़ी माताको स्वेच्छासे या परिस्थितियोंसे बाधित होकर अपनी सन्तानके उन्नतिपथसे हट कर पीछे हो जाना होता है, इसी तरह संस्कृतको भी अपनी भाषाओंको उन्नत करनेके लिए स्वयं पीछे हटना पड़ा।

वह समय संस्कृतके धुरंधर अभिज्ञाताओं और प्रेमियोंका था। उन्हें यह खटका कि यदि देववाणीरूपी सुरवाहिनीकी पवित्र धाराएँ इसी तरह कलुषित होती रहीं तो समयान्तर में उसका विशुद्ध रूप देखनेको भी न मिलेगा। अतः शाकटायन और पाणिनि आदि वैयाकरणोंने संस्कृतको एक विशिष्ट परिधिके अन्दर सन्निविष्ट रखनेके लिए व्याकरणके ग्रंथ रचे, जिनके द्वारा संस्कृत भाषा अव्यवहृत होते भी अब तक अपना शुद्ध रूप रखे हुए है। जो रूप संस्कृतका अब प्रचलित है वह पाणिनिकी चलाई हुई सरणीका ही अनुसरण कर रहा है।

अनुशीलनी—१

भाषा किसे कहते हैं ? वह कितने प्रकार की है ? शुद्ध भावोंको कैसी भाषा प्रकट कर सकती है ?

व्याकरण किसे कहते हैं ? व्याकरणका मुख्य प्रयोजन क्या है ? संस्कृतका बोल-चालमें व्यवहार कब होता था ? कुछ प्राचीन वैयाकरणोंके नाम बताओ। पाणिनि कौन थे ? उनके व्याकरणका नाम बताओ।

भाषाके खंड

मनके भाव प्रकट करनेके लिए वाक्योंका प्रयोग करना होता है। वाक्य पदोंके मेलसे बनते हैं और पद वर्णोंके मेलसे।

जैसे—अहं गृहं गमिष्यामि। (मैं घर जाऊँगा) ये तीन पद हैं। यदि तीनोंको अलग अलग बोला जाय, तो अर्थ कुछ स्पष्ट नहीं होता। इसी तरह प्रत्येक पदके वर्णोंको यदि अलग अलग किया जाय तो उन पदों की सत्ता नहीं रहती। (कई बार एक क्रियापद और विस्मयबोधक (Interjection) अव्यय भी पूरे वाक्यका बोध करा देते हैं। जैसे—गमिष्यामि। (जाऊंगा)। अहो! (आश्चर्य!) इसलिए मानसिक विचारोंको व्यक्त करने के लिए वाक्य-ज्ञानकी, वाक्योंके ज्ञानके लिए पद-ज्ञानकी और पदोंके ज्ञानके लिए वर्ण-ज्ञानकी आवश्यकता रहती हैं। इन्हीं तीनोंसे भाषाका कलेवर बनता है। इसलिए भाषाके तीन खण्ड हुए—

वर्ण, पद और वाक्य

व्याकरणका उद्देश्य इन तीनोंका निरूपण करना है। अतः व्याकरणके तीन खंड हैं—१—वर्ण-निरूपण, २—पद-निरूपण, ३—वाक्य-निरूपण।

अनुशीलनी—२

वाक्यके कितने खंड हैं? उदाहरण देकर समझाओ। भाषाके कितने और कौन कौन खंड हैं?

परिभाषा-प्रकरण (Technical terms)

'परिभाषा' का अर्थ है 'परिमित रूपसे किसी विचारको प्रकट करना।'

२—ऐसा *सांकेतिक* शब्द वा पद जो किसी विशेष अर्थ वा भावको प्रकट करे, *परिभाषा* कहलाता है।

जैसे—'संधि' का अर्थ है मेल, पर व्याकरणकी प्रक्रियामें 'वर्णोंके मेलको' ही संधि माना गया है। इसी प्रकार 'समास' का अर्थ है संग्रह या

संमेलन, किन्तु व्याकरणमें 'पदोंके मेलको' समास कहते हैं ।

३—संधि (Combination of letters)—व्यवधान-रहित दो अक्षरोंके मेलसे जो *विकार* होता है, उसे *संधि* कहते हैं ।

जैसे—'सूर्योदयः' में 'सूर्य उदयः' ये दो शब्द हैं । इनमें 'सूर्य' के अन्तिम 'अ' और 'उदयः' के आदिम 'उ' इन दोनोंके मध्यमें कोई और वर्ण नहीं है । इस लिए इन दोनोंके मेलसे 'ओ' विकार हो गया है । व्याकरणकी परिभाषामें हम कहते हैं कि 'अ' और 'उ' में संधि हो गई है ।

४—संयोग (Combination of consonants) दो वा अधिक व्यञ्जनोंके मेलको *संयोग* कहते हैं ।

जैसे—'व्यवहार' के 'व्य' में व् और य् का संयोग है । 'रुन्द्ध' के 'न्द्ध' में न्-द् ध् का संयोग है । 'कार्ष्ण्य' के 'र्ष्ण्य' में र्—ष्-ण्-य् का संयोग है । जिन व्यञ्जनोंका संयोग हुआ हो, उन्हें संयुक्त व्यंजन कहते हैं ।

व्यञ्जनोंको संयुक्त करनेका यह रीति है

(क) कुछ व्यञ्जन ऐसे हैं जिनके अन्तमें (।) पाई है । जैसे—ख ग घ च ज ञ ण त थ, ध न प ब भ म य ल व श ष स ।

पर व्यंजनसे संयुक्त होते ही इनकी पाई (।) नहीं रहती । जैसे—ख+य=ख्य—विख्यात, ग+न=ग्न,—लग्न, घ+न=घ्न—विघ्न, च+य=च्य=च्यवन, ज+व=ज्व—ज्वर, ञ+च=ञ्च—सञ्चय, ण+ठ=ण्ठ—कण्ठ, त+क=त्क—सत्कार, थ+य=थ्य—मिथ्या, ध+य=ध्य—ध्यान, न+य=न्य—न्याय, प+त=प्त—तप्त, ब+ध=ब्ध—आरब्ध, भ+य=भ्य—अभ्यास, म+ल=म्ल—म्लेछ, य+य=य्य कार्य्य, ल+प=ल्प—कल्प, व+य=व्य—काव्य, श+व=श्व (श्व)—अश्व, ष+ट=ष्ट—इष्ट, स+थ=स्थ—स्थान ।

(ख) कुछ व्यञ्जन ऐसे हैं जिनके पीछे (7) चिह्न है । जैसे—क, फ, भ । उस चिह्नका केवल (–) रह जाता है । जैसे—क+त=क्त—वक्ता (क्त), क+व=क्व-क्वणन (क्व), इसी प्रकार भ+य=भ्य, फ+य=फ्य ।

(ग) ङ ट ठ ड ढ यदि किसी पर वर्णसे संयुक्त हों तो पर वर्णके ऊपरकी रेखा (—) गिर जाती है। जैसे ङ+क=ङ्क—अहङ्कार, ट+व=ट्व—खट्वा, ड+ड=ड्ड—उड्डू ।

(घ) र पर वर्णसे यदि संयुक्त हो तो वह पर वर्णके ऊपर (ˆ) के रूपमें आ जाता है। जैसे—र+म=र्म—कर्म, कार्य। र यदि किसी पूर्व वर्णसे संयुक्त हो तो उसका रूप (-) होजाता है। जैसे—पर+=प्र—विप्र, प्रण, प्रश्न, क्रान्ति (त्र)।

(ङ) त त से पुव (-) बन जाता है। जैसे—त+त=त्त—वित्त। द+ध=द्ध—बद्ध, द+य=द्य—विद्या. ह+य=ह्य—सह्य, ह+न=ह्न—चिह्न, क+ष=क्ष—क्षत्रिय, ज+ञ=ज्ञ—ज्ञान।

(च) दोसे अधिक व्यंजनोंका भी इन्हीं नियमोंसे संयोग होता है। त+म+य=त्म्य—माहात्म्य. र+य+य=र्य्य—कार्य्य, र+ष+ण+य=र्ष्ण्य—कार्ष्ण्य।

(इन्हीं नियमोंसे सब व्यजनोंका परस्पर संयोग होता है।)

संधि और संयोगमें भेद—संधिके द्वारा दो अक्षरोंके मेलमें कुछ न कुछ विकार होता है। सयाग केवल व्यंजनोंका (व्यंजनोंकी संख्या नियत नहीं) परस्पर मेल ही होता है, उनमें कोई विकार नहीं होता।

५—समास (Compound)...एकसे अधिक पदोंको मिलाकर एक पद बनाना समास होता है।

जैसे—'रामदत्त' में 'राम' और 'दत्त' दो पद हैं। जब इन दोनोंको मिलाया जाय तो रामदत्त एक पद बन जाता है। प्रायः यह कहा जाता है कि इन दोनों का समास हो गया या दोनों पद समस्त हो गए हैं।

संधि और समास में भेद—वर्णों के मेल को सन्धि कहते हैं और पदों के मेल को समास। जैसे—'हिमालयः' में हिम+आलयः में अ और आ के मेलसे सन्धि हुई है और हिम और आलय इन दो पदोंके मेलसे समास हुआ है।

६—विभक्ति (case-endings)—किसी वाक्यके अन्तर्गत शब्दोंके परस्पर संबन्धको प्रकट करनेके लिए जो शब्दोंके अन्तमें चिह्न लगाए जाते हैं, उन्हें *विभक्ति* कहते हैं।

जैसे—राम, भ्रातृ, देव, मित्र—ये चार शब्द से इनका कुछ विशेष अर्थ नहीं बनता। किन्तु यदि प्रत्येकके अन्तमें विभक्ति लगाकर 'रामस्य भ्राता देवस्य मित्रम्।' यह वाक्य बनाया जाय तो अर्थ स्पष्ट हो जाता है। प्रत्येक शब्द के अन्त में जो स्य, म्, आदि चिह्न जोड़े गए हैं, ये विभक्तियां हैं।

७—कारक—संज्ञा और सर्वनामका वह रूप जिसके द्वारा किसी वाक्यमें उसका क्रियाके साथ संबन्ध प्रकट होता है, *कारक* कहलाता है।

'नृपः गच्छति।' (राजा जाता है।) में गमन क्रिया करने वाला राजा है, इसलिए 'गच्छति' का वह कर्तृ-कारक है।

जब यह चिह्न अलग-अलग शब्दके साथ रहता है, तो इसे विभक्ति कहते हैं, परन्तु जब किसी विभक्ति सहित शब्दका प्रयोग किसी वाक्यमें हो तो वह किसी न किसी कारकका रूप धारण कर लेता है।

८—पद (An inflected word)—जिस शब्दके अन्तमें विभक्ति जुड़ी हो, उसे पद कहते हैं और उस पदके अन्तिम वर्णको *पदान्त* कहते हैं।

९—संज्ञा (Noun)—किसी व्यक्ति, गुण या स्थान आदिका परिचय देनेके लिए जो शब्द प्रयुक्त होता है, उसे *संज्ञा* कहते हैं।

जैसे—राम विशेष व्यक्तिका नाम है. काशी विशेष नगरका नाम है, कृष्णता एक वर्ण (गुण) का नाम है।

१०—सर्वनाम (Pronoun)—संज्ञाके स्थानपर जिस शब्दका प्रयोग होता है, उसे *सर्वनाम* कहते हैं।

जैसे—मोहनः अगच्छत्, परं तस्य पुस्तकानि अत्र सन्ति। (मोहन चला गया किन्तु उसकी पुस्तकें यहां हैं।) इस वाक्यमें 'तस्य' यह पद मोहनके लिए प्रयुक्त हुआ है, अतः यह सर्वनाम है।

११—विशेषण (Adjective)—जिस शब्दसे किसी संज्ञाकी कोई विशेषता सूचित होती हो, उसे *विशेषण* कहते हैं।

जैसे—भीरुः नरः (डरपोक आदमी)। भीरु शब्द नरः के विशेष गुणोंको सूचित करता है।

१२—क्रिया (Verb)—जिस पदसे किसी व्यापारका होना वा करना पाया जाय, उसे *क्रिया* कहते हैं।

जैसे—हसति (हंसता है) से बोध होता है कि हंसनेका व्यापार हो रहा है।

१३—अव्यय (Indeclinable word) जिस शब्दका सदैव एक ही रूप हो, अर्थात् जिसके साथ किसी अवस्थामें भी कोई विभक्ति न लग सके, उसे *अव्यय* कहते हैं।

जैसे—सदा, शीघ्रम्, विना, सह।

१४—गुण—ए, ओ, अर्, अल्—इन्हें *गुण* कहते हैं।

१५—वृद्धि—ऐ, औ, आर्, आल्—इन्हें *वृद्धि* कहते हैं।

१६—उपधा—(A penultimate letter)—किसी शब्दके अन्तिम वर्णसे पहले वर्णको *उपधा* कहते हैं।

जैसे चिन्त् में त् (अंतिम) वर्ण से पूर्व वर्ण न् उपधा है।

१७—धातु (Verbal root) वह मूल शब्द जिससे कोई

क्रिया बनती है, *धातु* कहलाता है।

जैसे—चलति क्रिया का मूल 'चल्' धातु है।

१८—स्थान (The organ of utterance of a letter) जिन-जिन कण्ठ, जिह्वा-आदि विशेष स्थानोंसे अन्यान्य वर्ण बोले जाते हैं, उन्हें उन वर्णोंका *स्थान* कहते हैं।

जैसे—'अ' कण्ठ से, 'इ' तालु से, 'उ' ओष्ठ से बोले जाते हैं, अतः कण्ठ, तालु, ओष्ठ यथाक्रम अ, इ, उ, के स्थान हैं।

१९—प्रयत्न (Effort in uttering)—वर्णोंके उच्चारणके लिए जिह्वाका जो व्यापार होता है, उसे *प्रयत्न* कहते हैं।

२०—वर्ण (Letter)—कण्ठ, जिह्वा आदिके योगसे उत्पन्न एक अखंड ध्वनिको *वर्ण* कहते हैं।

जैसे—अ, क—आदि।

२१—आदेश (A substitute)—किसी वर्णके स्थानपर दूसरा वर्ण करना *आदेश* होता है।

जैसे—नदी+उदकम् में नदीके ई के स्थानमें य् होकर नद्य्+उदकम् बना है।

२२—आगम (Addition)—किसीके साथ किसी अन्य वर्णके योगको *आगम* कहते हैं।

जैसे—वृक्ष+छाया=वृक्षच्छाया। यहां च् किसीके स्थान पर नहीं हुआ, इसका योग हुआ है (मित्रवदागमः, शत्रुवदादेशः।)

२३—संप्रसारण—य् को इ, व् को उ और र् को ऋ का आदेश *सम्प्रसारण* कहलाता है।

जैसे—यज्+य+ते इज्यते। वच्+य+ते=उच्यते। ग्रह+य+ते गृह्यते। (यहां इ, उ, ऋ सम्प्रसारण हैं)

अनुशीलनी—३

परिभाषा किसे कहते हैं ? संधि, संयोग, धातु, समास, क्रिया, गुण, वृद्धि—इनके साधारण अर्थ और पारिभाषिक अर्थों में क्या क्या भेद है ?

प्रयत्न, स्थान, अव्यय—इनके लक्षण बताओ।

१—वर्णनिरूपण

वर्णका लक्षण परिभाषा-प्रकरणमें कहा गया है। वर्ण दो प्रकार के हैं—स्वर(Vowel) और व्यञ्जन (Consonant)

२४—स्वर वे वर्ण हैं जो *स्वयं उच्चरित* हो सकते हैं। अर्थात जिनके उच्चारणमें किसी और वर्णकी सहायता नहीं ली जाती।

२५—*व्यञ्जन* वे वर्ण हैं जो *स्वयं उच्चरित नहीं* हो सकते अर्थात् जिनके उच्चारणमें स्वरों की सहायता रहती है।

स्वरका अर्थ ही स्वतन्त्र ध्वनि है और व्यञ्जन (वि+अञ्ज्+अन) का मिलावट।

स्वर

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ए ऐ ओ औ

ये तेरह स्वर हैं।

इनमें अ इ उ ऋ ऌ—ये ह्रस्व (Short) स्वर हैं—अर्थात् इनके उच्चारणमें एक मात्रा समय लगता है।

आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ औ—ये दीर्घ (Long) स्वर हैं—अर्थात् इनके उच्चारणमें दो मात्रा समय लगता है। इनसे अतिरिक्त प्लुत स्वर भी होते हैं, पर उनका प्रयोग बहुत कम होता है। वे केवल दूरसे बुलानेमें ही प्रयुक्त होते हैं। जैसे—देवदत्त ३ आगच्छ। (देवदत्त ३ आओ)

(तीनों प्रकारके स्वरोंका निदर्शन कुक्कुड़की आवाज़ में मिलता है। जैसे-कु१ कू२ कूँ ३।

व्यञ्जन

क ख ग घ ङ　　च छ ज झ ञ　　ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न　　प फ ब भ म　　य र ल व
श ष स ह　　ये तेतीस व्यञ्जन हैं।

वास्तवमें व्यञ्जनोंका अपना रूप प्रत्येक वर्ण के नीचे तिरछी लकीर (हलन्त—्) लगाने से स्पष्ट होता है। ऊपर कहा गया है कि व्यञ्जनोंका उच्चारण स्वरोंकी सहायताके बिना नहीं हो सकता। इसलिए इन्हें स्वरोंके साथ लिखा गया है। (जब कोई व्यञ्जन किसी दूसरे व्यञ्जनसे संयुक्त हो या किसी पदके अन्तमें हो, तो उसका स्वतन्त्र उच्चारण भी होता है। जैसे-विद्वत्ता, गमनम्, इनमें द् त् म् का उच्चारण स्वतन्त्र हो रहा है।)

व्यञ्जनों का वर्गीकरण

इन व्यञ्जनोंके भिन्न भिन्न वर्ग (गण) बनाए गए हैं।

क से म तक पच्चीस व्यञ्जनोंके पाँच वर्ग (पाँच पाँच वर्णोंका एक एक वर्ग) बनाए गए हैं और प्रत्येक वर्गको अपने आदिम वर्णका नाम दिया गया है।

क ख ग घ ङ	...	...	कवर्ग
च छ ज झ ञ	...	...	चवर्ग
ट ठ ड ढ ण	...	...	टवर्ग
त थ द ध न	...	...	तवर्ग
प फ ब भ म	...	...	पवर्ग

इन पच्चीस वर्णोंको स्पर्श भी कहते हैं।

य र ल व　　अन्तःस्थ (Semi vowels) कहलाते हैं।

श ष स ह　　ऊष्मा (Sibilants) कहलाते हैं।

(वर्गीय वर्णोंका स्पर्श नाम इसलिए है कि इन्हें उच्चारण करते समय जिह्वाका स्पर्श कण्ठ आदि स्थानोंसे होता है। ऊष्मा का अर्थ है वाष्पवायु, श ष स ह के

उच्चारणमें वायु की प्रधानता रहती है, अतः ये ऊष्म वर्ण कहलाते हैं।)

वर्णों के उच्चारणस्थान

मुखके अंतर्गत जिन अवयवोंसे वर्णोंका उच्चारण होता है, वे पांच हैं—कण्ठ, तालु, मूर्धा, दाँत और ओष्ठ।

(कई लोग नासिकाको अलग अवयव मानते हैं। उनके विचारमें वर्ण-स्थान छः है।)

१—अ, आ, कवर्ग ह और विसर्ग ये कण्ठ हैं। बोले जाते हैं, अतः इन्हें कण्ठ्य (Gutterals) कहते हैं।

२—इ, ई, चवर्ग, य और श ये तालु से बोले जाते हैं, अतः इन्हें तालव्य (Palatals) कहते हैं।

३—ऋ, ॠ, टवर्ग, र और ष ये मूर्धा (दांतोंके ऊपरी भाग) से बोले जाते हैं, अतः इन्हें मूर्धन्य (Cerebrals) कहते हैं।

४—लृ, तवर्ग, ल और स ये दांतांसे बोले जाते हैं, अतः इन्हें दन्त्य (Dental) कहते हैं।

५—उ, ऊ और पवर्ग ये ओठों से बोले जाते हैं, अतः इन्हें औष्ठ्य (Labials) कहते हैं।

(ङ, ञ, ण, न, म—ये पाँचों वर्गोंके पाँच अन्तिम वर्ण अपने अपने वर्गीय स्थानसे नासिकाकी सहायतासे बोले जाते हैं, अतः इन्हें अनुनासिक (Nasals) भी कहते हैं।)

ए, ऐ, ओ, औ—ये सन्ध्यक्षर (Dipthong) हैं—अर्थात् दो दो स्वरोंके मेलसे बने हैं (अ+इ=ए, अ+ए=ऐ, अ+उ=ओ, अ+ओ=औ) अतः इनके उच्चारण स्थान भी अपने मूल वर्णोंके अनुसार ही हैं।

ए, ऐ का स्थान कण्ठ-तालु है और ओ, औ का कण्ठ-ओष्ठ है।

व दन्त और ओष्ठ दोनों से बोला जाता है, अतः इसे दन्तौष्ठ्य कहते हैं।

उच्चारण-स्थानकोष्ठक

उच्चारणस्थान	स्पर्श	अन्तःस्थ	ऊष्म	स्वर
कण्ठ	क ख ग घ ङ		ह	अ, आ, विसर्ग
तालु	च छ ज झ ञ	य	श	इ, ई
मूर्धा	ट ठ ड ढ ण	र	ष	ऋ, ॠ
दन्त	त थ द ध न	ल	स	लृ
ओष्ठ	प फ ब भ म	व) दन्तौष्ठ्य		उ, ऊ
कण्ठ-तालु				ए, ऐ
कण्ठौष्ठ				ओ, औ
नासिका	ङ, ञ, न, म, अनुस्वार			

वर्णोंके उच्चारण-प्रयत्न

वर्णोंके उच्चारणमें होनेवाली क्रिया प्रयत्न है।

वह क्रिया दो प्रकारकी होती है—आभ्यन्तर और बाह्य।

२६—आभ्यन्तर प्रयत्न—(क) ध्वनि उत्पन्न होनेके पहले वागिन्द्रिय (जिह्वा) की क्रियाको *आभ्यन्तर* प्रयत्न कहते हैं।

(ख) बाह्यप्रयत्न—ध्वनिके अंतकी क्रियाको *बाह्यप्रयत्न* कहते हैं।

२७—आभ्यन्तर प्रयत्नके अनुसार वर्णोंके चार भेद हैं:—

विवृत, स्पृष्ट, ईषत्विवृत, ईषत्स्पृष्ट।

२८—विवृत—जिनके उच्चारणमें वागिन्द्रिय खुली रहती है, वे *विवृत* वर्ण हैं। जैसे—स्वर।

२९—स्पृष्ट—जिनके उच्चारणमें वागिन्द्रियका द्वार बंद रहता है, वे स्पृष्ट वर्ण हैं। जैसे—स्पर्श (क से म तक) वर्ण।

३०—ईषत्विवृत—जिनके उच्चारणमें वागिन्द्रिय कुछ खुली रहती है, वे ईषत्स्पृष्ट हैं। जैसे—अन्तःस्थ (य र ल व)

३१—ईषत्स्पृष्ट—जिनके उच्चारणमें वागिन्द्रियका द्वार कुछ बंद रहता है, वे ईषत्स्पृष्ट हैं। जैसे—ऊष्म (श ष स ह)

वाह्य प्रयत्नके अनुसार वर्णोंके दो भेद हैं—अघोष और सघोष।

अघोष—अघोष वर्णोंके उच्चारण में केवल श्वासका उपयोग होता है। वर्णोंके पहले और दूसरे वर्ण (क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ) और श ष स—ये अघोष वर्ण हैं।

सघोष—सघोष वर्णोंके उच्चारणमें केवल घोष (नाद) का उपयोग होता है। वर्णोंके तीसरे, चौथे और पाँचवें वर्ण और सब स्वर सघोष वर्ण हैं।

(इनसे अतिरिक्त वाह्य प्रयत्नोंके अल्पप्राण, महाप्राण—आदि अन्य भेद भी हैं, परन्तु उनका व्याकरण में अधिक उपयोग न होनेसे उन्हें छोड़ दिया है।)

स्थान-प्रयत्न-कोष्ठक

प्रयत्न	स्थना								प्रयत्न
आभ्यन्तर	कंठ	तालु	मूर्धा	दन्त	ओष्ठ	दन्तोष्ठ	कंठ-तालु	कंठौष्ठ	बाह्य
स्पृष्ट	क ख	च छ	ट ठ	त थ	प फ				अघोष
	ग घ ङ	ज झ ञ	ड ढ ण	द ध न	ब भ म				सघोष
ईषत्स्पृष्ट		य	र	ल		व			
ईषद्-विवृत		श	ष	स					अघोष
	ह								
विवृत	अ आ	इ ई	ऋ ॠ	ऌ	उ ऊ		ए ऐ	ओ औ	सघोष

(इन स्वर और व्यञ्जनोंकी समग्र वर्णमालाको देवनागरी या नागरी कहते हैं। आर्योंका वर्ण यहांके मूल-निवासियोंकी अपेक्षा श्वेत था। इस लिए वे देव (दिव् धातुसे) कहलाते थे और जहां पर वे रहने लगे, वह स्थान देव नगर कहलाता था। इसलिए उनकी लिपि देवनागरी कहलाने लगी। कई लोग इसे आर्य-लिपि या ब्राह्मीलिपि भी कहते हैं। देवनागरी वर्णमाला प्राकृतिक नियमोंके अनुसार सर्वोत्तम वर्णमाला है। इसका उच्चारण और लेखन एक ही ढंगसे होता है, अर्थात् पढ़ने और लिखनेमें कोई अन्तर नहीं रहता। इसके साथ उर्दू और इंगलिश वर्णमालाका

मुकाबला करनेसे इस बातकी पुष्टि होगी।

वर्ण, अक्षर, लिपि—ये शब्द अन्वर्थ हैं। वर्ण का अर्थ है—रंग। अक्षरों को रंगोंमें लिखे जानेसे ये वर्ण कहलाते हैं। अक्षर (न क्षरति), जिसका अवसान नहीं होता—अर्थात् जो शिला आदिमें खुदे होनेसे चिरस्थायी हैं। लिपि—लिप् (लीपना) धातुसे बना है। पूर्व समयमें वर्णोंको रङ्गोंमें लीपा (भरा) जाता था।

अनुशीलनी—४

वर्ण किसे कहते हैं ? वर्ण के प्रकार बताओ।

स्वरवर्णों और व्यञ्जनवर्णोंमें क्या भेद है ? ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत स्वर बताओ। प्लुत स्वरोंका प्रयोग कहां होता है ?

व्यञ्जन कितने हैं ? इनके कितने वर्ग हैं ? उनके नाम बताओ। स्पर्श, अंतःस्थ और ऊष्म व्यञ्जन कौन कौन हैं ? इन व्यञ्जनोंके ये नाम क्यों हैं ? वर्णोंके उच्चारण-स्थान कुल कितने हैं ? कण्ठ्य, तालव्य और मूर्धन्य वर्ण बताओ। ङ, ञ, ण, न, म को अनुनासिक व्यञ्जन क्यों कहते हैं ?

सन्ध्यक्षर वर्ण कौन होते हैं ? इन्हें सन्ध्यक्षर क्यों कहते हैं ?

प्रयत्न किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार के हैं ? आभ्यन्तर प्रयत्न किसे कहते हैं ? उनके नाम बताओ। विवृत और ईषद्विवृत किन वर्णोंके प्रयत्न हैं ?

बाह्य प्रयत्न किसे कहते हैं ? घोष और अघोषका क्या अर्थ है ? अघोष वर्ण कौन हैं ? संस्कृत भाषाकी वर्णलिपिको देवनागरी क्यों कहते हैं ?

सन्धि-प्रकरण

सन्धि का अर्थ है मेल। व्याकरण-प्रक्रियामें अक्षरोंके मेलको सन्धि कहते हैं। मेल तभी हो सकता है जब बीचमें कोई रुकावट न हो, इस लिए अक्षरोंमें मेल (सन्धि) तभी हो सकता है, जब मिलनेवाले अक्षरों के बीचमें कोई अन्य अक्षर न हो। जब दो अक्षर मिल जाते हैं तो उन के मेलसे कभी कभी कोई विकार हो जाता है। जब विकार होता है तब हम कहते हैं कि इन अक्षरोंमें सन्धि हो गई है। जैसे—राम+अस=

रामास्=रामाः। यहां पर अ और अ के मेल से आ हो गया है।

३२—व्यवधानरहित दो अक्षरोंके मेलसे जो *विकार* हो जाता है, उसे *सन्धि* कहते हैं। जैसे—हरि+ओस्=हर् य् +ओस=हर्योः।

विकार कभी दोनों अक्षरों में होता है, कभी एक में होता है और कभी दोनोंमें ही नहीं होता, एक नया और अक्षर जोड़ा जाता है। जैसे—हरि+इ=हरी। (इसमें इ+इ दोनों के स्थान में ई हुआ है।) भानु+ओस्=भान्वोः। (यहाँ केवल उ के स्थानमें व् हुआ है।) वृक्ष+छाया=वृक्षच्छाया। (यहाँ च् किसीके स्थान पर नहीं हुआ, नया जोड़ा गया है।)

सन्धि कहीं कहीं तो अवश्य करनी पड़ती है और कहीं कहीं पर अपनी इच्छा-पर निर्भर होती है।

संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः।

नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते॥

संहिता (सन्धि) एकपदमें, धातु और उपसर्गके योगमें और समासमें अवश्य करनी होती है परन्तु वाक्यमें वह वक्ताकी इच्छा पर निर्भर रहती है। जैसे—

राम+अस्=रामाः, हरि+ओस्=हर्योः, इत्यादि पदोंके अन्दर सन्धि का होना आवश्यक है, क्योंकि सन्धि होनेके बिना पूरे शब्द बन ही नहीं सकते। इसी प्रकार अगच्छत् (गया) के पूर्व यदि प्र उपसर्ग जोड़ें तो भी प्र और अगच्छत् में सन्धि होना आवश्यक है क्योंकि प्रागच्छत् यह पूर्ण शब्द सन्धिके बिना बन नहीं सकता। इसी तरह धन+औदार्यम् (धन की उदारता) इन दो पदों का समास तभी हो सकता है, जब उनमें सन्धि हो कर धनौदार्यम् बन जाय। परन्तु वाक्य में सन्धि करना आवश्यक नहीं। जैसे—रामस्य आगमनम् प्रजानाम् आह्लाद-जनकम् (रामका आना प्रजाजनोंकी प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला है।) इसमें प्रत्येक पद अलग अलग है। यदि हम चाहें तो इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं 'रामस्यागमनं प्रजानामाह्लादजनकम्।' दोनों तरह लिखना या पढ़ना शुद्ध है।

३२—परः सन्निकर्षः संहिता। १-४-१०९।

तथापि वाक्यमें भी यथासम्भव सन्धि करनी चाहिए।

वर्ण दो प्रकार के हैं—स्वर और व्यञ्जन। इसलिए वास्तवमें सन्धिके भी दो भेद हैं—स्वर-सन्धि (जो स्वरोंके मेलसे हो) और व्यञ्जन-सन्धि (जो व्यञ्जनोंके मेलसे हो) परन्तु कई स्थानोंमें विसर्ग (:) को भी विकार होता है। जैसे—रामास्=रामाः, हरि+स्=हरिः। इसलिए सन्धिके तीन भेद हैं—

१—स्वर-सन्धिः (अच्-सन्धिः)

२—व्यञ्जन-सन्धिः (हल्-सन्धिः)

और ३—विसर्ग-सन्धिः

स्वर-सन्धि प्रकरण

३३—जब स्वरके परे स्वर हो तो उनके मेलसे जो किसी एक वा दोनों स्वरोंमें विकार होता है, उसे स्वर-सन्धि कहते हैं।

स्वर-सन्धिके ये प्रकार हैं:—

दीर्घसन्धि, गुणसन्धि, वृद्धिसन्धि, यण् सन्धि, अयादिसन्धि और पूर्व-रूपसन्धि।

३४—दीर्घसन्धि—(क) *अ* वा *आ* से परे यदि *अ* वा *आ* हो तो दोनोंके स्थान पर *आ* हो जाता है।

जैसे—राम + अस् = रामास्, राम + आत् = रामात्, दैत्य + अरिः = दैत्यारिः (राक्षसों का शत्रु), शश + अङ्कः = शशाङ्कः (चन्द्र), जल+आनयनम्=जलानयनम् (जलका लाना), राम+आगमनम्=रामागमनम्, दया+अर्णवः=दयार्णवः (दया का समुद्र), विद्या+अर्थी=विद्यार्थी, गदा+आघातः=गदाघातः (गदा का प्रहार), विद्या+आलयः=विद्यालयः।

३४—अकः सवर्णे दीर्घः।६-१-१०१।

(ख) इ वा ई से परे यदि इ वा ई हो तो दोनोंके स्थानपर ई हो जाता है।

जैसे—मुनि+इन्द्रः=मुनीन्द्रः (महामुनि), कवि+इच्छा=कवीच्छा, क्षिति+ईश्वरः=क्षितीश्वरः (पृथ्वीपति), प्रति+ईक्षा=प्रतीक्षा (आसरा, इन्तजार), मही+इन्द्रः=महीन्द्रः (पृथ्वीपति), लक्ष्मी+ईशः=लक्ष्मीशः (लक्ष्मीपति, विष्णु),

(ग) उ वा ऊ से परे यदि उ वा ऊ हो तो दोनोंके स्थानपर ऊ हो जाता है।

जैसे—विधु+उदयः=विधूदयः (चन्द्रोदय), प्रभु+उक्तिः = प्रभूक्तिः (स्वामीका कहना), तरु+उर्ध्वम् = तरूर्ध्वम् (वृक्षके ऊपर), सिन्धु+ऊर्मिः= सिन्धूर्मिः (समुद्र की लहर), वधू=उत्सवः=वधूत्सवः, श्वश्रू+उपदेशः=श्वश्रूपदेशः (सास का उपदेश), भू+ऊर्ध्वम्=भूर्ध्वम् (पृथ्वीके ऊपर)।

(घ) ऋ वा ॠ से परे यदि ऋ वा ॠ हो तो दोनोंके स्थानपर ॠ हो जाता है।

जैसे—पितृ+ऋणम्=पित‍ॄणम् (पिताका ऋण), भ्रातृ+ऋद्धिः=भ्रातॄद्धिः (भाई की बढ़ती)।

(ॠकारान्त और ॠकारादि शब्द नहीं मिलते।)

गुणसन्धि—पीछे बताया गया है कि ए, ओ, अर्, अल् गुण हैं।

३५ (क) अ वा आ से परे यदि इ वा ई हो तो दोनोंके स्थान पर ए हो जाता है।

जैसे—राम+इन=रामेण, (रामसे), लता+इ=लते, धन+इन्द्रः=धनेन्द्रः, लता+इव=लतेव। (लताकी तरह), गण+ईशः=गणेशः (सेनापति), रमा+ईशः=रमेशः (लक्ष्मीपति, विष्णु)।

(ख) अ वा आ से परे यदि उ वा ऊ हो तो दोनोंके स्थान

३५—आद्गुणः। ६-१ ८७।

पर ओ हो जाता है।

जैसे—नील+उत्पलम्=नीलोत्पलम् (नीला कमल), सूर्य+उदय:=सूर्योदय: (सूर्य का उदय), एक+ऊनम्=एकोनम् (एक कम), गृह+ऊर्ध्वम्=गृहोर्ध्वम् , गङ्गा+उदकम्=गङ्गोदकम् (गङ्गाजल), महा+उपदेश=महोपदेश:, यमुना+ ऊर्मि:=यमुनोर्मि: (यमुना की लहर)।

(ग) *अ* वा *आ* से परे यदि ऋ हो तो दोनोंके स्थानपर *अर्* हो जाता है।

देव+ऋषि:=देवर्षि:,हिम+ऋतु:=हिमर्तु: (सरदीका मौसम), महा+ऋषि:=महर्षि:।

(घ) *अ* वा *आ* से परे यदि ऌ हो तो दोनोंके स्थानपर *अल्* हो जाता है।

जैसे—तव+ऌकार:=तवल्कार: (तेरा ऌकार)।

वृद्धिसन्धि—पीछे बताया गया है कि ऐ, औ, आर् वृद्धि हैं।

३६ (क) *अ* वा *आ* से परे ए वा ऐ हो तो दोनों के स्थान पर ऐ हो जाता है।

जैसे—एक+एक:=एकैक: (एकएक), अद्य+एव=अद्यैव (आजही), सदा+एव= सदैव, राम+ऐस्=,रामैस्, तव+ऐश्वर्यम्=तवैश्वर्यम् , तथा+एतत्=तथैतत्।

(ख) *अ* वा *आ* से परे *ओ* वा *औ* हो तो दोनोंके स्थान पर *औ* हो जाता है।

जैसे—नगर+ओक:=नगरौक:, (नगरका घर), जल+ओघ:=जलौघ: (पानीका प्रवाह), महा+ओषधि:=महौषधि:, राम+औ=रामौ, तव=औदार्यम्= तवौदार्यम् (तुम्हारी उदारता), तव+औत्सुक्यम्=तवौत्सुक्यम् (तेरी उत्सुकता)।

तृतीयातत्पुरुषसमासमें अकारान्त पदसे परे यदि ऋत हो तो अ और ऋ के स्थानपर आर् होता है। जैसे—सुखेन-ऋत:=सुख+ऋत:=सुखार्त:(सुखयुक्त),

---

३६—वृद्धिरेचि। ६-१-८८।

दुःखार्तः, शीत+ऋतः=शीतार्त्तः ।

३७—यण् सन्धि—य्, व्, र्, ल् यण् कहलाते हैं।

(क) इ वा ई से परे यदि कोई असमान (इ-ई भिन्न) स्वर हो तो इ वा ई के स्थान पर य् हो जाता है।

जैसे—हरि+ओः=हर्योः, सखि+आ=सख्या, यदि+अपि=यद्यपि, नदी+अम्बु=नद्यम्बु (नदीका जल), प्रति+एकम्=प्रत्येकम् ।

(ख) उ वा ऊ से परे यदि कोई असमान (उ ऊ-भिन्न) स्वर हो तो उ वा ऊ के स्थान पर व् हो जाता है।

जैसे—भानु+ओः=भान्वोः, धेनु+आम्=धेन्वाम्, प्रभु+ आज्ञा=प्रभ्वाज्ञा, वधु+आ=वध्वा, सरयू+अम्बु=सरय्वम्बु (सरयूका जल), चमू+आगमनम्=चम्वागमनम् (सेनाका आना) ।

(ग) ऋ से परे यदि कोई असमान (ऋ-भिन्न) स्वर हो तो ऋ के स्थान पर र् और यदि—

(घ) ऌ से परे ऌ भिन्न स्वर हो तो ऌ को ल् हो जाता है।

जैसे—पितृ+ए=पित्रे, मातृ+ओः=मात्रोः, भ्रातृ+अनुज्ञा=भ्रात्रनुज्ञा (भाईकी इजाजत), मातृ+इच्छा=मात्रिच्छा । ऌ+आकृतिः=लाकृतिः (ऌकी शकल) ।

३८—अयादि सन्धि—अयादि=अय्, आय्, अव्, आव् ।

(क) ए से परे यदि कोई स्वर हो तो ए के स्थानपर *अय्* हो जाता है।

जैसे—हरे+ए=हरये, ने+अनम्=नयनम्, ने+अति=नयति (ले जाता है) ।

(ख) ऐ से परे कोई स्वर हो तो ऐ के स्थानपर *आय्* हो जाता है।

३७—इकोयणचि । ६-१-७७ । ३८—एचोऽयवायावः । ६—१—७८ ।

नै+अक:=नायक:, रै+ए=राये (धन के लिए)

(ग) *ओ* से परे यदि कोई स्वर हो तो *ओ* को *अव्* हो जाता है।

जैसे—भानो+ए=मानवे, भो+अनम्=भवनम्, भो+अति=भवति, ।

(घ) *औ* से परे यदि कोई स्वर हो तो *औ* को *आव्* हो जाता है।

जैसे—गौ+औ=गावौ, नौ+ए=नावे, पौ+अक:=पावक: (आग) ।

ऊपर दिए हुए उदाहरणोंमें देखा होगा कि आय् . आय् , अव् या आव् पदके अन्दर हुए हैं, अर्थात् ए, ऐ, ओ, औ किसी पद (विभक्तिसहित शब्द) के अन्तमें नहीं हैं।

जैसे—हरये, गावो:, नायक: आदिमें विभक्त अन्तमें है और अय् , अव् आदि शब्दोंके अन्दर हुए हैं। अत: अपदान्त ए, ऐ आदि को अय् आय् आदि अवश्य होते हैं।

पदान्त में *अय्*, *आय्*, *अव्*, *आव्*, के *य्* या *व्* का विकल्पसे लोप हो जाता है ।

जैसे—हरे+एहि=हरयेहि वा हर एहि,(हरे+एहि=हर्+अय्+एहि=हरएहि), प्रभो आगच्छ = प्रभवाच्छ वा प्रभ आगच्छ, श्रियै+आकांक्षा=श्रियायाकांक्षा वा श्रिया आकांक्षा (धनकी इच्छा), धेनौ+आगतायाम् = धेनावागतायाम् वा धेना आगतायाम् ।

अपवाद—(पूर्वरूप)—पदान्त ए या *ओ* से परे यदि *अ* हो तो ए वा ओ को अय् वा अव् नहीं होता, वहां पर अ ए वा *ओ* का रूप हो जाता है, अर्थात् उन्हीं में समा जाता है ।

जैसे—हरे+अत्र=हरेऽत्र, प्रभो+अत्र=प्रभोऽत्र, विष्णो+अव=विष्णोऽव ।

(प्रकृतिभाव, प्रगृह्य)

प्रगृह्य या प्रकृतिभावका अर्थ है वही रूप रहना, कोई परिवर्तन न होना। कई स्थलोंमें ऐसा होता है कि उपर्युक्त सन्धि नियमोंके लागू हो सकनेपर भी उनमें सन्धि नहीं होती ।

३९—(क) द्विवचनान्त ई, ऊ वा ए की पर वर्णके साथ मिलकर, कोई सन्धि नहीं होती।

जैसे—अमी+अश्वाः=अमी अश्वाः, अमू+अजौ=अमू अजौ।

(ग) दूरसे बुलानेमें जो प्लुत स्वरका प्रयोग किया जाता है, उसकी भी किसीके साथ सन्धि नहीं होती।

जैसे—देव ! आगच्छ।

अनुशीलनी ५

१—यण्-सन्धि और गुण-सन्धि के नियम लिखो। २—'वृद्धि' अक्षर कौन कौन है ? ३—इ से परे कौन वर्ण हो, तो इ हो जाता है ? उदाहरण बताओ ? ४—पदान्त और अपदान्त किसे कहते हैं ? उदाहरण बताओ। ५—पूर्वरूप सन्धि के तीन उदाहरण दो। ६—प्रकृतिभाव किसे कहते हैं ? सन्धि कहां कहां नहीं होती ?

७—इन में सन्धि करो —

तथा+एव, रुद्र+ओजसा, च+इदम्, प्रभो+अत्र, वधू+उद्यमः, मत+ऐक्यम्, महा+आशयः, महा+ऋषिः, नील+उत्पलम्, नदी+अम्बु, सखे+आगच्छ, पितृ+ईहा, प्रभु+आज्ञा, आयु+ओः शे+अनम् विनै+अकः, सखे+अयाहि, गुरो+आगतं, नर+इन्द्रः, मम+ऋणम् , दुःख+ऋतः, मधु+अस्ति, मुनी+इमौ, राम+एहि, अमी+उपायाः प्रभु+उक्तवन्तौ।

८—इनमें सन्धिच्छेद करो—

वायवायाहि, हरेऽत्र, रवावित्ते, अन्वयः, भावुकः, पद्मास्ति, यद्यपि, कवीन्द्रः, सख्यौ, साधूआगतौ, महात्मा, विधूदयः, तथापि, तवोपालम्भः, विवाहोत्सवः, भवाब्धिः, धनैषणा, स्वागतम्, देव्यागमम् , शुद्धोपधम, सुतोत्पत्तिः, प्रत्यूहः, जलौघः, देवर्षिः, पूर्णेन्दुः, हरेऽवेहि, जायाक्रम् , राजाज्ञा, नित्यैव, इत्यादिः, हितोपदेशः। ९—इनको शुद्धकरो—गङ्गाघः, तवनुमतिः, नवा, यद्यापि, गव्योः, हयैतो, अम्बश्वौ।

---

३९ (क) ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्-१-१-११। (ख) अदसो मात्—१-१-१२।

व्यञ्जनसन्धि

४०—व्यञ्जन (हल्) से परे स्वर वा व्यञ्जन होनेमें विकार होकर पूर्व और पर वर्ण मिल जाते हैं, उस मेलको व्यञ्जन सन्धि कहते हैं।

जैसे—अप्+जः=अब्जः। दूरात्+आगतः=दूरादागतः। इनमें पूर्व वर्ण प् को ब् और त् को द् हुआ है।

कभी कभी व्यञ्जन सन्धिमें परस्थित व्यञ्जनको भी विकार होता है। जैसे—तद्+हितम्=तद्धितम्। यज्+नः=यज्ञः। कभी कभी न पूर्व वर्णमें विकार होता है और न पर वर्ण में, सन्धि होने पर एक नया और वर्ण दोनोंके मध्यमें आजाता है। जैसे—वृक्ष+छाया=वृक्षच्छाया। रक्षन्+अस्ति=रक्षन्नस्ति। इनमें च् और न् किसीके स्थान पर नहीं हुए।

४१—स् वा तवर्ग के पहले वा पीछे श् वा चवर्ग हो तो स् को श् और तवर्ग को क्रमसे चवर्ग (त् को च्, श् को छ्, द् को ज् इत्यादि) हो जाता है।

जैसे—अग्निस्+शाम्यति=अग्निश्शाम्यति। चन्द्रश्शोभते। तत्+चित्रम्=तच्चित्रम्। विपद्+जालम्=विपज्जालम्। तत्+छत्रम्=तच्छत्रम्। तान्+जयति=ताञ्जयति। याच्+ना=याच्ञा। यज्+नः=यज्ञः। इनमें तवर्ग परवर्ण है।

४२—स् वा तवर्गके पहले वा पीछे ष् वा टवर्ग हो तो स् को ष् और तवर्ग को क्रमसे टवर्ग हो जाता है।

जैसे—पाठः+षष्ठः=पाठष्षष्ठः। देवष्टीकते। नृपष्टीकते। तत्+टीका=तट्टीका। तद्+डमरुः=तड्डमरुः। उद्+डयते=उड्डयते। इष्+तः=इष्टः। षष्+थः=षष्ठः। आकृष्+तः=आकृष्टः। (इनमें तवर्ग परवर्ण है)।

४१—स्तोः श्चुना श्चुः। ८-४-४०। ४२—ष्टुना ष्टुः। ८-४-४१।

४३—वर्गोंके पहले चार वर्णोंमें से किसी एकके परे यदि श् हो तो श् को छ् हो जाता है।

जैसे—जगत्+शत्रु = जगच्+शत्रुः=जगच्छत्रुः। तच्छ्रुत्वा। महच्छत्रम्

४४—*तवर्ग* के परे यदि ल् हो तो *तवर्ग* को ल् हो जाता है।

जैसे—तद्+लाभः=तल्लाभः। तद्+लुनाति=तल्लुनाति।

(न् को जो ल् होता है वह सानुनासिक होता है, अर्थात् उससे पूर्व स्वर पर अर्धानुस्वार लगा दिया जाता है)। जैसे-भवान्+लिखति=भवाँल्लिखति। महान्+लोकः=महाँल्लोकः।

४५—(क) पदान्त क्, ट्, त्, प् से परे यदि अनुनासिक (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्,) से भिन्न *सघोष* (तृतीय और चतुर्थ वर्गीय वर्ण, अन्तःस्थ, ह् और स्वर) वर्ण हो तो उसे अपने वर्णका *तृतीय वर्ण* हो जाता है।

जैसे—(क्=ग्) वाक्+उत्तमा=वागुत्तमा। प्राक्+एव=प्रागेव। दिक्+गजः=दिग्गजः। वाक्+दत्ता=वाग्दत्ता। (ट्=ड्) सम्राट्+इच्छति= सम्राडिच्छति। द्विट्+आयाति=द्विडायाति। मधुलिट्+गुञ्जति=मधुलिड्= गुञ्जति। परिव्राट्+हसति=परिव्राड्हसति। (द्=त्) गृहात्+आनयति= गृहादानयति। जगत्+ईशः=जगदीशः। महत्+धनुः=महद्धनुः। भवत्+दर्शनम्= भवद्दर्शनम्। (प्=ब्) अप्+आनयम्=अबानयनम्। ककुप्+ईक्षणम्= ककुबीक्षणम्। अप्+जः=अब्जः। अप्+हरणम्=अब्हरणम्।

(ख) भ-आदि (भ्याम्, भिस्, भ्यस्) विभक्तियोंके पूर्व अंग को भी *पद* माना गया है।

जैसे—वाक्+भ्याम्=वाग्भ्याम्। मधुलिट्+भिः=मधुलिड्भिः। महत्+

४३-शश्छोऽटि। ८-४-६३। ४४—तोर्लि। ८-४-६०। ४५-(क) झलां जशोऽन्ते। ८-२-३९॥

भ्य:=महद्भ्य: । ककुभ्+भ्याम्=ककुब्भ्याम् ।

४६—पदान्त च् को अनुनासिक-भिन्न सघोष वर्ण परे रहते ग् और अघोष वर्ण परे रहते क् हो जाता है ।

(१) जैसे—वाच्+अर्थ:=वागर्थ: । त्वच्+इन्द्रियम्=त्वगिन्द्रियम् । वाच्+विवाद:=वाग्विवाद: । त्वच्+रोग:=त्वग्रोग: । वाक्+भ्याम्=वाग्भ्याम् ।

(२) वाच्+कृतम्=वाक्कृतम् । प्राच्+कृतम्=प्राक्कृतम् । वाच्+सु=वाक्+सु=वाक्षु ।

अपवाद—अच्+अन्त:=अजन्त: । अच्+हलौ=अज्हलौ ।

४७—पदान्त ज् को सघोष वर्ण परे रहते ग् और कहीं कहीं ड् और अघोष वर्ण परे रहते क् और कहीं कहीं ट् हो जाता है ।

जैसे—(१) (ज्=ग्) ऋत्विज्+आनयनम्=ऋत्विगानयनम् । रुज्+वर्धनम्=रुग्वर्धनम् । वणिज्+लाभ:=वणिग्लाभ: । ऋत्विज्+भ्याम्=ऋत्विग्भ्याम् । (ज्=ड्) सम्राज्+आज्ञा=सम्राडाज्ञा । देवराज्+उक्ति:=देवराडुक्ति: विश्वसृज्+भक्ति:=विश्वसृड्भक्ति: । परिव्राज्+भ्य:=परिव्राड्भ्य: ।

(२) (ज्=क्) स्रज्+पतनम्=स्रक्पतनम् । असृज्+स्राव:=असृक्स्राव: । (ज्=ट्)परिव्राज्+प्रणाम:=परिव्राट्प्रणाम: । विश्वसृज्+सृष्टि:=विश्वसृट्सृष्टि: ।

३—अवसानमें क्, ट्, त्, प् को ग्, ड्, द्, ब् क्रमसे विकल्पसे होते हैं । जहाँ ग्, ड्, द्, ब् नहीं होते, वहाँ क्, ट्, त् और प् ही रहते हैं ।

(च् को क् वा ग् और कहीं कहीं ट् ड् होते हैं ।) जैसे— मरुत्—मरुद् । ककुप्—ककुप्—ब् । प्राक्—प्राक्—ग् । विश्वसृज्—विश्वसृट्—ड् ।

४६—(१) (चोः कुः । ८-२-३० । झलां जशोऽन्ते) ।
(३) वावसाने । ८-४-५६ ॥

४८—किसी वर्गीय दूसरे, *तीसरे वा चौथे* (ख् ग् घ्, छ् ज् झ्, ठ् ड् ढ्, थ् द् ध्, फ् ब् भ्) वर्णसे परे यदि *अघोष* (वर्गीय दूसरे, तीसरे वर्ण, श् ष् स्) वर्ण हो तो वर्गीय वर्ण को उसी वर्गका *पहला* वर्ण होता है। जैसे—भेद्+ता=भेत्ता। अग्निमथ् + सु=अग्निमत्सु। ककुभ्+सु=ककुप्सु। समिध्+पतनम्=समित्पतनम्। सुहृद्+समीपम्=सुहृत्समीपम्।

४९—(क)—किसी वर्गीय *चतुर्थ* वर्णसे परे यदि *त्* वा *थ्* हो तो *त्* वा *थ्* को *ध्* हो जाता है। जैसे—लभ्+तः=लभ् + धः। क्रुध्+तः=क्रुध् + धः। रुन्ध्+थः=रुन्ध् + धः।

(ख) किसी वर्गीय *चौथे वर्णसे* परे भी यदि कोई वर्गीय *चौथा वर्ण* हो तो पूर्व *चौथे वर्णको* अपने वर्गका *तीसरा वर्ण* हो जाता है। जैसे—लभ् + धः=लब्धः। क्रुध् + धः=क्रुद्धः। रुन्ध् + धः=रुन्द्धः।

५०—अनुनासिक-भिन्न किसी वर्गीय वर्णसे परे यदि ह हो, तो ह को पूर्व वर्णके वर्गका *चौथा* वर्ण विकल्पसे हो जाता है। (अर्थात् कवर्गसे परे ह् को घ्, चवर्गसे परे ह् को झ्, टवर्गसे ह् को ढ्, तवर्ग से परे ह् को ध् और पवर्ग से परे ह् को भ् होता है।) जैसे—वाक्+हरिः=वाग् हरिः-वाग्घरिः। सम्राट+हतः=सम्राड् हतः-समाड्ढतः। उद्+हतः=उद्हतः-उद्धतः। अप्+हरणम्=अब् हरणम्-अब्भरणम्।

५१—(क) क्, च्, ट्, प् से परे यदि कोई *अनुनासिक* वर्ण (ङ ञ् ण् न् म्) हो तो पूर्व वर्णको अपने वर्गका *पंचवाँ* वर्ण

४८—खरि च। ८-४-५५। ४९—(तथस्तथोर्धोऽधः। ८-२-४०। झलाँ जश् झशि। ८-४-५२)। ५०—झयो होऽन्यतरस्याम्। ८-४-६२।

हो जाता है। (अर्थात् क् को ङ्, च् को ञ्, ट् को ण्, त् को न् और प् को म् होता है।) जहाँ पाँचवाँ वर्ण नहीं होता वहाँ तीसरा वर्ण हो जाता है। जैसे—प्राक्+नमस्कार:=प्राङ्नमस्कार:-प्राग्नमस्कार:। अच्+नास्ति=अञ्नास्ति-अज्नास्ति। मधुलिट्+मत्त:=मधुलिण्मत्त:-मधुलिड्-मत्त:। भवत्+मृत्यु::=भवन्मृत्यु:-भवद्मृत्यु:। अप्+मान:=अम्मान:-अब्मान:। (अपवाद) यदि परे मय वा मात्र हो तो केवल पांचवाँ वर्ण ही होता है, तीसरा नहीं होता। जैसे—चित्+मात्रम्=चिन्मात्रम्। अप्+मयम्=अम्मयम्। जगत्+मात्रम्=जगन्मात्रम्।

५२—उपसर्ग के परे यदि स्था वा स्तम्भ् धातु का स् हो तो उस स् का लोप हो जाता है। जैसे—उद्+स्थानम्+उद्+थानम्=उत्थानम्। उद्+स्तम्भनम्=उद्+तम्भनम्=उत्तम्भनम्।

५३—(क) पदान्त न् से परे यदि च् वा छ् हो तो न् को अनुस्वार (वा अर्धानुस्वार) और श्, यदि परे ट् वा ठ् हो तो न् को अनुस्वार (वा अर्धानुस्वार) और ष् और यदि त् वा थ् हो तो न् को अनुस्वार (वा अर्धानुस्वार) और स् हो जाता है। जैसे—तान्+चौरान्=तांश्चौरान्-ताँश्चौरान्। हतान्+छागान्=हतांश्छागान्-हताँश्छागान्। महान्+टंकार: महांष्टंकार:-महाँष्टंकार:। एतान्+ठक्कुरान्=एतांष्ठक्कुरान्-एताँष्ठक्कुरान्। पतन्+तरु:=पतंस्तरु:-पतँस्तरु:।

(ख) न् से परे यदि ज् वा झ् हो तो न् को ञ् और

५१—यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा। ८-४-२५। प्रत्यये भाषायां नित्यम् (वा०)! ८-६-६१। ५२—उद:स्थास्तम्भो: पूर्वस्य। ८-६-६१। ५३—(क) नश्छव्यप्रशान्। ८-३-७। अत्रानुनासिक: पूर्वस्य तु वा। ८-३-२। अनुनासिकात् परोऽनुस्वार:, ८-३-४। खरवसानयोर्विसर्जनीय:। ८-३-३५। विसर्जनीयस्य स:। ८-३-३४।

परे ड् वा ढ् हो तो ण् हो जाता है। जैसे—तान्+जयति=ताञ्जयति। एतान्+डमरून्=एताण्डमरून्।

५४—(क) पदान्त म् से परे अन्तःस्थ (य र ल व) वा ऊष्म (श ष स ह) वर्ण हो तो म् को नित्य *अनुस्वार* हो जाता है। जैसे—ग्रामम्+याति=ग्रामं याति। करुणम्+रोदिति=करुणं रोदिति। वृक्षम्+लुनाति=वृक्षं लुनाति। मिष्टम्+वदति=मिष्टं वदति। राज्यम्+शास्ति=राज्यं शास्ति। दिनम्+षष्ठम्=दिनं षष्ठम्। जलम्+स्रवति=जलं स्रवति। शत्रुम्+हन्ति=शत्रुं हन्ति।

(ख) पदान्त म् से परे यदि कोई *वर्गीय वर्ण* हो तो म् को परले वर्गका *पांचवां* वर्ण वा *अनुस्वार* होता है। जैसे—किम्+करोषि=किङ्करोषि-किं करोषि। अरिम्+जानाति=अरिञ्जानाति-अरिंजानाति। चापम्+टङ्कुरुते=चापण्टङ्कुरुते-चापं टङ्कुरुते। धनम्+ददाति=धनन्ददाति-धनं ददाति। किम्+फलम्=किम्फलम्-किं फलम्। (यदि म् से परे स्वर वर्ण हो तो उसे अनुस्वार नहीं होता। जैसे—ग्रामम्+आयाति=ग्रामा-याति, फलम्+उत्पन्नम्=फलमुत्पन्नम्।) वाक्यके अन्तमें कभी अनुस्वार नहीं आता।

(ग) अपदान्त म् से परे यदि अनुनासिकभिन्न कोई *वर्गीय वर्ण* हो तो उसे परले वर्ग का *पांचवां वर्ण* अवश्य हो जाता है।

जैसे—शाम्+तः=शान्तः। आक्राम्+तः=आक्रान्तः।

५५—(क) ह्रस्व स्वरसे परे यदि छ् हो तो छ् के पूर्व च् नित्य जोड़ा जाता है। जैसे—वृक्ष+छाया=वृक्षच्छाया। गच्छति,

---

(ख) नश्चापदान्तस्य झलि। ८-३-२४।

५४—(क) मोऽनुस्वारः। ८-३-२३। (ख) वा पदान्तस्य, ८-४-५९।
(ग) अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः, ८-४-५८। ५५—(क) छे च। ६-१-७३।

इच्छा।

(ख) पदान्त *दीर्घ* स्वरसे परे यदि छ् हो तो च् विकल्पसे जोड़ा जाता है। जैसे—लता+छाया=लताच्छाया—लताछाया।

५६—ह्रस्व स्वरसे परे यदि ङ्, ण् वा न् हो और परे कोई स्वर (ह्रस्व वा दीर्घ) हो तो ङ् ण् न् को *द्वित्व* हो जाता है। (दो ङ्, दो ण् वा दो न् हो जाते हैं।) जैसे—कुर्वन् + अस्ति + कुर्वन्नस्ति। धावन् + अस्ति=धावन्नस्ति। प्रत्यङ् + आत्मा= प्रत्यङ्ङात्मा। सुगण् + ईशः=सुगण्णीशः।

५७—पदान्त स् को र् हो जाता है। जैसे—राम+स् = रामर्।

५८—र् से परे यदि कोई *अघोष* वर्ण हो वा कुछ न हो तो र् को विसर्ग हो जाता है। जैसे—रामर् = रामः। पुनर् = पुनः। रामस् +कथयति=रामर् +कथयति=रामः कथयति।

५९—र्-जात विसर्गसे परे यदि एक और र् हो तो पूर्व र् का *लोप* हो जाता है और लुप्त र् से पूर्व ह्रस्व स्वर (यदि हो तो) *दीर्घ* हो जाता है। जैसे—पुनर् + रक्ष=पुनःरक्ष=पुनारक्ष। हरिः + रक्षति = हरीरक्षति। शम्भुः+राजते=शम्भूराजते। निः+रवः=नीरवः। निः+रसः=नीरसः।

अनुशीलनी—५

१—इनमें सन्धिच्छेद करो—

तच्छ्लोकेन, वाङ्मयम्, वेदं पठति, लब्धुम्, जगदीशः, यदेव, शरच्छशी,

---

(ख) पदान्ताद् वा। ६-१-७३। ५६—ङमो ह्रस्वादचि ङमुण् नित्यम्। ८-३-३२। ५७—ससजुषोरुः। ८-२-६६। ५८—खरवसानयोर्विसर्जनीयः। ८-३-१५। ५९—(रो रि। ८-३-१४। ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः। ६-१-१११।)

किन्तन्न, उद्धत:, अवाङ्मुखम्, पुनश्च, मातारक्ष, अम्मयम्, प्राङ्मुख:, महच्छत्रम्, सम्राडागत:, त्रिपज्जाता, तद्धितम्, स्मरन्नवदत्, आलिङ्गति, मीमांसते, प्रागेव, राजण्ढौकसे, भवदुक्त:, अत्यन्त:, दिग्घस्ती, भवदागमनम्, तन्नीरम्, नीरोग:, अज्झलौ, इंटे, अस्मिंस्तडागे, कस्मिंश्चित्, माच्छिदत्, बदरीच्छाया, नीरस:, सृजन्नीश्वर:, सर्वत्र् हि,गुरुन्नम, मातरं वन्दे, द्विड्ढि, महाण्डामर:, रामश्चिनोति, चतंष्टिटिभ:, क्रोद्धुम्, कोत्स्यामि, विपत्सु, वाग्भि:, षण्मुख:, जगन्नाथ:।

२. इनमें सन्धि करो—

बृहत्+लाभ:, मुनीन्+त्रायस्व, शत्रून्+जय, तरुम्+छिन्धि, क्षिपन्+थुत्कारम्, गम्+तव्यम्, भवत्+मतम्, हरिर्+रम्य:, मार्गम्+चलति, अप्+वास:, महत्+धनम्, भिक्+लुब्धम्, धावन्+शश:, विद्वन्+शोभसे, धर्मात्+भ्रष्ट:, तत्+श्मश्रु, श्वलिट्+हसति, मल्लिका+छाया, लघु+छत्रम्, तत्+उपाख्यानम्, भवत्+ऋणम्, अप्+इन्धनम्, वाक्+मन्त्रणम्, युयुध्+सते, छेद्+तुम्, भ्रात:+आगच्छ, पुनर्+रमण:, सम्यक्+उक्तम्।

३. त् को च्, च् (आगम), छ्-द्वित्व, म् को कवर्गीय पांचवां (ङ्), ह् को ध्, न् को ङ्—होनेके नियम बता कर प्रत्येकके दो-दो उदाहरण लिखो।

४. उत्थानम्, कस्मिंश्चित्, धनुष्टङ्कार:, चलन्नतिष्ठत्—इनमें उपयुक्त नियमोंको बता कर सन्धिच्छेद करो।

५. र् से परे र् होने पर, त् से परे ल् होने पर, म् से परे स् होने पर और स् पद के अन्त में होने पर कौन कौन विकार होते हैं।

विसर्ग-सन्धि

६०—*विसर्ग* (:) के परे अच् (*स्वर*) वा हल् (व्यञ्जन) होने पर विसर्ग को जो *विकार* होता है, उसे *विसर्गसन्धि* कहते हैं।

जैसे—राम:+अवदत्=रामोऽवदत् में विसर्ग को ओ विकार हुआ है।

६१—विसर्गके पूर्व यदि *अ* हो और परे कोई *सघोष*

व्यञ्जन वा *अ* हो तो *विसर्ग* को *उ* हो जाता है। जैसे—रामः+वदति=राम+उ+वदति=रामो वदति (गुण)। मृगः+धावति=मृगो धावति। मेघः+गर्जति=मेघो गर्जति। नृपः+अवदत् =नृप+उ+ अवदत् =नृपोऽवदत्।

६२—(क) विसर्गसे पूर्व यदि *अ* हो और परे *अ-भिन्न* कोई स्वर हो तो *विसर्ग* का *लोप* हो जाता है। जैसे—कः+इच्छति=क इच्छति। (लोप होने पर फिर कोई भी सन्धि नहीं होती।) जैसे—नृपः + उवाच=नृप उवाच । अतः+ऊर्ध्वम् = अत ऊर्ध्वम । अतः+एव=अतएव। मोहनः+ऐक्षत=मोहन ऐक्षत।

(ख) विसर्गसे पूर्व यदि *आ* हो और परे कोई *सघोष* वर्ण हो तो विसर्ग का *लोप* हो जाता है।

जैसे—नराः+ऊचुः=नरा ऊचुः। जनाः+ईहन्ते=जना ईहन्ते। गजाः+धावन्ति=गजा धावन्ति। कन्याः+लज्जन्ते=कन्या लजन्ते।

(ग)—सः और एषःसे विसर्गका *लोप* हो जाता है यदि परे *अ-भिन्न* कोई वर्ण हो।

जैसे—सः + देवः=स देवः। एषः + शशः=एष शशः। सः+ऋषिः=स ऋषिः। (किन्तु एषः+अवदत्=एषोऽवदत्। सः+अश्वः=सोऽश्वः होंगे) वाक्य के अन्तमें सः और एषः ही रहेंगे। जैसे—अतीव कार्यकुशलः सः। क्व गच्छति एषः ?

(घ) *भोः* के विसर्गका *लोप* हो जाता है यदि परे कोई सघोष वर्ण हो। जैसे—भोः+राम=भो राम। भोः+उमेश=भो उमेश।

६१—(अतोरोरप्लुतादप्लुते। ६—१—१३। हशिच। ६-१-११)।

६२—(भो-भगो-अघो-अपूर्वस्य योऽशि। ८-३-१७। लोपः शाकल्यस्य। ८-३-१९। हलि सर्वेषाम्। ८-६-१२। पूर्वत्रासिद्धम्। ८-१-१।) (ग) एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि। ६-१-१३२)

६३—(क) विसर्ग से पूर्व अ भिन्न कोई स्वर हो और परे कोई सघोष वर्ण हो तो विसर्ग को र् हो जाता है। जैसे—मुनिः+अवदत् = मुनिरवदत्। गौः+इयम् = गौरियम्। अग्निः+ज्वलति=अग्निर्ज्वलति। ऋषिः+नमति=ऋषिर्नमति।

(ख)—विसर्गसे परे यदि च् वा छ् हो तो उसे श्,
यदि ट् वा ठ् हो तो उसे ष् और
यदि त् वा थ् हो तो उसे स् हो जाता है।

जैसे—हरिः+चलति=हरिश्चलति। धावितः+छागः=धावितश्छागः। भीतः+टलति=भीतष्टलति। माधवः+टीकते=माधवष्टीकते। कुक्कुटः + तरति=कुक्कुटस्तरति। शिशुः+थूत्करोति+शिशुस्थूत्करोति।

६४—विसर्ग से परे यदि श्, ष् वा स् हो तो विसर्ग को विकल्पसे श्, ष् वा स् हो जाते हैं। जहाँ श्, ष् वा स् नहीं होते, वहाँ विसर्ग ही रहता है। जैसे—वह्निः+शाम्यति=वह्निश्शाम्यति, वह्निः शाम्यति। देवः+शेते=देवश्शेते, देवःशेते। दिवसः+षष्ठः=दिवसष्षष्ठः, दिवसःषष्ठः। अनित्यः + संसारः=अनित्यस्संसारः, अनित्यः संसारः। प्रथमः+सर्गः=प्रथमस्सर्गः, प्रथमः सर्गः।

अनुशीलनी—६

१—इनमें सन्धिच्छेद करो—नरो याति, चौरा हरन्ति, एष पतति, उन्नतस्तरुः, घटाष्षट्, स मृगः, विष्णुश्शेते, नृपश्शंकते, पूर्णश्चन्द्रः, विप्रा यच्छन्ति, लता वेपन्ते, देव उवाच, रामोऽरोदीत्, प्रातरुत्तिष्ठति, प्रातश्चलितः, शिवो वन्द्यः, भो राजन्, एषोऽश्वः, एष मृगः, विष्णुर्विक्रमते, अतीतो मासः, क एषः श्रीरियम्, वामो हस्तः, हता गजाः, प्रातरेव, सुधीरयम्, शिशुर्हसति, राज्ञ औदार्यम्, वाता वान्ति, वेदोऽधीतः, मनोभिः, कुतो रोषः, सोऽहम्, तपोधनः, शोभनो गन्धः, कुत

---

६३ (क) विसर्जनीयस्य सः। ८-३-३४। ६४ वा शरि। ८-३-३६।

आगतः, चन्द्र उदेति ।

२—इनमें सन्धि करो—भोः + हरे, सः + अस्ति, एषः, + अनुगतः, देवाः + इह, नृपः + विद्वान्, रामः + दाशरथिः, साधुः + तरति । वृक्षः + छादयति, अश्वाः + चलन्ति, मीनाः + तरन्ति, बालः + हसति, कविः + रचयति, असुराः + युध्यन्ते, मनः+रञ्जनम्, मनः+भिस्, ताराः+उदिताः, राज्ञः+इच्छा ।

३—प्रातः + आगच्छति=प्रातरागच्छति, रामः+आगच्छति=राम आगच्छति । इनमें क्यों सन्धिभेद है ? कारण बताओ ।

४—विसर्ग को उ, विसर्ग को र् और विसर्ग का लोप कब होते हैं ? नियम और उदाहरणोंसे स्पष्ट करो ।

५—सः देवः का स देवः क्यों बनता है ? बुधो देवः की तरह सो देवः क्यों नहीं बनता ?

६—इनमें से अशुद्धियोंको निकालो—तयासन, सोवदति, रविर्राजते, महान्नन्धः, देवोवाच, पुनोऽपि, रमाषु, नृपेसु, हर्येतौ, धावितोश्वा, विद्वांतरति, रामस्टीकते, कश्मिश्चित्, बुधोनराः, नराण्, नृनाम्, पतत्भिः, कुर्वनासीत, विद्वद्सु, प्राकूभ्याम्, षट्डसन्ति, कुतरागतः, वृहत् ललाटम्, धिङ्लोभिनम्, किम् करः, मनारञ्जनम् ।

पद्-प्रकरण

संस्कृत-भाषाका समग्र शब्दभांडार तीन भागों में विभक्त है—नाम, (Substantives), धातु (Verbal roots) और अव्यय (Indeclinables)

१—नामसे संज्ञा, विशेषण और सर्वनामोंका बोध होता है ।

जैसे, संज्ञा-शब्द—नर, वृक्ष, नदी, रमा, राम आदि ।

विशेषण शब्द—कृष्ण, बुद्धिमत्, धार्मिक आदि ।

सर्वनाम शब्द—तद् (वह), इदम् (यह) युष्मद् (तू), अस्मद् (मैं) आदि ।

२—धातु क्रियाका पूर्व रूप (मूल) होता है—अर्थात् धातुसे क्रियाके अन्यान्य रूप बनते हैं । जैसे—पठ् धातु से पठति (पढ़ता है),

पठतु (पढ़े), पठिष्यति (पढ़ेगा) इत्यादि क्रियाके रूप बने हैं।

३—अव्यय—(व्ययका अर्थ है—विकार, अव्ययका अर्थ है विकार-रहित। यन्न व्येति तदव्ययम) अव्यय शब्दोंमें कोई भी परिवर्तन नहीं होता, अर्थात् वे सदा एक ही रूपमें प्रयुक्त होते हैं।

अव्ययके दो प्रकार हैं—उपसर्ग और निपात।

६५—(क) उपसर्ग वे अव्यय हैं जिनका स्वतन्त्र प्रयोग नहीं होता और वे किसी धातुकी बनी क्रिया या अन्य शब्दके पूर्व ही प्रयुक्त होते हैं।

जिस शब्दके पूर्व इनका प्रयोग होता है, उसके अर्थमें वे कुछ न कुछ विशेषता ला देते हैं। * जैसे—भू धातुका अर्थ है होना, परन्तु उसके पूर्व यदि 'परि' जोड़ा जाय तो उसका अर्थ तिरस्कार करना हो जाता है। परिभवति (तिरस्कार करता है।) इसी प्रकार सम्भवति (उत्पन्न होता है)। इसी तरह हृ धातुसे प्रहार (चोट,) विहार (घूमना), संहार (मारना), आहार (भोजन) आदि बने हैं।

(ख)—निपात का अर्थ है—वह शब्द जिसकी बनावटका कोई नियम नहीं—अर्थात् व्याकरणकी प्रक्रियाके अनुसार जो न बन सके। ऐसे शब्द बने बनाये ज्योंके त्यों भाषामें प्रयुक्त होते रहते हैं। जैसे—च, खलु, अहो, अथ।

(क्रिया और अव्ययका विशेष विवरण आगे दिया जायगा)।

नाम, धातु और अव्यय से परे कुछ चिह्न लगाए जाते हैं—उन्हें विभक्ति कहते हैं। जैसे—राम (नाम) से परे(:) आने से 'रामः' बन जाता है और पठ् धातुसे परे ति आने से पठति बन जाता है। अव्ययोंसे परे भी विभक्ति तो आती है किन्तु उसका पुनः लोप हो जाता है। इसलिए अव्यय सदा विभक्तिरहित ही होते हैं।

इन विभक्तिसहित नाम, क्रिया और अव्ययको पद कहते हैं।

किसी भी वाक्य में विभक्तिरहित शब्दका प्रयोग नहीं हो सकता।

---

* उपसर्गयोगाद् धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते॥

अनुशीलनी—७

शब्दोंके कितने प्रकार हैं ? नाम किसे कहते हैं ? नामसे किस प्रकारके शब्दों-का बोध होता है। क्रिया किसे कहते हैं, क्रिया और धातुमें क्या भेद है ?

अव्ययके कितने प्रकार हैं ? निपात किसे कहते हैं ? पद किसे कहते हैं।

१—नाम-प्रकरण

लिङ्ग (Gender)

किसीके सम्बन्धमें यह जाननेके लिए कि वह पुरुष है, स्त्री है अथवा अन्य है, उसके वाचक संज्ञा शब्दका लिङ्ग नियत होता है।

लिङ्गका अर्थ है चिह्न—अर्थात् वह चिह्न जिसके कारण किसी शब्दके पुरुषवाचक या स्त्रीवाचक होनेका भेद प्रकट होता है।

नामोंके लिङ्ग तीन हैं—पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग।

कई संज्ञाशब्द पुंलिङ्ग होते हैं, कई स्त्रीलिङ्ग और कई नपुंसकलिङ्ग।

प्रायः पुरुषवाचक शब्द पुंलिङ्ग और स्त्रीवाचक स्त्रीलिङ्ग होते हैं। जैसे—राम, देव, हरि आदि पुंलिङ्ग हैं और नारी, देवी, स्त्री आदि स्त्रीलिङ्ग हैं। जिन वस्तुओंमें पुरुष-स्त्रीका भेद नहीं है उनमें कई पुंलिङ्ग, कई स्त्रीलिङ्ग और कई नपुंसिकलिङ्ग होते हैं। जैसे—वृक्ष, समुद्र, पल्लव आदि पुंलिङ्ग हैं, लता, नदी, मति आदि स्त्रीलिङ्ग हैं और सरस्, आकाश, फल-आदि नपुंसकलिङ्ग हैं। इसलिए संस्कृत शब्दोंका लिङ्ग-परिचय देनेके लिए कोई विशेष नियम नहीं है।

प्रायः विशेषण और सर्वनाम शब्द त्रिलिङ्ग होते हैं, क्योंकि विशेषण का लिङ्ग वही होता है जो उसके विशेष्यका होता है और सर्वनामका वही होता है जो उस संज्ञा-शब्दका होता है, जिसके स्थान पर सर्वनाम प्रयुक्त होता है। जैसे—रम्यः ग्रामः, रम्यं वनम्, रम्या नगरी। इनमें रम्य (विशेषण) शब्द अपने विशेष्यके अनुसार तीनों लिङ्गोंमें आया है।

इसी प्रकार अयम् (नरः) आगच्छति। इयम् (नारी) आगच्छति।

इदं (फलं) पतति । इनमें इदम् (सर्वनाम) अपने संज्ञा-शब्दके लिङ्गके अनुसार तीनों लिङ्गोंमें प्रयुक्त हुआ है ।

विभक्ति (Case-endings)

६६—नामोंके अन्तमें कुछ चिह्न लगाए जाते हैं, जिनके कारण उनका परस्पर संबन्ध बनता है, उन चिह्नोंको *विभक्ति* कहते हैं ।

विभक्तियाँ सात हैं-—प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी ।

(सम्बोधन प्रथमाका ही भेद है, कोई अलग विभक्ति नहीं है ।)

वचन (Number)

प्रत्येक विभक्तिके तीन वचन हैं—एकवचन, द्विवचन, बहुवचन ।

एकके लिए एकवचन आता है, दो लिए द्विवचन आता है और दोसे अधिकके लिए बहुवचन आता है ।

विभक्तियों के मूल रूप ये हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	,,	,,
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	,,	,,
षष्ठी	,,	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	,,	सु
संबोधन	स्	औ	अस्

इन विभक्तियोंको नामिक-विभक्तियाँ या सुप् विभक्तियाँ कहते हैं ।

(धातुओंके आगे जिन विभक्तियोंको लगाकर क्रियापद बनते हैं, उन्हें तिङ्

विभक्तियाँ कहते हैं।)

जिन नामोंके आगे ये विभक्तियाँ आती हैं, वे दो प्रकारके हैं।

१—स्वरान्त (जिनके अन्तमें स्वर हो) जैसे—नर, सुन्दर, सर्प।

२—व्यञ्जनान्त (जिनके अन्तमें व्यञ्जन हो) जैसे—मरुत्, गुणवत्, गिर्।

स्वरान्तोंको अजन्त और व्यञ्जनान्तों को हलन्त भी कहते हैं।

यद्यपि लिङ्ग तीन हैं—पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग, तोभी स्वरान्त और हलन्त भेदसे नामों के छः लिङ्ग माने जाते हैं—

स्वरान्त पुंलिङ्ग, स्वरान्त स्त्रीलिङ्ग, स्वरान्त नपुंसकलिङ्ग, व्यञ्जनान्त पुंलिङ्ग, व्यञ्जनान्त स्त्रीलिङ्ग, व्यञ्जनान्त नपुंसकलिङ्ग।

(विभक्तियोंके जो मूल-रूप ऊपर दिए हैं, वे व्यञ्जनान्त नामोंके आगे इसी रूपमें (अविकृत) आते हैं, किन्तु स्वरान्तोंके आगे उनमें कई परिवर्तन होकर उनके भिन्न भिन्न रूप बन जाते हैं। आगे उनके विकृत रूप ही दिए जायेंगे।)

साधारण: विभक्तियोंके हिन्दीमें ये अर्थ होते हैं—

प्रथमा—*ने	पञ्चमी—से
द्वितीया—*को	षष्ठी—का, के, की
तृतीया—से, के द्वारा	सप्तमी—में, पर
चतुर्थी—को, के लिए	सम्बोधन—हे, रे (ये शब्द पूर्व लगते हैं)

कारक-विभक्ति

विभक्तिके दो भेद हैं—कारक-विभक्ति और उपपद-विभक्ति।

६७—संज्ञा या सर्वनाम-शब्दके साथ प्रयुक्त वह विभक्ति जिसके द्वारा किसी वाक्यमें उस शब्दका क्रियाके साथ सम्बन्ध

---

* प्रथमा और द्वितीया विभक्तिके अर्थको प्रकट करनेके लिए कभी कभी हिन्दीका कोई भी चिह्न नहीं रहता। जैसे—रामः गच्छति। (राम जाता है।) अहं गृहं गच्छामि। (मैं घर जाता हूँ।)

प्रकट होता है, कारक-विभक्ति है।

कारकका अर्थ है करने वाला, क्रिया के साथ सम्बन्ध रखने वाला (क्रियान्वयि कारकम्)। कोई क्रिया निष्पन्न ही नहीं हो सकती जब तक उसका कोई कारक न हो। जैसे—देना धातुके किसी क्रियारूपको बनानेसे पूर्व यह जानना आवश्यक है कि—कौन देता है? क्या देता है? किसके द्वारा देता है? किसको देता है? कहांसे देता है? कहाँपर देता है? इन सब प्रश्नों का ठीक उत्तर मिलनेपर ही देना क्रियाकी पूर्ति होती है।

ददाति (देता है) क्रिया है।

१—कौन देता है? धनिकः ददाति—(धनी देता है।)

२—क्या देता है? **धनम्**। धनिकः **धनं** ददाति—(धनी धन देता है।)

३—किसके द्वारा देता है? हस्तेन। धनिकः **हस्तेन** धनं ददाति—(धनी हाथसे धन देता है।)

४—किसको देता है? **याचकाय**। धनिकः हस्तेन **याचकाय** धनं ददाति—(धनी हाथसे भिखारीको धन देता है।)

५—कहांसे देता है? **पेटकात्**। धनिकः **पेटकात्** हस्तेन याचकाय धनं ददाति—(धनी भिखारीको पेटीसे हाथसे धन देता है।)

६—कहाँ पर देता है? **आपणे**। धनिकः पेटकात् हस्तेन याचकाय **आपणे** धनं ददाति!—(धनी भिखारीको पेटीसे हाथसे दूकानपर धन देता है।)

१—कर्ता (Subject)

६८—जो काम (क्रिया) करता है, उसे कर्ता कहते हैं।

कर्तृकारकको बतानेके लिए प्रथमा विभक्तिका प्रयोग होता है।

कर्तामें प्रथमा विभक्तिका अर्थ 'ने' या किसी चिह्नके बिना बताया जाता है। (जब क्रिया **कर्मवाच्य** होती है तो कर्ममें **प्रथमा** आती है। यह आगे 'कर्मवाच्य' पाठमें बताया जाएगा।) देवः गच्छति। (देव जाता है।) मृगः धावति। (हरिण भागता है।) गौर्गच्छति। (गौ जाती है।) गौरगच्छत्। (गौने खाया।)

२—कर्म (Object)

६६—कर्तासे की हुई क्रियाका जो विषय होता है, वह कर्म है।

अर्थात्—यदि कर्ता देखता है तो जो वस्तु देखी जाए, यदि कर्ता खाता है तो वस्तु खाई जाए, यदि कर्ता कहता है तो जो बात कही जाए, यदि कर्ता देता है तो जो वस्तु दी जाए,—आदि क्रियाके कर्म होंगे।

कर्मकारकको बतानेके लिए कर्ममें द्वितीया विभक्ति आती है।

कर्ममें द्वितीयाका अर्थ 'को' या किसी चिह्नके बिना ही बताया जाता है।

नृपो मृगं पश्यति (राजा हरिण'को देखता है।)
मोहनः पुस्तकं पठति। (मोहन पुस्तक पढ़ता है।)
सिंहः पशून् दारयति। (शेर पशुओंको चीरता है।)

३—करण (Instrumental)

७०—कर्ताको क्रियाकी सिद्धिमें जो सहायता देता है, उसे करण कहते हैं।

करणकारक बतानेके लिए तृतीयाका प्रयोग होता है। करणमें तृतीयाका अर्थ 'के द्वारा' या 'से' से प्रकट होता है।

(कर्मवाच्यमें कर्तामें तृतीयाका प्रयोग होता है—यह आगे 'कर्मवाच्य' पाठ में बताया जायगा।)

छात्रः हस्तेन लेखनीं धारयति। (छात्र हाथसे कलम पकड़ता है।)
अश्वो मुखेन घासं चर्वति। (घोड़ा मुँहसे घास चबाता है।)
चौरः पादाभ्यामधावत्। (चोर पाँवोंसे भाग गया।)

४—सम्प्रदान (Dative)

७१—जिसको कुछ दिया जाए या जिसके निमित्त कोई

काम किया जाए, उसे *सम्प्रदान* कहते हैं।

सम्प्रदान के लिए चतुर्थी विभक्ति आती है।

सम्प्रदान-चतुर्थीका अर्थ 'के लिए' से बताया जाता है।

(कभी कभी सम्प्रदानका अर्थ 'को' से भी बताया जाता है)

जैसे— दरिद्रेभ्योऽन्नं यच्छ। (गरीबोंको खाना दो।)

के वास्ते, के अर्थ, हेतु, के निमित्त—भी इसी विभक्तिके अर्थ हैं।

छात्राः पठनाय गच्छन्ति। (छात्र पढ़नेके लिए जाते हैं।)

सुवर्णमाभरणेभ्यः भवति। (सोना भूषणोंके लिए होता है।

मेघः वर्षणाय उद्गच्छति। (मेघ बरसनेके लिए उठता है।)

देवो भोजनाय गृहं गच्छति (देव भोजनके वास्ते (के निमित्त) घर जाता है।)

५—अपादान (Ablative)

७२—जब कोई किसीसे *वियुक्त* (अलग) होता है तो जिससे वियोग होता है, उसे *अपादान* कहते हैं।

अपादानके लिए पञ्चमी विभक्ति आती है।

अपादानका अर्थ 'से' से प्रकट होता है। जैसे—देवो गृहादागच्छति। (देव घरसे आता है।) घरसे आनेसे पूर्व देव और घर दोनों संयुक्त थे।

वृक्षात् पुष्पाणि पतन्ति। (वृक्षसे फूल गिरते हैं।)

मेघेभ्यो बिन्दवः स्रवन्ति। (बादलोंसे बूंदें गिरती हैं।)

देहात् स्वेदः निर्गच्छति। (शरीरसे पसीना निकलता है।)

६—अधिकरण (Locative)

७३—*कर्ता जहाँ पर वा जिसमें* क्रिया करे—अर्थात् जो क्रियाका आधार हो, उसे *अधिकरण* कहते हैं।

अधिकरणके लिए सप्तमी आती है।

अधिकरण-सप्तमीका अर्थ 'में' वा 'पर' से स्पष्ट होता है।

पात्रे जलमस्ति (बरतनमें जल है।)

नृपः आसने तिष्ठति। (राजा आसनपर बैठता है।)

घृते स्नेहो वर्तते (घीमें चिकनाहट होती है।)

इस प्रकार कर्तासे लेकर अधिकरण तक छः कारक हुए और इन छहों कारकोंके लिए प्रथमासे लेकर सप्तमी तक (षष्ठीको छोड़ कर), छः विभक्तियोंका क्रमसे प्रयोग बताया गया है।

षष्ठी

रही षष्ठी विभक्ति। वह नामोंका परस्पर संबन्ध बतानेके लिए प्रयुक्त होती है, उसका क्रियाके साथ कुछ सम्बन्ध नहीं होता, अतः उसे कारक नहीं मानते। जैसे—रामस्य पिता गच्छति। (रामका पिता जाता है।) इसमें रामस्य का सम्बन्ध पितासे है, गच्छति से नहीं। मम हस्ताः। तव पुस्तकम्।

अतः कारक छः हैं, किन्तु विभक्तियाँ सात हैं।

उपपद-विभक्ति

७४—उपपद-विभक्ति—क्रियासे अन्य किसी दूसरे पदके योगसे जो विभक्ति होती है, उसे उपपद-विभक्ति कहते हैं।

जैसे—सीता रामेण सह वनं गच्छति। (सीता रामके साथ बन जाती है।) इस वाक्यमें रामेण में तृतीया क्रियाके संबन्धसे नहीं किन्तु सह के योगसे है।

त्वां विना स न जीवति। (तेरे बिना वह नहीं जीता।)

अलं रोदनेन। (रोओ मत) इत्यादि।

(कारक और उपपद विभक्तियोंका विशेष विवरण आगे आयगा।)

लिङ्ग-प्रकरण

पीछे बताया गया है कि लिङ्ग तीन होते हैं और विभक्तियाँ सात। यह भी आ चुका है कि नामोंके अन्तमें जो विभक्तियाँ आती हैं उन्हें सुप्

विभक्तियाँ कहते हैं, क्योंकि पाणिनिव्याकरण के अनुसार नामिक विभक्तियां सु (प्रथमा-एकवचन) से शुरू होकर प् (सुप्-सप्तमी बहुवचन) पर समाप्त होती हैं। सुप्-विभक्तिसहित पद को सुबन्त कहते हैं।

(धातुओंके अन्तमें जो चिह्न लगाकर क्रियायें बनती हैं, उन्हें भी विभक्ति ही कहते हैं—और ति से शुरू होकर ङ् पर समाप्त होनेसे वे तिङ् विभक्तियाँ कहलाती हैं। तिङ्-विभक्तिसहित क्रियापद तिङन्त कहलाते हैं।)

स्वरान्त (अजन्त) पुंलिङ्ग

अकारान्त शब्द

मूल विभक्तियोंमें कुछ परिवर्तन होकर उनके रूप अकारान्त शब्दों के लिए बन जाते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्	औ	अस्
संबोधन	०	,,	,,
द्वितीया	म्	,,	अन्
तृतीया	इन	भ्याम्	ऐस्
चतुर्थी	य	भ्याम्	भ्यस्
पञ्चमी	आत्	,,	,,
षष्ठी	स्य	ओस्	नाम्
सप्तमी	इ	,,	सु

राम

णत्व-विधि

७५—ऋ, ॠ, र् वा ष् के परे यदि अपदान्त न् हो तो उसे ण् हो जाता है।

(ऋ, ॠ, र् वा ष् और न् के बीच में यदि कोई स्वर, कवर्ग, पवर्ग, य् व् ह् भी हो, तो भी न् को ण् हो जायगा।)

राम+नाम्=रामाणाम्। (यहाँ र् के बाद आ, म् और आ का व्यवधान है, तो भी न् ण् हो गया है)। इसी तरह हरीणाम्, नृणाम्, कर्णाम्।

रामान्, हरीन्, साधून्—में न् ण् नहीं हुआ क्योंकि न् पदान्त है।

षत्व-विधि

७६—अ वा आ से भिन्न किसी स्वर, क् वा र् के बाद स् को ष् हो जाता है। रामे+सु=रामेषु—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
संबोधन	राम	,,	,,
द्वितीया	रामम्	,,	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	,,	रामेभ्यः
पञ्चमी	रामात्	,,	,,
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	,,	रामेषु

सब अकारान्त पुंलिङ्ग शब्दों के रूप राम की तरह होंगे।

अनुरूप शब्द

नृप, भूप, भूमिप	राजा	हरिण, मृग, कुरङ्ग	हरिण	सागर, समुद्र	समुद्र
				चन्द्र	चाँद
नग	पर्वत	रण	युद्ध	अनिल, वात	वायु
नाग, गज	हाथी	वृष	बैल	अनल	आग
		रोष, क्रोध	गुस्सा		
खग	पक्षी			तुरग, तुरङ्ग, तुरङ्गम	घोड़ा
द्विज	ब्राह्मण, पक्षी	वृक्ष	पेड़		
अज	बकरा	अश्व	घोड़ा	वर्ण	रङ्ग

मत्स्य	मछली
स्वेद	पसीना
प्रासाद	महल
खद्योत	जुगनू
भ्रमर, मधुकर, द्विरेफ, भृङ्ग	भौंरा
दंश	मच्छर
वैद्य	वैद्य
ज्वर	बुखार
वृक	भेड़िया
चटक	चिड़ा
चिल्ल	चील
स्वर्ग, नाक	स्वर्ग, आकाश
बादल, पयोद, वारिद	बादल
काल, समय	समय
सिंह	शेर बबर
शार्दूल, व्याघ्र	बाघ, शेर
सर्प	साँप
भुजग, भुजङ्ग, भुजङ्गम	साँप
विहग, विहङ्ग, विहङ्गम	पक्षी
छात्र	विद्यार्थी
ग्राम	गाँव
शब्द	आवाज़
मार्जार, विडाल	बिल्ला
मूषिक	चूहा
देश	देस
देव, सुर	देवता

संस्कृत में अनुवाद करो—

ऊंचे (उच्च) स्वरसे मृदंगकी आवाज़ कानोंको सुखदायक होती है।

दो पहलवानोंका (मल्ल) कैसा (कीदृश) उत्साह है!

मन्त्री (अमात्य) की लापरवाही (प्रमाद) से राजाका नाश होता है।

सुमार्ग (सत्पथ, सन्मार्ग) चलने योग्य (गम्य) है और कुमार्ग (विपथ) त्यागने योग्य (त्याज्य, हेय)।

मकान (आवास) का बरामदा (अलिन्द) विशाल है।

अटारी (अट्ट) ऊंची है।

कूड़े (अवकर) को घरके बाहरी फाटक (तोरण) पर फेंकनेसे सफाई होती है।

आम (आम्र, रसाल) का रस मीठा (मधुर) होता है।

चंपे (चम्पक) की गंध (गंध, आवास) मौलसरी (वकुल) की गंध से मनोहर होती है!

खांसी (कास) रोगोंको उत्पन्न करने वाली (उत्पादक)

होती है।

चिड़ियाघर (जन्त्वागार) में गैंडा (गंडक), गीदड़ (शृगाल, जम्बुक), हरिण (मृग, हरिण), रीछ (ऋक्ष), बन्दर और शेर हैं।

शिक्षकों का आदर करनेसे छात्रों को लाभ होता है।

अनुशीलनी—८

१—सुप् और तिङ् विभक्तियाँ कौन हैं ? सुबन्त और तिङन्त क्या हैं ? इनमें सुबन्त और तिङन्त पदोंको अलग अलग करो। रामस्य, वृक्षाणाम्, गच्छतः, चन्द्रे, धर्मयोः, धावन्ति, देवेषु।

२—इन शब्दोंके रूप प्रत्येकके लिए निर्दिष्ट विभक्तिके साथ लिखो—आपण—प्रथमा, अमात्य—तृतीया, भ्रमर—पञ्चमी, विक्रय—सप्तमी, अश्व—चतुर्थी।

३—अ+ओ, आ+औ, अ+इ, आ+ई, अ+अ, आ+आ के मेलसे क्या क्या विकार होते हैं ? नियम बताओ।

४—न् को ण् और स् को ष् किन नियमोंसे होते हैं ? उदाहरण दो।

५—जिन शब्दोंके साथ विभक्तियाँ नहीं लगीं, उनके साथ विभक्तियाँ लगाओ—

दशरथ पुत्रः राम। छात्र विद्यालयः। अनिल वेगः। आम्राणां रस मधुर। आकाश खगाः।

६—इनमें रिक्त स्थानोंको उचित शब्द रखकर पूरा करो—

सूर्यस्य—चण्डः। ग्रीष्मे—प्रस्रवः। चन्द्रस्य प्रकाशः—आल्हादकः। नदे—मत्स्याः। वकुलस्य सुवासः—।

७—ये रूप किस किस शब्दकी किस किस विभक्तिसे बने हैं—प्रश्नयोः, देवेभ्यः, आम्राणाम्, वृक्षेषु, नृपाय, तुरगात्, नागेन।

८—इनके अकारान्त पर्याय-शब्द दो—नृप, अश्व, सर्प, हरिण, क्रोध, भ्रमर, स्वर्ग, विद्वान्, कृपण, सूचक।

इकारान्त शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
संबोधन	हरे	,,	,,
द्वितीया	हरिम्	,,	हरीन्
तृतीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
चतुर्थी	हरये	,,	हरिभ्यः
पञ्चमी	हरेः	हरिभ्याम्	,,
षष्ठी	,,	हर्योः	हरीणाम्
सप्तमी	हरौ	,,	हरिषु

अनुरूप शब्द

मुनि—ऋषि	गिरि—पहाड़	उदधि—समुद्र	रवि—सूर्य
रश्मि—बागडोर	अरि—शत्रु	वह्नि, अग्नि—आग	गिरि—पहाड़
मरीचि—किरण	अलि—भ्रमर		नृपति, महीपति, भूपति—राजा
कपि—बंदर	यति—योगी	कवि—कवि	
पाणि—हाथ	कलि—कलह	मणि—रत्न	
सारथि—कोचवान	व्याधि—रोग	राशि—ढेर	
निधि—खजाना	तित्तिरि—तीतर	हरि—विष्णु	
विधि—भाग्य	शुचि (त्रि०) पवित्र	असि—तलवार	

सब इकारान्त पुंलिंग शब्दोंके रूप हरिकी तरह होंगे, किन्तु सखि और पतिके रूप इससे भिन्न हैं।

सखि (मित्र)

विभक्तियां

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	०	औ	अस्
संबोधन	०	,,	,,
द्वितीया	अम्	,,	न्

तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	,,	भ्यस्
पञ्चमी	ङस्	भ्याम्	,,
षष्ठी	,,	ओस्	नाम्
सप्तमी	औ	,,	सु
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	*सखा	सखायौ	सखाय:
संबोधन	सखे	,,	,,
द्वितीया	सखायम्	,,	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभि:
चतुर्थी	सख्ये	,,	सखिभ्य:
पञ्चमी	सख्यु:	,,	सखिभ्य:
षष्ठी	सख्यु:	सख्यो:	सखीनाम्
सप्तमी	सख्यौ	,,	सखिषु

पति (भर्ता, मालिक)

पतिके पहले छः रूप हरिकी तरह और शेष रूप सखिकी तरह होंगे—

प्रथमा	पति:	पती	पतय:
संबोधन	पते	,,	,,
द्वितीया	पतिम्	,,	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्याम्	पतिभि:
चतुर्थी	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्य:
पञ्चमी	पत्यु:	,,	,,
षष्ठी	,,	पत्यो:	पतीनाम्

---

*सखि शब्द यदि ऐसे पद के अन्तमें हो जिसमें कर्मधारय अथवा तत्पुरुष समास हुआ हो तो सखि के अन्तमें अ (टच्) का आगम होकर 'सख' बन जाता है। जैसे—प्रियसख, प्रजासख। इनके रूप 'राम' की तरह होंगे।

सप्तमी	पत्यौ	,,	पतिषु

पति शब्द यदि किसी शब्दके अन्तमें जुड़ा (अर्थात् समासमें) हो तो उसके रूप हरिकी तरह होंगे—भूपति, नृपति, महीपति, नरपति आदि।

इनके अनुवाद संस्कृत में करो—

युद्ध (रण) में वीरोंका नाश होता है।

राजा (नृपति) के प्रतापसे देशमें सुकाल है।

भँवरोंका गुंजार (झंकारः) मधुर होता है।

चांदकी किरणें शीतल होती हैं।

मंडी (हट्ट) में नारियल (नारिकेल), खजूर (खर्जूर), और सुपारिओं (पूग) के ढेर हैं।

कब्ज (मलावरोध) से बीमारिआँ होती हैं।

राघवके खज़ाने (कोष) में पैसे (पण), आने (आणक), और मोहरों (निष्क) के ढेर हैं।

पर्वतोंमें ऋषिओंका निवास होता है।

राजाके कोषमें बहुत मणिआं हैं।

अनुशीलनी—६

१—सखि, पति और हरिके रूपोंमें कहाँ कहाँ भेद है?

२—अरिके तृतीयाके एकवचन, सारथिके पञ्चमीके एकवचन, अग्निके चतुर्थीके सब वचनों, पाणिके सप्तमीके एकवचन और निधिके प्रथमा-बहुवचन के रूप लिखो।

३—भूपति और पतिके रूपोंमें क्या भेद है?

४—इनके स्थानपर संस्कृत-पद लिखो—अग्निका, शत्रुपर, अतिथियों द्वारा, हाथोंमें, पहाड़का, (दो) बन्दरों के लिए, कवियों का।

५—किस किस शब्दकी किस किस विभक्तिके ये रूप हैं और इनके विभक्ति-सहित अर्थ क्या क्या हैं? हर्योः, विधौ, आज्योः, अरिषु, यतेः, कपी, कवीन्, असीनाम्, विधिना।

६—इन रूपोंको शुद्ध करो—गिर्यां, रश्मीन, अग्निनः, कवीः, मणयाः, व्याध्यो, भूपतीभ्याम्, नदिषु, रविना, असिसु, नृपत्या।

ईकारान्त शब्द

ईकारान्त शब्दोंसे परे विभक्तियोंके मूलरूप ही आते हैं।

सुधी (सुबुद्धि)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा सं०	सुधीः	सुधियौ	सुधियः
द्वितीया	सुधियम्	,,	,,
तृतीया	सुधिया	सुधीभ्याम्	सुधीभिः
चतुर्थी	सुधिये	,,	सुधीभ्यः
पञ्चमी	सुधियः	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
षष्ठी	,,	सुधियोः	सुधियाम्
सप्तमी	सुधियि	,,	सुधीषु

दुर्धी (दुर्बुद्धि), शुद्धधी आदि के रूप सुधी की तरह ही होंगे।

उकारान्त शब्द

उकारान्त शब्दों के परे इकारान्तों की विभक्तियाँ ही आती हैं।

भानु (सूर्य)

प्रथमा	साधुः	साधू	साधवः
संबोधन	साधो	,,	,,
द्वितीया	साधुम	,,	साधून्
तृतीया	साधुना	साधुभ्याम	साधुभिः
चतुर्थी	साधवे	,,	साधुभ्यः
पञ्चमी	साधोः	,,	,,
षष्ठी	,,	साध्वोः	साधूनाम
सप्तमी	साधौ	,,	साधुषु

सब उकारान्त पुंलिङ्ग शब्दोंके रूप साधु की तरह होंगे।

अनुरूप शब्द

कुधी—दुर्बुद्धि	बाहु—भुजा	प्रभु—स्वामी	शिशु—बालक
बिन्दु—बूँद	केतु—एक ग्रह, ध्वजा	रिपु—शत्रु	विधु—चाँद
इक्षु—गन्ना		ऋतु—मौसम	भानु—सूर्य

वायु—हवा	सिन्धु—समुद्र	शेलु—लसोड़ा	तरक्षु—चीता
गुरु—आचार्य	तरु—पेड़	पलाण्डु—प्याज	गोमायु—गीदड़
बन्धु—बांधव	शम्भु—महादेव	उर्वारु—ककड़ी	हनु—जबड़ा
धातु—धात	वेपथु—कँपकँपी		

ऋकारान्त शब्द

ऋकारान्तोंके लिए विभक्तियाँ वही हैं जो सखिके लिए हैं, भेद केवल इतना ही है कि सप्तमी-एकवचन की विभक्ति औ नहीं इ है।

पितृ (पिता)

६१—(क) जिन ऋकारान्त शब्दोंका अर्थ कोई सम्बन्ध (रिश्ता) है, उनके अन्तिम ऋ को प्रथमा-द्विवचनसे द्वितीया-द्विवचन तक चार (औ, अस्, अम्, औ) विभक्तियोंसे पूर्व अर् हो जाता है। परन्तु नप्तृ (दौहित्र, पौत्र), भर्तृ (स्वामी, पति), स्वसृ (बहन) में अर् नहीं होगा, आर् होगा। पितृ+औ=पितर्+औ=पितरौ। देवृ+अम =देवरम्।

(ख) जो शब्द किसी सम्बन्धको प्रकट नहीं करते उनके ऋ को आर् हो जाता है। दातृ+अम=दातार्+अम=दातारम्। कर्तृ+अस्=कर्तार:।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितर:
संबोधन	पित:	पितरौ	पितर:
द्वितीया	पितरम्	,,	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभि:
चतुर्थी	पित्रे	,,	पितृभ्य:
पञ्चमी	पितु:	,,	,,
षष्ठी	,,	पित्रो:	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	,,	पितृषु

इसी प्रकार भ्रातृ (भाई), देवृ (देवर), जामातृ (दामाद) के रूप होंगे।

*दातृ (देने वाला)

प्रथमा	दाता	दातारौ	दातार:
संबोधन	दात:	,,	,,

द्वितीया	दातारम्	,,	शेष पितृ की तरह

अनुरूप शब्द

नप्तृ—दौहित्र, पौत्र
भर्तृ—पति, मालिक
कर्तृ—करने वाला
नियन्तृ—कोचवान
जामातृ—दामाद
देवृ—देवर

नृ—नर
नेतृ—नेता
होतृ—हवन करने वाला
जनयितृ—पिता
गन्तृ—जाने वाला
श्रोतृ—सुनने वाला

क्रेतृ—खरीदने वाला
विक्रेतृ—बेचने वाला
धातृ—उत्पन्न करने वाला
सवितृ—सूर्य
द्रष्टृ—देखने वाला

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

स्वामीके आदेशसे भले नौकरों (किङ्कर, दास, भृत्य) को खुशी (प्रसाद) होती है।

चांदके उदयसे समुद्र की लहरों (ऊर्मि) में हलचल (विप्लव) होती है।

वायुका वेग तेज़ (तीक्ष्ण) है।

घास (घास) पर ओस (नीहार) की बूंदें हैं।

मालिकके लिए हरिका संदेस (सन्देश) है।

पढ़ने वाले (अध्येतृ) के विनयसे गुरुको प्रसन्नता होती है।

बन्धुओंका स्नेह लाभदायक (हितकर) होता है।

देवर पतिका भाई होता है।

महादेवकी कृपा (प्रसाद) से रामका पुत्र तन्दुरुस्त (स्वस्थ) है।

आम गरमीके मौसममें बहुत (बहु) होते हैं।

पिताके आदेशसे रामका घर को त्यागना लोगोंको क्लेशदायक है।

ककड़ी बेचने वाले (विक्रेतृ) की दूकान पर बहुत खरीदने वाले हैं।

अनुशीलनी—१०

१—कर्तुः, भ्रातरि, भानौ, सुधियि, वायवे, हनूनाम्, साधोः, द्रष्ट्रोः, विधुभिः—इनके शब्द, विभक्ति और वचन लिखो।

२—क्रेतुके तृतीयामें, देवृके पंचमीमें, कृशोके चतुर्थीमें, पितृके द्वितीयामें, गुरुके सप्तमीमें, विधुके षष्ठीमें और नेतृके सम्बोधनमें रूप लिखो।

३—कर्तृ और पितृके रूपोंमें क्या भेद है? क्यों? दोनों प्रकारोंके दो दो

शब्द बताओ।

४—भानु और हरिके रूपोंकी रचनामें तुलना करो।

५—पितुः—पितृव्यः। इक्षोः रसः—।—वेगः शीतलः। गुरोः—मोहनः—। पुत्रस्य—नप्ता। इनमें रिक्त स्थानोंको पूर्ण करो।

६—इनके एक एक पर्याय-शब्द दो—विधु, भानु, रिपु, वायु, गोमायु।

७—उकारान्त शब्दों की विभक्तियाँ बताओ।

स्त्रीलिङ्ग

स्त्रीलिङ्ग में आकारान्त और ईकारान्त शब्दोंकी प्रचुरता है। इनके अतिरिक्त इकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त, ओकारान्त और औकारान्त शब्द भी कई हैं।

आकारान्त—लता, शाला, सेवा, प्रभा, अजा, बाला आदि।

इकारान्त—भूमि, मति, बुद्धि, गति आदि। (इकारान्तोंमें ति-अन्त बहुत हैं।)

ईकारान्त—नदी, स्त्री, श्री, पृथ्वी, विदुषी, कुमारी, स्वामिनी आदि।

उकारान्त—धेनु, रज्जु आदि।

ऊकारान्त—वधू, श्वश्रू आदि।

ओकारान्त—गो।

औकारान्त—नौ।

स्त्रीलिंगके आकारान्त शब्दोंकी ये विभक्तियाँ हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	०	इ	अस्
सम्बोधन	इ	,,	,,
द्वितीया	म्	,,	,,
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ऐ	,,	भ्यस्
पञ्चमी	आस्	,,	भ्यस्
षष्ठी	आस्	ओस्	नाम्

सप्तमी	आम्	ओस्	सु

लता (बेल)

प्रथमा	लता	लते	लताः
संम्बोधन	लते	,,	,,
द्वितीया	लताम्	,,	,,
तृतीया	लतया	लताभ्याम	लताभिः
चतुर्थी	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
पञ्चमी	लतायाः	,,	,,
षष्ठी	,,	लतयोः	लतानाम्
सप्तमी	लतायाम्	,,	लतासु

(स्त्रीप्रत्यय-प्रकरणमें जो शब्द 'आ' प्रत्यय लगकर आकारान्त स्त्रीलिंग शब्द बने हैं, उन सबके रूप लताकी तरह होंगे—अजा, बाला, वत्सा।)

अम्बा (माता) का सम्बोधन-एकवचन अम्ब होगा। शेष रूप लता की तरह होंगे।

अनुरूप शब्द

माला	हार	विद्या	विद्या	ग्रीवा, कन्धरा	गरदन	याच्ञा	भिक्षा, भीख
क्षमा	क्षमा	क्रीडा	खेल				
व्यथा	मनकी पीड़ा	कला	हुनर	रसना, जिह्वा	जीभ	ऊर्णा	ऊन
तृष्णा, तृषा	प्यास	गङ्गा	गंगा			घृणा	घिन, नफरत
		आज्ञा	आज्ञा	कनीनिका	आँखकी पुतली		
प्रमदा	युवति	कथा	कहानी			निशा	रात
छाया	छाया	लाला	लार	खट्वा	खटिया	शिखा	चोटी
शोभा	शोभा			अनुपदीना	जुराब	जटा	बालोंकी जटा
शाला	स्थान	जरा	बुढ़ापा	भृत्या	मजदूरी		
प्रजा	प्रजा, सन्तान	कविका	लगाम	मञ्जूषा	सन्दूक	होरा	घण्टा
		शिविका	पालकी	पादुका	जूता	कला	मिनट
भार्या	स्त्री	छुरिका	छुरी	रेखा	लकीर	विकला	सेकेण्ड
शिला	पत्थर	शर्करा	मिश्री, खांड	स्पर्धा	होड़		
कन्या	लड़की			गुञ्जा	रत्ती		

इकारान्त

स्त्रीलिङ्ग इकारन्त शब्दोंके रूप पहले पांच वचनोंमें हरिकी तरह होंगे और शेष विभक्तियोंमें नदीकी तरह, किन्तु चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमीके एक वचनोंमें एक एक रूप हरिकी तरह भी होगा।

मति (बुद्धि)

प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
संबोधन	मते	,,	,,
द्वितीया	मतिम्	,,	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै-मतये	,,	मतिभ्यः
पञ्चमी	मत्याः—मतेः	,,	,,
षष्ठी	,, ,,	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम्—मतौ	,,	मतिषु

अनुरूप शब्द

स्त्रीलिंगके इकारान्त शब्दोंमें ति-अन्त शब्द बहुत हैं। उन सबके रूप मति की तरह होंगे।

वीचि, ऊर्मि	लहर	विपणि	दूकान	कटि, श्रेणि	कमर
		ग्रन्थि	गाँठ		
सरणि	सड़क			चुल्लि	चूल्हा
रुचि	इच्छा	बुद्धि	बुद्धि	दर्वि	कलछी
आलि	सखी, पंक्ति	भक्ति	भक्ति	स्तुति	प्रशंसा
		श्रुति	वेद, श्रवणशक्ति	प्रकृति	स्वभाव, प्रजा
प्रवृत्ति	खबर				
भित्ति	दीवार	भूति	ऐश्वर्य	आकृति	आकार, शक्ल
आयति	भविष्य, लम्बाई	आसक्ति	लगन		
		आसत्ति	समीपता	शान्ति	शान्ति
स्मृति	याद	विरक्ति	वैराग्य	प्रणति	प्रणाम
गति	शरण	कृति	काम	कान्ति	शोभा

ईकारान्त

ईकारान्तों की विभक्तियाँ ये हैं—

प्रथमा-सं०	०	औ	अस्
द्वितीया	म्	,,	स्
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ऐ	,,	भ्यस्
पञ्चमी	आस्	भ्यास्	भ्यस्
षष्ठी	,,	ओस्	नाम्
सप्तमी	आम्	,,	सु

नदी

प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
संबोधन	नदि	,,	,,
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	,,	,,
षष्ठी	,,	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	,,	नदीषु

अनुरूप शब्द

पुत्री	लड़की	भगिनी	बहन	सखी, सहचरी	सहेली
नारी	स्त्री	वंशी	बांसुरी		
जननी	माता	द्रोणी	डोंगी	कौमुदी	चाँद की रोशनी
दासी	नौकरानी	प्रणाली	पनाला, उपाय		
पत्नी	स्त्री			वलभी	छज्जा
राज्ञी	रानी	प्रतोली	गली	शोधनी, सम्मार्जनी	बुहारी
पुरी, नगरी	शहर	रजनी, रात्री	रात	कदली	केला
अंगुली	उंगली			भण्टाकी	बैंगन

तुम्बी	लौकी	महिषी	भैंस, पटरानी	स्थाली	देगची, बटलोही
नप्त्री	पोती, दोहती	पृथ्वी	जननी	नीवी	पूँजी
पौत्री	पोती	मही	जननी	अटवी	जंगल
नाडी	नाड़ी	अवनी	जननी	श्रेणी	वर्ग
विदुषी	पढ़ी लिखी	चालनी	छाननी	मसी	स्याही

स्त्रीप्रत्यय-प्रकरणमें दिए हुए सब ईकारान्त शब्दोंके रूप नदी की तरह होंगे। जैसे-सिंही, हरिणी, कुमारी, गोपी, लक्ष्मी, श्रीमती, बुद्धिमती, विदुषी, प्राची, इच्छन्ती, राज्ञी, शुनी आदि।

लक्ष्मी और तन्त्री (वीणा) के भी रूप नदी की तरह होंगे! किन्तु उनके प्रथमा-एकवचनके रूप लक्ष्मीः और तन्त्रीः होंगे।

स्त्री (भार्या)

स्त्रीके आगे भी नदीकी ही विभक्तियाँ लगती हैं, परन्तु द्वितीया के एकवचन और बहुवचनमें दो-दो रूप होंगे, एक इय् के साथ और दूसरा नदी की तरह।

प्रथमा	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
संबोधन	स्त्रि	,,	,,
द्वितीया	स्त्रियम्-स्त्रीम्	,,	स्त्रियः-स्त्रीः
तृतीया	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
चतुर्थी	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पञ्चमी	स्त्रियाः	,,	,,
षष्ठी	,,	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
सप्तमी	स्त्रियाम्	,,	स्त्रीषु

श्री (लक्ष्मी)

श्री के रूप सुधीकी तरह होंगे, परन्तु चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी के एकवचनोंमें और षष्ठीके बहुवचनमें इसके दो-दो रूप होंगे, एक सुधी की तरह और दूसरा स्त्री की तरह।

प्रथमा-सं०	श्रीः	श्रियौ	श्रियः

द्वितीया	श्रियम्	,,	श्रियः
तृतीया	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
चतुर्थी	श्रिये-श्रियै	,,	श्रीभ्यः
पञ्चमी	श्रियः-श्रियाः	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
षष्ठी	,, ,,	श्रियोः	श्रियाम्-श्रीणाम
सप्तमी	श्रियि-श्रियाम्	,,	श्रीषु

धी (बुद्धि), भी (भय) के भी रूप सुधी की तरह ही होंगे।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

मिथिलामें रामसे जानकीका विवाह हुआ था।

दूकानसे दुअन्नी (द्वयाणकी) की बहुत लौकिआं (तुम्बी) लाओ (आनय)।

डुग्गी (डिण्डिम) की घोषणासे लोगोंका जमाव (संघट्ट) हो जाता है।

मल्लाह (नाविक, कैवर्त, कर्णधार) की नाव के चप्पू (नौदण्ड) और मस्तूल (कूपक) पुराने (जीर्ण) हैं।

घरके बरामदेमें रामकी मसेरी (मातृष्वसेयी) बहिन खड़ी (स्थिता) है।

पाठशालामें छुट्टी (अनध्याय) है।

रामा बुद्धिमती, चपला चलाक और पुष्पा मूर्ख हैं।

देवकी सरलाकी सास है।

तालाबमें मछलियां हैं।

देवकीकी मामी गोपालकी फूफी (पितृष्वसेयी) है।

श्रीमतीका स्वास्थ्य कैसा (कीदृश) है ?

राजे पृथ्वी (धरणी, मही) के पालक होते हैं।

अहिंसा सबसे उत्तम धर्म है।

अनुशीलनी—११

१—स्त्रीलिङ्गके आकारांत और ईकारांत शब्दोंकी विभक्तियां लिखो और दोनोंमें परस्पर भेद बताओ।

२—इनके लिए संस्कृत-शब्दोंका प्रयोग करो—

पालकीमें, अंगूठीके लिए, हल्दीके साथ, धोतियोंका, नगरीसे, केलोंमें, बुद्धिमें।

३—नदीके चतुर्थीमें, मालाके पञ्चमीमें, स्त्रीके द्वितीयामें, श्रीके सप्तमीमें, शालाके

तृतीयामें, महीके षष्ठीमें, दर्वीके सम्बोधनमें, लक्ष्मीके प्रथमामें और मतिके द्वितीयामें रूप लिखो।

४—इन पदोंके अर्थ बताओ—

अलिन्दात्, चारिन्याम्, अवज्ञया, खट्वायाम्, रसनाभ्याम्, विशूचिकायै, तन्त्रीषु, कन्थायाम्, वल्मीनाम्, प्रतोल्योः, भित्तौ, भूमेः।

५—इनके शुद्ध रूप बताओ—

लतेभ्यः, नदिभिः, छायैः, लतायः, प्रभाया, शालौ, कथयाम्, व्यथयः, स्त्रियि।

६—इनके शब्द, विभक्ति और वचन बताओ—

कथयः, प्रभायाम्, श्रियः, भानो, बुद्धे, पत्नीनाम्, नापत्नाभ्यः, नद्याः, प्रभूणाम्, चन्द्रान्, कन्यायै, वीथ्याः वीथ्यै, शान्तेः।

७—इनके स्थानपर संस्कृत-शब्द लिखो—

जमाव, नाविक, लक्ष्मी, जवान, भीख, प्यास, सखी, कुमारी, पृथ्वी, ऐश्वर्य, गांठ।

उकारान्त

जिस प्रकार इकारान्त स्त्रीलिंग-शब्दों के रूप हरि और नदी की तरह होते हैं, उसी प्रकार उकारान्त स्त्रीलिङ्ग-शब्दों के रूप भी भानु और वधू की तरह होंगे—

प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
संबोधन	धेनो	,,	,,
द्वितीया	धेनुम्	,,	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
चतुर्थी	धेन्वै-धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पञ्चमी	धेन्वाः-धेनोः	,,	,,
षष्ठी	,, ,,	धेन्वोः	धेनूनाम्
सप्तमी	धेन्वाम् धेनौ	,,	धेनुषु

ऊकारान्त

वधू (बहू)

प्रथमा	वधूः	वध्वौ	वध्वः

संबोधन	वधु	वध्वौ	वध्वः
द्वितीया	वधूम्	,,	वधूः
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
चतुर्थी	वध्वै	,,	वधूभ्यः
पञ्चमी	वध्वाः	,,	,,
षष्ठी	,,	वध्वोः	वधूनाम्
सप्तमी	वध्वाम्	,,	वधूषु

श्वश्रू के रूपभी वधूकी तरह होंगे।

ऋकारान्त

स्त्रीलिंगके सम्बन्धवाचक ऋकारान्त शब्दोंके रूप पुंलिङ्गके सम्बन्ध-वाचक ऋकारान्त शब्दों (पितृ आदि) की तरह होंगे; केवल द्वितीयाके बहुवचनमें न् की जगह : होगा। जैसे—मातॄः।

मातृ (माता)

प्रथमा	माता	मातरौ	मातरः
संबोधन	मातः	,,	,,
द्वितीया	मातरम्	,,	मातॄः
तृतीया	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
चतुर्थी	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
पञ्चमी	मातुः	,,	,,
षष्ठी	,,	मात्रोः	मातॄणाम्
सप्तमी	मातरि	,,	मातृषु

स्वसृ में अर् नहीं होगा, आर् होगा।

स्वसारौ स्वसारः स्वसारम्, शेष मातृवत्।

जो ऋकारान्त शब्द सम्बन्धवाचक नहीं हैं, उनके स्त्रीलिंग-रूप उनके अन्तमें स्त्रीप्रत्यय (ई) लगाकर बनते हैं। देखो कर्तृ+ई=कर्त्री, दातृ-दात्री, जनयितृ—जनयित्री। इनके रूप नदी के समान होंगे।"

ओकारान्त

गो (गाय)

ओकारान्त शब्दोंसे परे विभक्तियोंके मूल-रूप आते हैं।

प्रथमा-सं०	गौः	गावौ	गावः
द्वितीया	गाम्	,,	गाः
तृतीया	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
चतुर्थी	गवे	,,	गोभ्यः
पञ्चमी	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
षष्ठी	,,	गवोः	गवाम्
सप्तमी	गवि	,,	गोषु

गो का अर्थ यदि बैल हो तो वह पुलिंगमें होता है, और उसकी भी रूपावलि स्त्रीलिङ्गकी तरह ही होती है।

औकारान्त

औकारान्त शब्दोंके साथ भी विभक्तिके मूलरूप ही जोड़े जाते हैं।

नौ (a boat)

विभक्तिका स्वर परे रहते औकारान्त शब्दोंके औ का आव् हो जाता है।

प्रथमा-सं०	नौः	नावौ	नावः
द्वितीया	नावम्	,,	,,
तृतीया	नावा	नौभ्याम्	नौभिः
चतुर्थी	नावे	,,	नौभ्यः
पञ्चमी	नावः	नौभ्याम्	नौभ्यः
षष्ठी	नावः	नावोः	नावाम्
सप्तमी	नावि	,,	नौषु

अनुरूप शब्द

शतद्रु	सतलज नदी	करेणु	हथिनी	स्वसृ	बहन
		रज्जु	रस्सी	ननन्दृ	ननद
हनु	जबड़ा	तनु	शरीर	यातृ	देवरानी, जेठानी
कन्दु	कड़ाही	रेणु	धूलि		

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

रस्सीकी गांठ (ग्रन्थि) ढीली (शिथिला) है।

भले लोगोंकी प्रार्थना ईश्वरकी प्रसन्नताके लिए होती है।

अंधेरी रात (तमिस्रा) में जुगुनुओं (खद्योत) की चमक सुन्दर होती है।

लोग प्रातःकाल (प्रत्यूष) में ईश्वरकी स्मृतिमें मग्न रहते हैं।

रामकी वाटिकामें बहुतसे फूलों का रंग भूरा (कपिश) है।

रसोइये (सूद) के हाथ (कर) में लोहेकी कलछी है।

दूकानदार (आपणिक) की दूकानपर अंगूर (द्राक्षा), इमली (अम्लिका), केला (कदली), गोभी (द्विजिह्वा) हैं।

गायके पांवोंकी धूलि पवित्र होती है।

गौओंकी पूजा मनुष्यका धर्म है।

वेदोंके पढ़नेमें स्त्रियोंका भी अधिकार है।

अनुशीलनी—१२

१—भानु और धेनुकी रूपावलिमें क्या भेद है ?

२—इनके शब्द, विभक्ति और वचन लिखो—

धेन्वा, मत्याम्, कृतौ, स्वसरि, गवि, गावः, नावोः, रज्ज्वा, कृत्योः, भूमीनाम्, तनुषु।

३—इन पदोंका संस्कृत में अनुवाद करो—

शरीरके लिए, हथनियोंपर, रस्सियोंका, गौके लिए, भूमिपर, देवरानी और जेठानी का झगड़ा, रस्सीका टुकड़ा, (दो) नावोंकी टक्कर।

४—इनके शुद्ध रूप लिखो—

धेन्वि, स्वस्रयोः, गवयोः, नावाः, भक्तिनाम्, गावम्।

स्त्री-प्रत्यय

स्त्रीलिङ्ग शब्द दो प्रकारके होते हैं—(१) मूल स्त्रीलिङ्ग शब्द और प्रत्यययोग से बने स्त्रीलिङ्ग शब्द।

१–मूल-स्त्रीलिङ्ग शब्द वे हैं जिनका अर्थ मूलसे ही स्त्रीवाचक है और जिनके रूप पुंलिङ्ग या नपुंसकलिङ्गमें नहीं होते।

१—स्वरान्त मूल स्त्रीलिङ्ग शब्द

आकारान्त—लता, प्रजा आदि।

इकारान्त—मति [बुद्धि], गति [चाल] आदि।

ईकारान्त—मही (पृथ्वी), स्त्री, ह्री (लज्जा), भी (भय), धी (बुद्धि) ।

उकारान्त—धेनु (गाय), रज्जु (रस्सी) आदि।

ऊकारान्त—वधू (बहू), श्वश्रू (सास) आदि।

ऋकारान्त—स्वसृ (बहन), मातृ, ननन्दृ (ननद) आदि।

ओकारान्त—गो (गाय)।

औकारान्त—नौ (नाव)।

२—हलन्त मूल स्त्रीलिङ्ग शब्द

वाच् (वाणी), विपद् (विपत्ति), समिध् (लकड़ी), गिर् (वाणी) आदि।

२–प्रत्यय–योगसे बने वे स्त्रीलिंग शब्द हैं जो मूलरूपमें स्त्रीलिंग नहीं होते, परन्तु किसी प्रत्ययके लगनेसे स्त्रीलिङ्ग बन जाते हैं।

अज (बकरा) के अन्त में आ (प्रत्यय) लगाने से अजा (बकरी) बन गया है। सुत (पुत्र) से सुता, चपल (चालाक) से चपला।

ब्राह्मण के अन्त में ई (प्रत्यय) लगनेसे ब्राह्मणी, कुमारसे कुमारी, स्वामिन् से स्वामिनी आदि स्त्रीवाचक शब्द बनते हैं।

७७—वह अक्षर या अक्षरसमूह जो किसी धातु या मूल शब्दके अन्तमें उसके अर्थमें कोई विशेषता लानेके निमित्त लगाया जाता है, प्रत्यय कहलाता है।

मृदु (नरम) से ता (प्रत्यय) लगा कर मृदुता (नरमी), नदसे नदी, रघुसे राघव (रघुकी संतान)। इनमें ता, ई, अ—ये प्रत्यय हैं।

जो प्रत्यय किसी पुरुषवाचक शब्दके अन्तमें लगकर उसीको स्त्रीवाचक बना देता है, उसे स्त्रीप्रत्यय कहते हैं।

मुख्य स्त्रीप्रत्यय दो हैं—आ और ई।

इनके अतिरिक्त ऊ और ति भी कुछ शब्दोंके अंतमें लगते हैं।

ई–प्रत्ययान्त स्त्रीवाचक शब्दोंकी संख्या आकारान्तोंसे बहुत अधिक हैं।

(आ)

७७—अकारान्त शब्द और अज-आदि [गणके] शब्दोंके स्त्रीवाचक रूप उनके अंतमें *आ* लग कर बनते हैं।

अकारान्त—दीन-दीना, प्रथम-प्रथमा, द्वितीय-द्वितीया, तृतीय-तृतीया, कान्त (सुन्दर) कान्ता, जात (उत्पन्न)—जाता, पूर्व-पूर्वा, पश्चिम-पश्चिमा, चतुर-चतुरा, दक्ष (चतुर) दक्षा, चपल (चालाक) चपला, प्रतिकूल (उलटा) प्रतिकूला, वाम (सुन्दर) वामा, दयित (प्रिय) दयिता, तरल (चंचल) तरला, कृश (दुबला) कृशा, क्रूर (कठोर) क्रूरा, दृढ़ (पक्का) दृढ़ा, सरल (सीधा) सरला।

अज-आदिगण—अज-अजा (बकरी), एडक—एडका (भेड़), कोकिल—कोकिला, (कोयल), चटक—चटका (चिड़िया), मूषिक—मूषिका (चूहिया), अश्व-अश्वा (घोड़ी), बाल-बाला (लड़की), वत्स—वत्सा (बछिया), होड-होडा (छोकरी), कुब्ज—कुब्जा (कूबड़), ज्येष्ठ—ज्येष्ठा (बड़ी), कनिष्ठ—कनिष्ठा (छोटी), मध्यम—मध्यमा (मँझली)।

७८—जिनके अन्तमें *अक* हो उनके अन्तमें भी *आ* आता है, साथही अक इक हो जाता है।

कारक—कारिका, दायक (देने वाला) दायिका, घातक (मारने वाला) घातिका, दारक (लड़का) दारिका, बालक—बालिका।

(ई)

८०—अकारान्त जातिवाचक (Class-names) शब्दोंके अन्तमें ई आता है।

वक (बगला) वकी, सिंह—सिंही, व्याघ्र—व्याघ्री, भल्लूक (भालू) भल्लूकी, मृग—मृगी, हंस—हंसी, कुरङ्ग (हरिण) कुरङ्गी, काक—काकी, ब्राह्मण—ब्राह्मणी, निषाद (भील) निषादी, वृषल (शूद्र) वृषली, मयूर (मोर) मयूरी, सूकर (सुअर) सूकरी, हय (घोड़ा) हयी, हरिण—हरिणी, वर्कर (बकरा) वर्करी, भृङ्ग (भौंरा) भृङ्गी, मानुष—मानुषी, बिडाल—बिडाली, घोटक (घोड़ा) घोटकी (घोड़ी), कुक्कुट (मुर्गा) कुक्कुटी, महिष (भैंसा) महिषी।

८१—*गौर*-आदि (गणके) शब्दोंके साथ भी ई लगाया जाता है।

गौर—गौरी (पार्वती), पार्वत—पार्वती, सुन्दर—सुन्दरी, मातामह—मातामही (नानी), पितामह—पितामही (दादी),

(मनुष्य और मत्स्य का य नहीं रहता)

मनुष्य—मनुषी, मत्स्य—मत्सी (मछली)।

८२—*मय* और *अक* प्रत्ययान्तोंके अंतमें भी ई लगता है।

मय-अन्त—सुवर्णमय—सुवर्णमयी (सोनेकी बनी), हिरण्मयी (सोनेकी बनी), मृण्मय—मृण्मयी (मिट्टीकी बनी)।

अक-अन्त-रजक (धोबी) रजकी, नर्तक—(नाचने वाला) नर्तकी, (यह अक गायक आदि के अक से भिन्न है)।

८३—*अवस्था*-वाचक शब्दोंके अन्तमें भी ई लगता है।

तरुण (जवान) तरुणी, किशोर (जवान) किशोरी, वधूट—वधूटी (जवान स्त्री), कुमार—कुमारी।

अपवाद (क)—वृद्ध-अवस्था-वाचक शब्दके अन्तमें आ आता है। वृद्ध-वृद्धा (ख) बाल अजादि-गण में है, अत: उसका बाला बनेगा।

८४—कोई *व्यवसाय* करनेसे जो पुरुषका नाम पड़ जाता है, उसके आगे ई लगा कर वही शब्द स्त्री-वाचक हो जाता है।

गोप (गाय चराने वाला), गोपी, चर्मकार (चमार) चर्मकारी, कुम्भकार (कुम्हार) कुम्भकारी, सुवर्णकार (सुनार) सुवर्णकारी, लोहकार (लोहार) लोहकारी।

८६—इन्द्र-आदि कुछ शब्दोंके अन्तमें *आनी* लगता है—अर्थात् ई से पूर्व *आन* जोड़ा जाता है।

इन्द्र—इन्द्राणी, रुद्र (शिव) रुद्राणी, भव (शिव) भवानी, वरुण (जल देवता) वरुणानी, मृड (शिव) मृडानी।

८६—इन शब्दोंके रूप *आनी*-अन्त, *आ*—अन्त और ई-अन्त होते हैं—

मातुल (मामा)—मातुलानी—मातुली। क्षत्रिय—क्षत्रियाणी—क्षत्रिया—(क्षत्रिय जातिकी) क्षत्रियी (क्षत्रिय स्त्री)। उपाध्याय (गुरु) उपाध्यायानी-उपाध्यायी (उपाध्यायकी पत्नी), उपध्याया—उपध्यायी (स्वयं उपाध्याय)। परन्तु आचार्य-आचार्यानी—(आचार्यकी पत्नी) आचार्या—(स्वयम् आचार्य)।

८७—उकारान्त गुणवाचक विशेषणोंके अन्तमें ई विकल्प से आता है।

गुरु (भारी) गुर्वी—गुरुः, लघु (छोटा) लघ्वी—लघुः, बहु (बहुत) बह्वी—बहुः, मृदु (नरम) मृद्वी—मृदुः।

८८—ऋकारान्त विशेषणोंके अन्तमें भी ई लगता है।

जैसे—कर्तृ—कर्त्री, दातृ—दात्री, गन्तृ (जाने वाला)—गन्त्री, हन्तृ (मार नेवाला)—हन्त्री।

हलन्त

८९—जिन शब्दोंके अन्तमें मत्, वत्, वस्, ईयस्, एयस्, अच्—में से कोई हो उनके अन्तमें ई स्त्रीप्रत्यय आता है।

जैसे—बुद्धिमत्-बुद्धिमती, श्रीमत्-श्रीमती, धनवत्-धनवती, कृतवत्-कृतवती, विद्वस्-विदुषी (वस् के व को उ हो जाता है, और उ के परे स् को ष् हो जाता है)। गरीयस्-गरीयसी (भारी), श्रेयस्-श्रेयसी (अच्छी), प्राच्-प्राची (पूर्व दिशा) प्रत्यच्-प्रतीची (पश्चिम दिशा), उदच्-उदाची (उत्तर दिशा)।

९०—अत् (शतृ)—अन्त शब्दोंके अन्तमें ई आता है।

रुदत्-रुदती (रोती हुई), शृण्वत्-शृण्वती (सुनती हुई), ददत्-ददती (देती हुई)।

९१—(क)—जो अत्-अन्त शब्द भ्वादि, दिवादि, चुरादि-गणके धातुओं और णिजन्तों से बने हैं, उनके अत् को अन्त् अवश्य हो जाता है। गच्छत्-गच्छन्ती (जाती हुई), पश्यत्-पश्यन्ती (देखती हुई), चोरयत्-चोरयन्ती (चुराती हुई), पाठयत्-पाठयन्ती (पढ़ाती हुई)।

(ख) जो अदादि-गणके आकारान्त धातु और तुदादि-गण के धातुओंसे बने हैं, उनमें त् को न्त् विकल्प से होता है।

(ग) जो अदादि गणके आकारान्त धातुओंसे भिन्न किसी धातु और जुहोत्यादि, तनादि और स्वादि-गणोंके धातुओंसे बने हैं, उनमें न्त् नहीं होता।

(घ) जिनके अन्त में स्यत् है उनमें भी न्त् विकल्प से हो जाता है।

इच्छत्—इच्छती—इच्छन्ती (चाहती हुई), स्नात्—स्नाती—स्नान्ती (नहाती हुई), करिष्यत्—करिष्यती—करिष्यन्ती (जो करेगी), दास्यत्—दास्यती—दास्यन्ती (जो देगी)।

६२—जिन शब्दोंके अन्तमें न् हो उनके अन्तमें भी ई आता है। जैसे—गुणिन्—गुणिनी (गुणवाली), मानिन्—मानिनी (मानवाली), यशस्विन्—यशस्विनी (यशवाली), तेजस्विन्—तेजस्विनी (तेजवाली), मायाविन्—मायाविनी (छलवाली), राजन्—राज्ञी (राजन् के अ का लोप होकर न् को ञ् हो जाता है। राजन्+ई=राज्ञ्+ई राज्ञी) (श्वन् के व को उ हो जाता है। श्वन्+ई=शुन्+ई=शुनी)। नामन्—नाम्नी (नामन शब्द प्राय: किसी अन्य शब्दके अन्त में आता है। सीता-नाम्नी, कमला-नाम्नी)।

६३—कई उकारान्त शब्दोंके अन्तमें ऊ आता है। कुरु+ऊ=कुरू (कुरु वंशकी स्त्री), पंगु—पंगू (लंगड़ी), श्वशुर—श्वश्रू (श्वशुर में उ और अन्तिम अ नहीं रहते। श्वशुर+ऊ=श्वश्र्+ऊ=श्वश्रू)।

६४—युवन् के अन्तमें तद्धितप्रत्यय *ति* आता है और न् नहीं रहता। युवन+ति=युवति।

अतद्धितार्थ 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' से "यूनी" बनता है।

शतृप्रत्ययान्त युवत् का युवती बनता है।

पति का *पत्नी* बनता है। जैसे—वशिष्ठस्य पत्नी। (किन्तु स्वामिनी अर्थमें पति ही रहता है। अस्य गृहस्य पतिरियम्। (यह इस घर की मालकिन है)।)

कई धातुओंके अन्तमें ति प्रत्यय आता है और वे नित्यस्त्रीलिङ्ग शब्द बन जाते हैं। कृ+ति=कृति (कार्य), गम्+ति=गति, रम्+ति=रति, भिद्+

ति=भित्ति (दीवार)।

स्त्रीप्रत्ययान्त शब्दावली

भवती	आप	प्रज्ञावती	बुद्धिमती	करवालिका	खाँडा
भवन्ती	होती हुई	भगवती	ऐश्वर्यवती	अंगारधानिका	अँगीठी
कुर्वती	करती हुई	यावती	जितनी	विहंगिका	बहँगी
आयुष्मती	बड़ी उम्र वाली	तावती	उतनी	वेधनिका	बर्मा
प्रज्ञावती	विदुषी	कियती	कितनी	पद्मा, कमला	लक्ष्मी
श्रेयसी	अच्छी	वयस्या	सखी		
प्रेयसी	प्यारी	कनिष्ठा	छोटी	प्रज्ञा	बुद्धि
गरीयसी	भारी	वर्षा	वर्षाऋतु	पृच्छा	प्रश्न
महीयसी	बड़ी	घटिका	घड़ी	घोषणा	मुनादी
कृतवती	करती हुई	वराटिका	कौड़ी	उर्वरा	सरसब्ज़
स्थितवती	बैठी हुई	पादिका	पाई		

अनुशीलनी—१३

१—प्रत्यय किसे कहते हैं ?

२—पुंलिङ्गसे स्त्रीलिङ्ग बनाने वाले प्रत्यय बताओ और प्रत्येकके तीन तीन उदाहरण दो।

३—कृतवत्, भवत्, प्रजावत्—इनके वत् में भेद बताओ।

४—भूयस्, लज्जावत्, कृष्ण, चञ्चल, लघु, विद्वस्, युवन्, कुर्वत्, गच्छत्, भवत् [आप], भवत् [होता हुआ], नद, वधूट, वक, महिष, देव, वर्कर, रुद्र, आचार्य, श्वशुर, पति, मत्स्य, बालक, कर्तृ, पितृ, नेतृ, स्वामिन, राजन्, मध्यम, प्रज्ञ, वयस्य, घोटक—इनके स्त्री-प्रत्ययान्त रूप लिखो।

५—ई से पूर्व अत्–अन्त शब्दोंके अत् को अन्त अवश्य और विकल्पसे कब होते हैं ? तीन तीन उदाहरण दो।

नपुंसक-लिंग

नपुंसकलिंगमें अकारान्त शब्दोंकी संख्या दूसरोंकी अपेक्षा बहुत

अधिक है।

अकारान्त

अकारान्त नपुंसकलिंग शब्दोंकी वही विभक्तियाँ हैं जो अकारान्त पुंलिंग शब्दोंकी, केवल प्रथमा और द्वितीयामें ही भेद है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा द्वि०	म्	इ	आनि
सम्बोधन	०	,,	,,

शेष पुंलिंगकी तरह

फल

फल+इ=फले। फल+आनि=फलानि।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
सम्बोधन	फल	,,	,,
द्वितीया	फलम्	,,	,,
तृतीया	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
चतुर्थी	फलाय	,,	फलेभ्यः
पञ्चमी	फलात्	,,	,,
षष्ठी	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
सप्तमी	फले	,,	फलेषु

अनुरूप शब्द

धन, वित्त, द्रविण	धन	सुख	सुख	वचन	वचन
वन, कानन, अरण्य	जंगल	औषध, भेषज, भैषज्य	दवाई	नगर, पुर	शहर
रत्न	रत्न	नेत्र, नयन	आँख	चक्र	चक्र, पहिया
कार्य, कर्तव्य	काम	कुसुम, पुष्प	फूल	उदर	पेट
				हिम	बर्फ
				स्तेय	चोरी
				लोप्त्र	चुराया हुआ माल

आभरण, भूषण	गहना
उद्यान	बाग़
राज्य	राज्य
नृत्य	नाचना
बल	शक्ति
उदक, जल, पानीय	पानी
तृण	घास
पत्र	पत्ता, कागज़
पर्ण	पत्ता
मूल	जड़, कारण
अपत्य	सन्तान
ज्ञान	ज्ञान
ध्यान	ध्यान
मांस	मांस
रक्त, रुधिर, लोहित	लोहू
ताम्र	तांबा
रजत	चांदी
पुस्तक	पुस्तक
पाप	पाप
पुण्य	पुण्य
वस्त्र	कपड़ा
सुवर्ण, स्वर्ण	सोना

कमल	कमल
गीत	गीत
मुख, वक्त्र	मुँह
गृह, हर्म्य	घर
विष, गरल	ज़हर
तथ्य, सत्य, ऋत	सचाई
अमृत, पीयूष	अमृत
क्षेत्र	खेत
वैर	शत्रुता
पित्तल	पीतल
कांस्य	कांसा
गगन, आकाश, अम्बर	आकाश
नक्षत्र, [redacted]	तारा
विवर, बिल	छेद
प्रमाण	सबूत
कारण	सबब
लक्षण, चिह्न	निशान

उपकरण	सामान
उष्णीष	पाग, पगड़ी
दुकूल	दुपट्टा
अन्तरीय	बनियान
प्रकोष्ठक	कमरा
मर्दन	मलना, मालिश
बुस	भूसा
रूप्यक	रुपया
क्रन्दित, रुदित	रोना
कूल, तीर, तट (पु॰ न॰)	किनारा
अरित्र	पतवार
ऊषर	बंजर भूमि
अनूप	तराई, जल-प्राय देश
चतुःशाल	चौक
वातायन	खिड़की
निष्ठीवन	थूक
यूथ	झुण्ड
अनामय, आरोग्य, स्वास्थ्य	तन्दुरुस्ती
आकारण, आह्वान	बुलाना

आभाषण	बातचीत	चूर्ण	पौडर	शल्य	बरछी
शिञ्जित	भूषणों की आवाज	उपधान	तकिया	खनित्र	कुदाल
		परिधान	धोती	अलात	चुआती
क्वणन	वीणारव	शयन	सेज	महानस	रसोईघर
रुत	पक्षियों की आवाज	व्यंजन	पंखा	ऋजीष	तवा
ललाट	माथा	प्रवहण	डोली	तक्र	अधरिड़का
केयूर	भुजबंद	अस्त्र	हथियार	नवनीत	माखन
अंगुलीयक	अँगूठी	शस्त्र	हथियार		

इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त—

शब्दोंसे परे प्रथमा और द्वितीयाकी विभक्तियोंके ये रूप होते हैं—

	ए० व०	द्वि० व०	ब० व०
प्रथमा, सं०		ई	इ

शेष मूल विभक्तयाँ हैं।

इकारान्त

वारि (जल)

प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
संबोधन	वारि-वारे	,,	,,
द्वितीया	वारि	,,	,,
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	,,	वारिभ्यः
पञ्चमी	वारिणः	,,	,,
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	,,	वारिषु

अस्थि (हड्डी)

अस्थि, दधि, अक्षि, सक्थि (जंघा, हड्डी) इनके रूप प्रथमा और द्वितीयामें वारिकी तरह होंगे।

प्रथमा	अस्थि	अस्थिनी	अस्थीनि
संबोधन	अस्थि-अस्थे	,,	,,

द्वितीया	अस्थि	,,	,,
तृतीया	अस्थ्ना	अस्थिभ्याम्	अस्थिभिः
चतुर्थी	अस्थ्ने	,,	,,
पञ्चमी	अस्थ्नः	,,	,,
षष्ठी	,,	अस्थ्नोः	अस्थ्नाम्
सप्तमी	अस्थ्नि-अस्थनि	,,	अस्थिषु

अक्षि (आँख)

प्रथमा	अक्षि	अक्षिणी	अक्षीणि
संबोधन	अक्षि-अक्षे	,,	,,
तृतीया	अक्ष्णा	अक्षिभ्याम्	अक्षिभिः
चतुर्थी	अक्ष्णे	,,	अक्षिभ्यः
पञ्चमी	अक्ष्णः	,,	,,
षष्ठी	,,	अक्ष्णोः	अक्ष्णाम्
सप्तमी	अक्ष्णि-अक्षणि	,,	अक्षिषु

दधि (दही)

प्रथमा-द्वि०	दधि	दधिनी	दधीनि
संबोधन	दधि-दधे	,,	,,
चतुर्थी	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
सप्तमी	दध्नि-दधनि	दध्नोः	दधिषु

उकारान्त

मधु (शहद)

प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
संबोधन	मधु-मधो	,,	,,
द्वितीया	मधु	,,	,,
तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	,,	मधुभ्यः
पञ्चमी	मधुनः	,,	,,

षष्ठी	,,	मधुनोः	मधूनाम्
सप्तमी	मधुनि	,,	मधुषु

अनुरूप शब्द

तालु तालु, सानु चोटी, अश्रु आँसू, जानु घुटना, अम्बु जल

ऋकारान्त

कर्तृ (करने वाला)

नपुंसकलिङ्गमें ऋकारान्त संज्ञाशब्द कोई नहीं है, किन्तु उन विशेषण शब्दोंकी रूपावलि नपुंसकलिंगमें भी हो सकती है जिनके रूप पीछे पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में आ चुके हैं। जैसे—कर्तृ,–कर्ता कर्तारौ कर्तारः– इत्यादि पुलिंगमें। कर्तृ+ई=कर्त्री, कर्त्र्यौ कर्त्र्यः इत्यादि स्त्रीलिंगमें।

नपुंसक लिङ्गमें

प्रथमा	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
संबोधन	कर्तृ-कर्तः	,,	,,
द्वितीया	कर्तृ	कर्तृणी	कर्तॄणि
तृतीया	कर्तृणा	,,	कर्तृभिः
चतुर्थी	कर्तृणे	,,	कर्तृभ्यः
पञ्चमी	कर्तृणः	,,	,,
षष्ठी	,,	कर्तृणोः	कर्तॄणाम्
सप्तमी	कर्तृणि	,,	कर्तृषु

नपुंसकलिंग के इकारान्त संज्ञाशब्दोंकी संख्या अत्यन्त थोड़ी है। जिन इकारान्त विशेषण शब्दोंका प्रयोग नपुंसकलिंगमें होता है, उनके रूप वारि की तरह होंगे। जैसे—शुचि जलम्, मृदूनि फलानि, सुगन्धीनि पुष्पाणि।

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

उदरकी पीड़ासे भिखारी (भिक्षु, याचक) की मृत्यु हुई।

पीतल के पात्र मिट्टी (मृत्तिका) के पात्रोंसे अच्छे होते हैं।

तांबेके गड़वेमें जल शुद्ध रहता है।

चोरीका धन मोहनके दुःखका कारण हुआ।

गांधीके वचन सत्य होते हैं।

पेशावर (पुरुषपुर) में अनार के फल (दाडिम) होते हैं।

मज़दूर (भारवाहक) के सिर पर आमोंसे भरा हुआ टोकरा

(पिट) था।

रसोईघरमें (महानस) चुआ-तिओंसे धुआं निकल रहा है (निर्गच्छति)।

मेले (मेलक) में रेशमी (कौशेय) कपड़ोंकी बिक्री होती है।

गोपालकी ठोढ़ी (चिबुक) छोटी है।

चूहों (मूषिक), नेवलों (नकुल) और सांपोंका निवास बिलमें होता है।

धनका कमाना (अर्जन) संतान के सुखके लिए है।

सची गवाही (साक्ष्य) मुकदमे (अभियोग) के फैसले (निर्णय) के लिए प्रमाण होती है।

तेलकी मालिश (मर्दन) से शरीर नीरोग होता है।

हरिकी पाग पीली है।

ऊसरमें बीज नष्ट हो जाता है।

तराईमें लोग रोगी रहते हैं।

रामकी धोतीका छोर (प्रान्त) फटा (विदीर्ण) था।

रामकी सेजपर सफेद तकिया था।

दहीसे मट्ठा और माखन निकलते हैं।

अनुशीलनी—१४

१—अकारान्त और इकारान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दोंकी विभक्तियां लिखो।

२—इनके लिङ्ग, विभक्ति और वचन का परिचय दो—

धनाभ्याम्, अस्थ्ने, अक्ष्णाम्, दधिनि, मधुना, विषाय, अश्रुणी, वारिषु, धनेभ्यः।

३—इनके रूप लिखो—

रत्न—चतुर्थी में, भूषण—सप्तमी में, स्वर्ण—प्रथमा में, तालु—तृतीया में, धातृ (न०)—षष्ठी में, रजत—द्वितीया में, अश्रु—पञ्चमी में।

४—इनमें जो रूप अशुद्ध हैं उनके शुद्ध रूप लिखो—सत्यः, प्रमाणः, कारणानि, वारेः, अश्रणः, भान्योः, सुखानाम्, तालुषु।

५—इनमें रिक्त स्थानों की पूर्ति करो—वानराणां——वृक्षस्य——। गृहस्य——गावः। महानसात्——धूमस्य——। विकेतुः——नवानां—विक्रयः। वैरम्——मूलम्...। उषायाः सुवर्णेन——नूपुरे। वातायनेन वायोः—। गङ्गायाः——नराणाम्।

६—इनके पर्यायशब्द लिखो—नक्षत्र, चिह्न, सुवर्ण, धन, वन, ओषधि, भूषण, विष, अमृत, रुधिर, आकाश, तट, स्वास्थ्य, भिक्षु।

७—इनके लिए संस्कृतपद बनाओ—

फटा हुआ, टोकरे का, मुकदमेके लिए, गरीबों से, जंगली पशुओं में।

८—इनके हिन्दीमें अर्थ लिखो—अरित्रेण, अरातै:, यूथे, ऊपरेषु, उपधाने, क्रन्दितै:, दुकूलानाम्, रशनाभ्याम्, उपकरणम्, शिञ्जितेन।

नाम-प्रकरण—२

सर्वनाम

हिन्दीमें एक वाक्य है—मोहन चला गया है, वह फिर न आयेगा, परन्तु उसकी पुस्तकें यहीं पड़ी हैं। इस वाक्यमें वह और उसकी दो पद हैं। इन दोनोंसे बोध होता है 'मोहन' का, अर्थात् मोहन फिर न आयेगा, मोहन की पुस्तकें यहीं पड़ी हैं। यदि ऊपर के वाक्य को इस प्रकार बोला जाय—मोहन चला गया है, मोहन फिर न आयगा, परन्तु मोहन की पुस्तकें यहीं पड़ी हैं। तो यह भद्दा लगेगा। इसलिए किसी एक संज्ञा शब्दको यदि दोहराना पड़े तो उसके स्थानपर उपयुक्त सर्वनाम शब्द रख देते हैं।

यही वाक्य संस्कृतमें इस प्रकार बोला जायगा। मोहन: गत:, स: पुन: न आगमिष्यति, परं तस्य पुस्तकानि अत्रैव वर्तन्ते।

इस वाक्यमें स: और तस्य सर्वनाम हैं।

६५—किसी वाक्यमें किसी संज्ञा-शब्दको दोबारा या बारम्बार न कह कर उसके स्थानपर उसी अर्थको प्रकट करनेके लिए जो पद रक्खा जाता है, उसे *सर्वनाम* कहते हैं।

सर्वनामोंकी कुल संख्या पैंतीस* हैं, किन्तु उनमें मुख्य सर्वनाम ये हैं—सर्व, तद्, एतद्, यद्, किम्, इदम्, अदस्, युष्मद्, अस्मद्।

सर्वनामोंके रूप तीनों लिंगोंमें होते हैं—

विभक्तियाँ

पुंलिंग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स:	औ	इ
द्वितीया	म्	औ	न्

तृतीया	इन	भ्याम्	ऐस्
चतुर्थी	स्मै	,,	भ्यस्
पञ्चमी	स्मात्	,,	,,
षष्ठी	स्य	ओस्	इषाम्
सप्तमी	स्मिन्	,,	षु

सर्वनामोंके सम्बोधन-रूप नहीं होते।

स्त्रीलिंग

प्रथमा	०	इ	अस्
द्वितीया	म	,,	,,
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	स्यै	,,	भ्यस्
पञ्चमी	स्यास्	,,	,,
षष्ठी	,,	ओस्	साम्
सप्तमी	स्याम्	,,	सु

नपुंसकलिंग

प्र० द्वि०	म्	इ	आनि	शेष पुंवत्

पुंलिङ्ग

प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	,,	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः

* पैंतीस सर्वनाम—सर्व (सब), विश्व (सब), उभ (दोनों), उभय (दोनों), कतर (दोनोंमें से कौन), कतम (बहुतोंमें से कौन), अन्य (दूसरा), अन्यतर (दो में से एक), इतर (दूसरा), त्वत् (दूसरा), त्व (दूसरा), नेम (आधा), सम (सब), सिम (सारा), पूर्व (पूर्व दिशावाचक, पहला), पर (अगला), अवर (पश्चिम दिशावाचक, पहला), दक्षिण (दक्षिण दिशावाचक, दायाँ), उत्तर (उत्तर-दिशावाचक, बायाँ), अपर (दूसरा), अधर (निचला), स्व (अपना), अन्तर (बाहर का), त्य (वह), तद् (वह), यद् (जो), एतद् (यह), इदम् (यह), अदस् (वह), एक (एक), द्वि (दो), युष्मद् (तुम), अस्मद् (हम), भवत् (आप), किम् (क्या)।

चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	,,	,,
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	,,	,,
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	,,	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	,,
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	,,	सर्वासु

नपुंसकलिंग

नपुंसकमें सर्वके रूप प्रथमा और द्वितीयामें फलकी तरह और शेष विभक्तियोंमें पुंलिंगकी तरह होंगे ।

प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	,,	,,	,,
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	,,	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	,,	सर्वेषु

पूर्व

पूर्व के रूप पुंलिंगमें सर्व की तरह होते हैं, केवल प्रथमा-बहुवचन, पञ्चमी-एकवचन और सप्तमी-एकवचनमें इसके दो दो रूप होते हैं, एक सर्वकी तरह और दूसरा रामकी तरह ।

प्रथमा-बहुवचन—पूर्वे-पूर्वाः ।

पञ्चमी-एकवचन—पूर्वस्मात्-पूर्वात् । सप्तमी-एकवचन—पूर्वस्मिन्-पूर्वे ।

स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्गमें पूर्वके रूप सर्वकी तरह होंगे।

तद्, एतद्, यद्, इनके द् नहीं रहते, अर्थात् त, एत, य, बन जाते हैं। फिर इनके रूप तीनों लिङ्गोंमें सर्व की तरह होंगे। त और एत के तको प्रथमाके एकवचन में स हो जायगा, परन्तु नपुंसक-लिङ्गके प्रथमा और द्वितीयाके एकवचन में इनके मूलरूप, अर्थात् तद्, एतद्, यद् ही रहते हैं।

तद्

पुंलिङ्ग

प्रथमा	सः	तौ	ते
द्वितीया	तम्	,,	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	,,	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	,,	,,
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	,,	तेषु

स्त्रीलिङ्ग

प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	,,	,,
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	,,	,,
पञ्चमी	तस्याः	,,	,,
षष्ठी	,,	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	,,	तासु

नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा द्वि०	तद्	ते	तानि

शेष पुंलिङ्गकी तरह

एतद्

पुंलिंग

प्रथमा	एषः	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्-एनम्	एतौ-एनौ	एतान्-एनान्
तृतीया	एतेन-एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	,,	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात्	,,	,,
षष्ठी	एतस्य	एतयोः-एनयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	,,	एतेषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	एषा	एते	एताः
द्वितीया	एताम्-एनाम्	एते-एने	एताः-एनाः
तृतीया	एतया-एनया	एताभ्याम्	एताभिः
चतुर्थी	एतस्यै	,,	एताभ्यः
पञ्चमी	एतस्याः	,,	,,
षष्ठी	एतस्याः	एतयोः-एनयोः	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	,, ,,	एतासु

इदम् और एतद् के एन वाले रूप पुनरुक्ति में आते हैं।

जैसे—एतेम व्याकरणमधीतमेनं छन्दोऽध्यापय।

नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा	एतद्	एते	एतानि

शेष पुंलिङ्ग की तरह।

यद्

पुंलिंग

प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	,,	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः

चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्	,,	,,
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन	,,	येषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	,,	,,
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	,,	याभ्यः
पञ्चमी	यस्याः	,,	,,
षष्ठी	,,	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	,,	यासु

नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा द्वि०	यद्	ये	यानि

शेष रूप पुंलिंग की तरह।

किम्

किम् को क बना कर इसके रूप तीनों लिंगोंमें सर्वकी तरह होंगे। परन्तु नपुंसकलिंगमें प्रथमा और द्वितीयाके एकवचनमें इसका मूलरूप (किम्) ही रहेगा।

पुंलिंग

प्रथमा	कः	कौ	के
द्वितीया	कम्	,,	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	,,	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	,,	,,
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	,,	केषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	का	के	काः
द्वितीया	काम्	,,	,,
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभिः
चतुर्थी	कस्यै	,,	काभ्यः
पञ्चमी	कस्याः	,,	,,
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	,,	कासु

नपुंसकलिंग

प्रथमा-द्वि० किम् के कानि। शेष रूप पुंलिंग की तरह।

इदम्

पुंलिंग में इदम् के प्रथमा-एकवचनका रूप अयम्, बनेगा। प्रथमाके द्विवचनसे द्वितीया-बहुवचन तक पांच विभक्तियोंमें इदम् का इम बनाकर इसके रूप सर्वकी तरह होंगे। तृतीया-बहुवचनमें एभिः होगा, शेष रूपोंमें इदम् का अ बनाकर स्वरादि विभक्तियोंसे पूर्व न जोड़ देना। इदम्=अ+इन=अ+न+इन=अनेन, इदम्+ओस्=अन+ओस्=अने+ओस्=अनयोः।

स्त्रीलिङ्गमें प्रथमाके एकवचनका रूप इयम् बनेगा। प्रथमा-द्विवचन से द्वितीया–बहुवचन तक इदम् का इद, फिर इमा बनाकर उसके रूप सर्वा की तरह होंगे। शेष रूपोंमें इदम्का आ बन जाता है और स्वरादि विभक्तियोंसे पूर्व न जोड़ा जाता है। इसके रूप सर्वाकी तरह होंगे। इदम् + आ=आ + न+ आ=अने+आ=अनया। अने+ओस्=अनयोः।

नपुंसकलिङ्गमें प्रथमा और द्वितीया के एकवचनमें इसके मूल रूप इदम् ही रहेंगे। प्रथमा–द्विवचनसे द्वितीया–बहुवचन तक इम बनाकर इसके रूप ज्ञान की तरह होंगे। शेष पुंलिङ्ग की तरह होंगे।

पुंलिङ्ग

प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्-एनम्	इमौ-एनौ	इमान्-एनान्
तृतीया	अनेन-एनेन	आभ्याम्	एभिः

चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्य:
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम	एभ्य:
षष्ठी	अस्य	अनयो:-एनयो:	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	,,	एषु

स्त्रीलिङ्ग

प्रथमा	इयम्	इमे	इमा:
द्वितीया	इमाम्-एनाम्	इमे-एने	इमा:-एना:
तृतीया	अनया	आभ्याम्	आभि:
चतुर्थी	अस्यै	,,	,,
पञ्चमी	अस्या:	,,	,,
षष्ठी	,,	अनयो:-एनयो:	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	,,	आसु

नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा—द्वि० इदम् इमे इमानि। शेष रूप पुंलिङ्गकी तरह।

अदस्

पुंलिङ्ग और स्त्रीलिंगमें अदस् के प्रथमा—एकवचनके रूप 'असौ' बनते हैं और नपुंसकलिंगमें 'अद:' बनता है। अन्य वचनोंमें अदस् का अद् बनाकर उसके सब रूप तीनों लिङ्गोंमें सर्वकी तरह बना लेना, परन्तु पुंलिंगमें तृतीयाका एकवचन अदना और तृतीयाका बहुवचन अदेभि: बनाना। पुन: सब स्थानोंमें द् को म और म के साथ जुड़े हुए बहुवचनके ए को ई और अन्य ह्रस्व स्वरोंको उ और दीर्घ स्वरोंको ऊ कर देना।

जैसे—अदस् = अद्+औ=अदौ=अमौ=अमू। अद+इ=अदे=अमे=अमी। अदना (तृ० ए०)=अमना=अमुना। अदेभि:=अमेभि:=अमीभि:। अद्+स्मै=अमस्मै=अमुष्मै। अदा+स्यै=अदस्यै=अमस्यै = अमुस्यै=अमुष्यै। अद्+आनि+अदानि=अमानि=अमूनि।

पुंलिङ्ग

प्रथमा	असौ	अमू	अमी
द्वितीया	अमुम्	,,	अमून्

तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	,,	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्	,,	,,
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	,,	अमीषु

स्त्रीलिंग

प्रथमा	असौ	अमू	अमूः
द्वितीया	अमूम्	,,	,,
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
चतुर्थी	अमुष्यै	,,	अमूभ्यः
पञ्चमी	अमुष्याः	,,	,,
षष्ठी	,,	अमुयोः	अमूषाम्
सप्तमी	अमुष्याम्	,,	अमूषु

नपुंसकलिंग

अदः अमू अमूनि शेष पुंलिङ्ग की तरह।

इदम् का अर्थ है—यह (this, near, निकट)

एतद् का अर्थ है—यह (this, nearer, अधिक निकट)

अदस् का अर्थ है—वह (दूरीपर)

तद् का अर्थ है—वह (जो आंखों के सामने नहीं)

इदमस्तु सन्निकृष्टं समीपतरवर्ति चैतदो रूपम्,

अदसस्तु विप्रकृष्टं तदिति परोक्षे विजानीयात्।

युष्मद् और अस्मद् के रूप तीनों लिंगोंमें समान होते हैं।

युष्मद्

प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्-त्वा	युवाम्-वाम्	युष्मान्-वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्-ते	युवाभ्याम्-वाम्	युष्मभ्यम्-वः
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव-ते	युवयोः-वाम्	युष्माकम्-वः

सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

अस्मद्

प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्-मा	आवाम्-नौ	अस्मान्-नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्-मे	आवाभ्याम्-नौ	अस्मभ्यम्-नः
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम-मे	आवयोः-नौ	अस्माकम्-नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् के त्वा, वाम्, वः, ते और अस्मद् के मा, नौ, नः मे, रूप किसी वाक्य के आदि में अथवा च, वा, ह, हा, अह और एव से पहले नहीं आते।

मम इदं पुस्तकम्—शुद्ध है, परन्तु मे इदं पुस्तकम्—अशुद्ध है।
इसी तरह, तव पिता गतः—शुद्ध है, परन्तु ते पिता गतः—अशुद्ध है।

अयं मे ग्रामः—शुद्ध है। मे अयं ग्रामः—अशुद्ध है।

ईश्वरः त्वा रक्षतु—शुद्ध है। त्वा ईश्वरः रक्षतु—अशुद्ध है।

भवत् के रूप आगे दिये जायेंगे।

नपुंसकमें अन्य के प्रथमा-एकवचनका रूप अन्यत् बनता है। शेष सब सर्वनामोंके रूप तीनों लिङ्गोंमें सर्वकी तरह होंगे।

उभ शब्दके रूप केवल द्विवचनमें होते हैं और उभय के एकवचन और बहुवचनमें।

उभ (दोनों)

पुंलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
उभौ	उभे	उभे
,,	,,	,,
उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्
,,	,,	,,
,,	,,	,,

उभयो: उभयो: उभयो:

" " "

किम्के साथ चित् वा चन लगा देनेसे इसका अर्थ 'कोई' होगा। विभक्तियाँ किम् के साथ लगेंगी, चित् या चन के साथ नहीं। जैसे—क: + चित् = कश्चित् (कोई), कौ+चित्=कौचित् (कोई दो), केन+चित्=केनचित (किसी से), के+चन=केचन (कई), कस्मिन+चित् = कस्मिंश्चित् (किसी पर) इत्यादि।

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

इस दूकानदार (पण्यजीविक) के पास क्या क्या है?

उस नदीका जल गंदला (आविल, कलुष) है।

इन धीवरों (कैवर्त) की वृत्ति मछलियां हैं।

इस दरवाज़े (द्वार) का किवाड़ (कपाट) लकड़ी (काष्ठ) का और चटकनी (अर्गल) लोहे की है।

किसी नगरमें एक नाई (नापित) था।

किसी राजाका एक मन्त्री था।

इस ज़िले (मण्डल) का हाकिम (शासक) दुष्ट है।

उसकी बाईसिकल (द्विचक्रिका) का पहिया (चक्र) फटा (विदीर्ण) है।

तुम दोनोंका रंग साँवला (श्यामल) है।

यह कठोर काम इस हत्यारे (बधक) का है।

मेरा जूता (पादू, पादुक) कपड़े का बना (निर्मित) है।

इस बाग़में कई लौकियां (अलाबू) हैं।

इस बोझ उठानेवाले (भारवाह) के सिरपर क्या है?

इस आइने (मुकुर) में तुम्हारे मुखकी परछाईं (प्रतिबिम्ब) सुन्दर है।

अनुशीलनी—१५

१—सर्वनाम किसे कहते है?

२—किम् के स्त्रीलिङ्गमें प्रथमा, षष्ठी और सप्तमीके, और पुंलिङ्गमें चतुर्थी, पञ्चमी और सप्तमीके रूप चित् और चन लगाकर लिखो।

३—अस्माकम्, युष्मत्, अन्यत्, एताभ्याम्, पूर्वस्मै, केषाम्, कस्मात्, यः,

पूर्वा:, उभौ, इनके शब्द विभक्ति और वचन लिखो।

४—तद्, किम्, युष्मद्के पुंलिङ्गमें, तद्, यद्, अस्मद्के स्त्रीलिङ्गमें और इदम्, अदस् और सर्वके रूप नपुंसकलिङ्गमें लिखो।

५—राम और सर्वके रूपोंमें क्या भेद है?

६—इनमें जहाँ पर सर्वनाम-पद लग सकें, लगाओ—

रामस्य पिता दशरथ:, रामस्य माता कौशल्या, रामस्य भार्या सीता। दीनानां रक्षा अस्माकं धर्म:, दीनानां भोजनं स्वर्गप्रदम्।

७—इनमें रिक्त स्थानोंको भरो—

नगरे—नृप:। —अमात्या: अतिप्रवीणा:।—इदं पुस्तकम्।——पुस्तकं मम। तव——नाम?——नाम देवदत्त:।——छात्रेषु मोहन: पटुतम:। प्रतोल्यां—गृहम्? मोहनस्य गृहम्—प्रदेशात् दूरतरम्, पर—पाठशाला समीपतरा।

नाम-प्रकरण—३

व्यञ्जनान्त नाम

व्यञ्जनान्त (हलन्त) नामोंके आगे विभक्तियाँ मूलरूपमें ही जोड़ी जाती हैं। विभक्तियोंके मूलरूप ये हैं—

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा-सं०	स्	औ	अस्
द्वितीया	अम्	,,	,,
तृतीया	आ	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ए	,,	भ्यस्
पञ्चमी	अस्	,,	,,
षष्ठी	,,	ओस्	आम्
सप्तमी	इ	,,	सु

इन विभक्तियोंके रूप पुंलिङ्ग और स्त्रीलिङ्गमें समान ही रहते हैं, किन्तु नपुंसकलिङ्गमें केवल प्रथमा और द्वितीयाके रूप भिन्न होते हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा-द्वि०	०	ई	इ

(शेष पुंलिङ्गकी तरह)।

व्यञ्जनान्त नामोंकी विभक्तियोंमें कोई विकार नहीं होता । किन्तु इन विभक्तियोंके पूर्व अंगोंमें अनेक प्रकारके विकार होते हैं। उनके विचारसे व्यञ्जनान्त नामोंके अंगोंको तीन भागोंमें बाँटा जा सकता है।

१—ऐसे अंग जिनमें प्राय: एक ही प्रकारका विकार होता है।

२—ऐसे अंग जिनमें दो विकार होते हैं।

३—ऐसे अंग जिनमें तीन विकार होते हैं।

१—एक-विकार अंग

च्, ज्, त्, थ्, द्, न्, भ्, र्, श्, ष्, स्, ह्, ये वर्ण जिन शब्दोंके अन्तमें हों, उनमें एक प्रकारका विकार होता है।

च्—अन्त

वाच् (वाणी) स्त्रीलिंग

प्रथमा-सं०	वाक्-ग्	वाचौ	वाच:
द्वितीया	वाचम्	,,	,,
तृतीया	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भि:
चतुर्थी	वाचे	,,	वाग्भ्य:
पञ्चमी	वाच:	,,	,,
षष्ठी	वाच:	वाचो:	वाचाम्
सप्तमी	वाचि	,,	वाक्षु

अनुरूपशब्द

पयोमुच्	(पुंलिङ्ग)	बादल
त्वच्	(स्त्री०)	चमड़ी
रुच्	(स्त्री०)	चमक

ज्—अन्त

ऋत्विज् (यज्ञ करानेवाला) पुंलिङ्ग

प्रथमा-सं०	ऋत्विक्-ग्	ऋत्विजौ	ऋत्विज:
द्वितीया	ऋत्विजम्	,,	,,
तृतीया	ऋत्विजा	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भि:

चतुर्थी	ऋत्विजे	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भ्यः
पञ्चमी	ऋत्विजः	,,	,,
षष्ठी	ऋत्विजः	ऋत्विजोः	ऋत्विजाम्
सप्तमी	ऋत्विजि	,,	ऋत्विक्षु

अनुरूप शब्द

रुज्	(स्त्री०)	रोग	स्रज्	(स्त्री०)	माला
वणिज्	(पुं०)	बणियाँ	भिषज्	(पुं०)	वैद्य

अस्रृज् (लहू) नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा-द्वितीया-संबोधन	असृक्-ग्	असृजी	असृञ्जि

शेष पुंलिङ्गकी तरह।

सम्राज् (महाराज) पुंलिङ्ग

प्रथमा-सं०	सम्राट्-ड्	सम्राजौ	सम्राजः
सम्राड्भ्याम्	सम्राड्भिः	सम्राड्भ्यः	सम्राट्सु

शेष ऋत्विज् की तरह।

अनुरूप शब्द

विभ्राज्	(पुं०)	सूर्य	परिव्राज्	(पुं०)	संन्यासी
देवराज्	(पुं०)	इन्द्र	विश्वसृज्	(पुं०)	संसारस्रष्टा

त्, थ्, द्, ध्—अन्त शब्द

मरुत् (वायु) पुंलिङ्ग

प्रथमा-सं०	मरुत्-द्	मरुतौ	मरुतः
द्वितीया	मरुतम्	,,	,,
तृतीया	मरुता	मरुद्भ्याम्	मरुद्भिः
चतुर्थी	मरुते	,,	मरुद्भ्यः
पञ्चमी	मरुतः	,,	,,
षष्ठी	,,	मरुतोः	मरुताम्
सप्तमी	मरुति	,,	मरुत्सु

नपुंसकलिङ्ग

जगत् (संसार)

प्रथमा द्वि० सं०	जगत्-द्	जगती	जगन्ति

शेष पुंलिङ्ग की तरह।

अनुरूप शब्द— वियत् (आकाश)

अग्निमथ् (अरणि द्वारा आग निकालने वाला) पुंलिङ्ग

अग्निमत्-द्	अग्निमथौ	अग्निमथः	
अग्निमद्भ्याम्	अग्निमद्भिः	अग्निमद्भ्यः	अग्निमत्सु

विपद् (विपत्ति) स्त्रीलिङ्ग

प्रथमा-सं०	विपत्-द्	विपदौ	विपदः
द्वितीया	विपदम्	,,	,,
तृतीया	विपदा	विपद्भ्याम	विपद्भिः
चतुर्थी	विपदे	,,	,,
पञ्चमी	विपदः	,,	,,
षष्ठी	,,	विपदोः	विपदाम्
सप्तमी	विपदि	,,	विपत्सु

अनुरूप शब्द

मृद् (स्त्री०) मिट्टी	वेदविद् वेद जाननेवाला	सम्पद् ,, धन-दौलत
आपद् (स्त्री०) विपत्ति	तमोनुद् अन्धकारको मिटानेवाला	दृषद् ,, पत्थर
शरद् (स्त्री०) पतझड़		
प्रतिपद् (स्त्री०) पड़वा	संसद् (स्त्री०) सभा	

समिध् (हवन के लिए लकड़ी) स्त्रीलिङ्ग

प्रथमा-सं०	समित्-द्	समिधौ	समिधः
द्वितीया	समिधम्	समिधौ	समिधः
तृतीया	समिधा	समिद्भ्याम	समिद्भिः
चतुर्थी	समिधे	,,	,,
पञ्चमी	समिधः	,,	,,
षष्ठी	,,	समिधोः	समिधाम्
सप्तमी	समिधि	,,	समित्सु

अनुरूप शब्द

क्षुध् (स्त्री०) भूख । युध् (स्त्री०) युद्ध

भ्-अन्त शब्द (ककुभ्-दिशा)

ककुभ्-ब्	ककुभौ	ककुभः
ककुब्भ्याम्	ककुब्भिः	ककुप्सु

र्—अन्त शब्द-गिर् (वाणी)

प्रथमा-सं०	गीः	गिरौ	गिरः
द्वितीया	गिरम्	गिरौ	गिरः
तृतीया	गिरा	गीर्भ्याम्	गीर्भिः
चतुर्थी	गिरे	,,	गीर्भ्यः
पञ्चमी	गिरः	,,	,,
षष्ठी	गिरः	गिरोः	गिराम्
सप्तमी	गिरि	,,	गीर्षु

अनुरूप शब्द

पुर् (स्त्री०) शहर । धुर् (स्त्री०) धुरा । द्वार् (स्त्री०) द्वार

श्—अन्त शब्द

तादृश् (वैसा) पु० स्त्री०

प्रथमा-सं०	तादृक-ग्	तादृशौ	तादृशः
द्वितीया	तादृशम्	,,	,,
तृतीया	तादृशा	तादृग्याम्	तादृग्भिः
चतुर्थी	तादृशे	,,	तादृग्भ्यः
पञ्चमी	तादृशः	,,	,,
षष्ठी	,,	तादृशोः	तादृशाम्
सप्तमी	तादृशि	,,	तादृक्षु

नपुंसलिङ्ग

प्रथमा-द्वितीया-संबोधन तादृक्—ग् तादृशी तादृंशि

शेष पुंलिङ्गकी तरह ।

अनुरूप शब्द

दिश् (स्त्री०) दिशा । एतादृश् ऐसा ।
ईदृश् ऐसा । दृश् (स्त्री०) आँख ।

अपवाद—विश् (वैश्य) पुंलिङ्ग

विट्-ड् विड्भ्याम् विड्भिः विड्भ्यः विट्सु

ष्—अन्त शब्द

द्विष् (शत्रु) पुंलिङ्ग

प्रथमा-सं०	द्विट्-ड्	द्विषौ	द्विषः
द्वितीया	द्विषम्	,,	,,
तृतीया	द्विषा	द्विड्भ्याम्	द्विड्भिः
चतुर्थी	द्विषे	,,	द्विड्भ्यः
पञ्चमी	द्विषः	,,	,,
षष्ठी	,,	द्विषोः	द्विषाम्
सप्तमी	द्विषि	,,	द्विट्सु

अनुरूप शब्द

त्विष् (स्त्री०) कान्ति । प्रावृष् (स्त्री०) वर्षाऋतु

स्—अन्त शब्द

चन्द्रमस् (चन्द्रमा) पुंलिङ्ग

प्रथमा	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
संबोधन	चन्द्रमः	,,	,,
द्वितीया	चन्द्रमसम्	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
तृतीया	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभिः
चतुर्थी	चन्द्रमसे	,,	,,
पञ्चमी	चन्द्रमसः	,,	,,
षष्ठी	,,	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्
सप्तमी	चन्द्रमसि	,,	चन्द्रमस्सु-मःसु

अनुरूप शब्द

वेधस् (पुं०) ब्रह्मा	दिवौकस् ,, देवता	अप्सरस् (स्त्री०-बहु०) अप्सरा
दुर्वासस् ,, दुर्वासा ऋषि	उषस् (स्त्री०) प्रभात	वनौकस् (पुं०) वनवासी

मनस् (मन) नपुंसकलिंग

प्रथमा-द्वि०-सम्बो०	मनः	मनसी	मनांसि

शेष चन्द्रमस् की तरह।

मनस् के अनुरूप शब्द

रजस्	धूलि	यशस्	कीर्ति	अम्भस्	पानी
वासस्	वस्त्र	वर्चस्	तेज	वयस्	आयु
नभस्	आकाश	रक्षस्	राक्षस	छन्दस्	वेद
उरस्	छाती	वचस्	वचन	वक्षस्	छाती
चेतस्	चित्त	तेजस्	प्रकाश	स्रोतस्	नदी, धारा
तमस्	अन्धेरा	सरस्	तालाब	पयस्	पानी

ज्योतिस् (रोशनी) नपुंसकलिंग

प्रथमा-द्वि० सं०	ज्योतिः	ज्योतिषी	ज्योतींषि
तृतीया	ज्योतिषा	ज्योतिर्भ्याम्	ज्योतिर्भिः
चतुर्थी	ज्योतिषे	,,	ज्योतिर्भ्यः
पञ्चमी	ज्योतिषः	,,	,,
षष्ठी	,,	ज्योतिषोः	ज्योतिषाम्
सप्तमी	ज्योतिषि	,,	ज्योतिष्षु-तिःषु

अनुरूप शब्द

हविस् हवनकी सामग्री। सर्पिस् घी।

धनुस् (धनुष) नपुंसकलिंग

धनुः धनुषी धनूंषि धनुर्भ्याम् धनुष्षु-नुःषु

अनुरूप शब्द

आयुस् उम्र। चक्षुस् आँख। वपुस् शरीर।

अर्चिस् (ज्वाला) स्त्रीलिंग

प्र० सं०	अर्चिः	अर्चिषौ	अर्चिषः

द्वितीया	अर्चिषम्	अर्चिषौ	अर्चिष:

शेष ज्योतिष् की तरह।

आशिष् (आशीर्वाद) स्त्रीलिंग

आशिष्का इकार स्, भ्याम्, भिस्, भ्यस् और सु से पूर्व दीर्घ हो जाता है।

आशी: आशीर्भ्याम् आशीर्भि: आशीर्भ्य: आशीष्षु शी:षु

शेष रूप ज्योतिष् की तरह।

ह्—अन्त शब्द

दुह् (दोहने वाला) पुं० स्त्रीलिंग

९६—दुह्के ह् को क्रमसे क्, ग् और क् होता है स्, भादि विभक्तियाँ और सु परे होते, जहाँ ह् को विकार होता है वहाँ साथ ही द् को ध् हो जाता है।

प्रथमा-सं०	धुक्-ग्	दुहौ	दुह:
द्वितीया	दुहम्	,,	,,
तृतीया	दुहा	धुग्भ्याम्	धुग्भि:
चतुर्थी	दुहे	,,	धुग्भ्य:
पञ्चमी	दुह:	,,	,,
षष्ठी	,,	दुहो:	दुहाम्
सप्तमी	दुहि	,,	धुक्षु

मधुलिह् (शहद की मक्खी)

मधुलिट्-ड् मधुलिड्भ्याम् मधुलिड्भि: मधुलिड्भ्य: मधुलिट्सु।

शेष रूप दुह् की तरह।

उपानह् (जूता) स्त्री०

उपानत्-द् उपानद्भ्याम् उपानद्भि: उपानद्भ्य: उपानत्सु

शेष रूप दुह् की तरह।

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

शीतऋतुमें जाँदकी रोशनी रातमें ऐसी शीत होती है कि कभी	कभी शरीर कांपने लगता है। गरमिओंमें सूर्यका प्रकाश

दिन में ऐसा तेज़ होता है कि शरीरसे पसीना (स्वेद) निकल आता है।

मेरे जूते तिलई काम (सुवर्ण-सूत्र भूषा) से जैसे चमक रहे हैं वैसे तुम्हारे नहीं।

रामके धनुषकी आवाज़से (टङ्कार) शत्रुओंके दिल कांपते थे।

वाणीकी मिठास (माधुर्य) के आगे और सबकी मिठास फीकी (नीरस) है।

जिसके पास यह रहती है, उसका संसारमें कोई भी शत्रु नहीं होता।

चाहे (यद्यपि) देवतोंने अप्सराओंके द्वारा दुर्वासाका तप तोड़ना चाहा तो भी वे उसका कुछ भी बिगाड़नेमें समर्थ न हुए, क्योंकि ऋषि चट्टान (शिला) की तरह दृढ़ रहा।

यह दूध कोसा (कोष्ण, कदुष्ण, कवोष्ण) है, मेरा स्वभाव गर्म दूध पीनेका है।

इस बाग़में जैसे सुन्दर फूल हैं वैसे और किसीमें नहीं। इनपर भँवरे सदा गूँजते रहते हैं (ध्वन्)।

बादल बरसनेके बाद जब आकाश स्वच्छ हो गया तो ऐसी ठंडी हवा चलने लगी कि हाथ और पैर बरफ़ की तरह ठंडे (हिमशीत) हो गये।

प्राचीन कालमें (पुरा) आग जलानेकी ऐसी सुविधा न थी जैसे अब है, क्योंकि (यतः) उस समय दो लकड़ियोंकी रगड़ (घर्षण) से आग निकलती थी।

अनुशीलनी—१६

१—कुछ ऐसे व्यञ्जनान्त शब्द बताओ, जिनके रूपोंमें केवल एक ही तरहका विकार होता हो।

२—इन शब्दोंके रूप सब विभक्तियोंमें लिखो—

ऋत्विज्, पुर्, मधुलिह्, विश्वसृज्।

३—(क) इनके रूप प्रथमा, तृतीया और पञ्चमी में लिखो।

द्विष्, चन्द्रमस्, विश्।

(ख) इनके रूप द्वितीया, चतुर्थी और सप्तमीमें लिखो—

असृज्, मरुत्, वाच्, समिध्।

नाम-प्रकरण—४

व्यञ्जनान्त नाम—द्विविकार-अङ्ग

जिन शब्दोंके अन्तमें अत्, स्यत्, वत्, मत्, इन, विन्, मिन, यस् हों उनमें दो विकार होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

उपरोक्त सब शब्दोंके अन्तमें ई लगा देनेसे उनके स्त्रीलिङ्ग रूप बन जाते हैं। यथा—बलवती, बुद्धिमती, गुणिनी, मनस्विनी, भूयसी, श्रेयसी। इनकी रूपावलि नदी की तरह होगी।

नपुंसकलिङ्ग

कुछ अत्-अन्त शब्दोंके त् से पूर्व न् लग जाता है। देखो नियम (स्त्रीप्रत्ययमें)। जैसे—गच्छत्—गच्छन्ती, तुदती—तुदन्ती, नश्यन्ती।

वत् तथा मत्-अन्त शब्दोंके रूप नपुंसकलिङ्गमें जगत् की तरह होंगे।

अत्-अन्त शब्दोंके रूप भी नपुंसकमें साधारणतः जगत् की तरह होंगे, किन्तु उनमें जगत् से कुछ भेद होगा।

भ्वादि, दिवादि और चुरादिगण के धातुओंसे बने हुए अत-अन्त शब्दोंकी प्रथमा तथा द्वितीयाके द्विवचनमें अन्तिम त् से पहले न् अवश्य जोड़ा जाता है। तुदादिगणके और अदादिगणके केवल आकारान्त धातुओंसे बने हुए अत्-अन्त शब्दोंमें न् विकल्पसे जोड़ा जाता है, और शेष गणोंके धातुओंसे बने हुओंमें नहीं जोड़ा जाता।

गच्छत्	गच्छन्ती	गच्छन्ति
दीव्यत्	दीव्यन्ती	दीव्यन्ति
तुदत्	तुदती-तुदन्ती	तुदन्ति
यात्	याती-यान्ती	यान्ति
कुर्वत्	कुर्वती	कुर्वन्ति
अदत्	अदती	अदन्ति

यस्-अन्त शब्दोंके रूप नपुंसकलिङ्गमें मनस् की तरह होंगे। जैसे—श्रेयः श्रेयसी श्रेयांसि इत्यादि।

गच्छत् पुं० (जाता हुआ)

प्रथमा सं०	गच्छन्	गच्छन्तौ	गच्छन्त:
द्वितीया	गच्छन्तम्	,,	गच्छत:
तृतीया	गच्छता	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भि:
चतुर्थी	गच्छते	,,	,,
पञ्चमी	गच्छत:	,,	,,
षष्ठी	,,	गच्छतो:	गच्छताम्
सप्तमी	गच्छति	,,	गच्छत्सु

स्त्रीलिङ्ग गच्छन्ती, इसके रूप नदीवत्।

नपुंसकलिङ्ग

गच्छत् गच्छन्ती गच्छन्ति शेष पुंवत्।

अनुरूप शब्द

पिबत् (पीता हुआ)	नश्यत् (नष्ट होता हुआ)	दीव्यत् (चमकता हुआ)
भवत् (होता हुआ)	अदत् (खाता हुआ)	तुदत् (दु:ख देता हुआ)
सत् (होता हुआ)	चोरयत् (चुराता हुआ)	जानत् (जानता हुआ)
कुर्वत् (करता हुआ)	शृण्वत् (सुनता हुआ)	

(इनमें जिन शब्दोंके रूप इ (नपुंसकमें प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनमें) और ई (स्त्री प्रत्यय) से पूर्व भिन्न बनते हैं, उनके विषयमें पीछे कहा जा चुका है।)

ददत् (देता हुआ)

पुंलिङ्ग	ददत्	ददतौ	ददत:	मरुत्की तरह
स्त्रीलिङ्ग	ददती, इसके रूप		नदी की तरह	
नपुंसक	ददत्	ददती	ददति-न्ति।	

अनुरूप शब्द

बिभ्यत् डरता हुआ। जाग्रत् जागता हुआ। बिभ्रत् धारण करता हुआ।

गुणवत् (गुणवान्)

गुणवान् गुणवन्तौ गुणवन्त: इत्यादि शेष गच्छत्की तरह।

स्त्रीलिङ्ग गुणवती नदी की तरह

नपुंसकलिङ्ग—गुणवत् गुणवती गच्छत् की तरह

अनुरूप शब्द

धीमत्	बुद्धिमान्	धनवत्	धनवान्	लज्जावत्	शर्मवाला
विवस्वत्	सूर्य	भास्वत्	सूर्य	कीर्तिमत्	यशवाला

इन्, विन्, मिन्-अन्त

धनिन् (धनवान)

प्रथमा	धनी	धनिनौ	धनिनः
संबोधन	धनिन्	,,	,,
द्वितीया	धनिनम्	,,	,,
तृतीया	धनिना	धनिभ्याम्	धनिभिः
चतुर्थी	धनिने	,,	धनिभ्यः
पञ्चमी	धनिनः	,,	,,
षष्ठी	,,	धनिनोः	धनिनाम्
सप्तमी	धनिनि	,,	धनिषु

स्त्रीलिङ्ग—धनिनी, नदीवत्

नपुंसकलिङ्ग

धनि धनिनी धनीनि शेष पुंवत्

मनस्विन् (दिलेर)

मनस्वी मनस्विनौ मनस्विनः

इत्यादि धनिन् की तरह।

स्त्रीलिङ्ग—मनस्विनी

नपुंसकलिङ्ग—मनस्वि मनस्विनी मनस्वीनि

अनुरूप शब्द

भाविन्	होनेवाला	तपस्विन्	योगी	रोगिन्	बीमार
यशस्विन्	यशवाला	वाग्मिन्	सुवक्ता	विद्यार्थिन्	छात्र
अर्थिन्	याचक	दण्डिन्	संन्यासी	तेजस्विन्	तेजवाला
पापिन्	पापी	करिन्	हाथी	गुणिन्	गुणवान्
पक्षिन्	पक्षी	ग्रामिन्	ग्रामीण	शूलिन्	महादेव

मन्त्रिन्	वजीर	हस्तिन्	हाथी	स्वामिन्	मालिक
वाजिन्	घोड़ा	वैरिन्	शत्रु	शशिन्	चन्द्र

श्रेयस् (उत्तम) पुंलिङ्ग

प्रथमा	श्रेयान्	श्रेयांसौ	श्रेयांसः
संबोधन	श्रेयन्	,,	,,
द्वितीया	श्रेयांसम्	श्रेयांसौ	श्रेयसः
तृतीया	श्रेयसा	श्रेयोभ्याम्	श्रेयोभिः
चतुर्थी	श्रेयसे	,,	श्रेयोभ्यः
पञ्चमी	श्रेयसः	,,	,,
षष्ठी	,,	श्रेयसोः	श्रेयसाम्
सप्तमी	श्रेयसि	,,	श्रेयस्सु

स्त्रीलिङ्ग—श्रेयसी

नपुंसकलिङ्ग श्रेयः श्रेयसी श्रेयांसि शेष मनस् की तरह ।

अनुरूपशब्द

भूयस्	बहुत	अल्पीयस्	थोड़ा	महीयस्	बड़ा
गरीयस्	भारी	दवीयस्	दूर	नेदीयस्	नजदीक

प्रथमा-सं०	द्यौः	दिवौ	दिवः
द्वितीया	दिवम्-द्याम्	,,	,,
तृतीया	दिवा	द्युभ्याम्	द्युभिः
चतुर्थी	दिवे	द्युभ्याम्	द्युभ्यः
पञ्चमी	दिवः	,,	,,
षष्ठी	,,	दिवोः	दिवाम्
सप्तमी	दिवि	,,	द्युषु

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

भागते भागते मेरा पांव जब फिसल गया (स्खल्) तो मैं खाड़ी में जा गिरा और अब भी सारे शरीरमें दर्द (पीड़ा), हो रहा है।

कद्र (आदर) संसार में गुणोंकी होती है, क्योंकि गुणवानों का जितना (यावत्) आदर होता है उतना (तावत्) धनवानोंका नहीं ।

रोगीको पथ्यसेवन जितना गुणकारी होता है उतना औषधके सेवनसे नहीं होता।

इस जलसेमें बुद्धिमान् और गुणवान् लोगोंकी संख्या उससे कम थी जितनी उसमें थी जो पिछले रविवारको हुआ था।

पापी लोग जो पाप करते हैं उनके कारण उनके चित्तोंको कभी शान्ति नहीं होती।

वसन्त ऋतुमें वृक्ष हरे हो जाते हैं। उनमें फूल निकलने लग जाते हैं और पक्षिओंकी चहचहाट (कूजन) से बाग गूंजते (ध्वनित, मुखरित) रहते हैं।

रामने रावणके हृदयमें भाले (कुन्त) से इतने ज़ोरसे चोट (प्रहार) की कि उसके लगते ही वह बेहोश (निस्संज्ञ) हो गया।

सांपके फण (फण, स्फट) में विष (विष, गरल) होता है और दुर्जनके हृदयमें, पर दुर्जनके हृदयका विष फणके विषसे भयंकर होता है।

ब्रह्मचारी और सन्यासीको तेल मलना (मर्दन), इत्र (सुवास) लगाना, कंघी (कङ्कतिका, प्रसाधनी) से बाल संवारना (संस्करण) मना है।

यह किसान अपने हल (हल, सीरक) को कंधेपर उठाये (नयत्) ऐसी कड़ी भूमिपर भी नंगे पांवोंसे खेतको जा रहा है।

अनुशीलनी—१७

१—इनके शब्द, विभक्ति और वचन बताओ—

गच्छन्ति, भास्वन्तः, धनिनः, श्रेयांसौ, दिवः, गुणिनाम्।

२—इनके रूप सब विभक्तियोंमें लिखो—पक्षिन्, दिव्, मनस्विन्।

३—इन सात शब्दोंके क्रमशः सात विभक्तियोंमें रूप लिखो—

पतत्, भूयस्, वाग्मिन्, गुणवत्, ददत्, दिव्, गुणिन्।

नाम-प्रकरण—५

व्यञ्जनान्त नाम

३—त्रिविकार-अङ्ग

जिन व्यञ्जनान्त नामोंके अङ्गोंमें तीन विकार होते हैं, उनमें एक प्रकार

का विकार पहली पाँच (सर्वनामस्थान) विभक्तियोंसे पूर्व, दूसरे प्रकारका असर्वनामस्थान अजादि (स्वरादि) विभक्तियोंसे पूर्व और तीसरे प्रकारका असर्वनामस्थान हलादि विभक्तियोंसे पूर्व होता है।

सर्वनामस्थान विभक्तियाँ—स्, औ, अस्, अम्, औ।

असर्वनामस्थान अजादि विभक्तियाँ—अस्, आ, ए, अस्, अस्, ओस्, आम्, इ, ओस्।

,, हलादि विभक्तियाँ—भ्याम्, भिस्, भ्यस्, सु।

जिन शब्दोंके अन्तमें अन्, वन्, वस् हों उनमें और अहन्, पथिन्, पुमस्—शब्दोंमें तीन विकार होते हैं।

राजन् (राजा) पुंलिङ्ग

प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
सम्बोधन	राजन्	,,	,,
द्वितीया	राजानम्	,,	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	,,	राजभ्यः
पंचमी	राज्ञः	,,	,,
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि	,,	राजसु

लघिमन् (छोटापन)

प्रथमा	लघिमा	लघिमानौ	लघिमानः
द्वितीया	लघिमानम्	लघिमानौ	लघिम्नः
तृतीया	लघिम्ना	लघिमभ्याम्	लघिमभिः इत्यादि

अनुरूपशब्द

गरिमन्	बड़ाई	ग्रावन्	पत्थर	मूर्धन्	सिर
पीवन्	मोटा	सीमन्	हद	तक्षन्	बढ़ई

नामन् (नाम) नपुंसकलिङ्ग

प्रथमा-द्वि०	नाम	नामनी-नाम्नी	नामानि
सम्बोधन	नाम-नामन्	,,	,,

तृतीया	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः इत्यादि

अनुरूप शब्द

प्रेमन्	प्यार	व्योमन्	आकाश	सामन्	साम वेद
नर्मन	नम्रता	धामन्	घर		

आत्मन् (आत्मा) पुंलिङ्ग

प्रथमा	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
सम्बोधन	आत्मन्	,,	,,
द्वितीया	आत्मानम्	,,	आत्मनः
तृतीया	आत्मना	आत्मभ्याम	आत्मभिः
चतुर्थी	आत्मने	,,	आत्मभ्यः
पंचमी	आत्मनः	,,	,,
षष्ठी	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
सप्तमी	आत्मनि	,,	आत्मसु

अनुरूप शब्द

ब्रह्मन्	ब्रह्मा	अश्मन्	पत्थर	अध्वन्	मार्ग
सुशर्मन	एक राजाका नाम	यज्वन्	यज्ञ करने वाला		

कर्मन (काम) नपुंसकलिंग

प्रथमा-द्वि०	कर्म	कर्मणी	कर्माणि
संबोधन	कर्म-कर्मन्	,,	,,
तृतीया	कर्मणा	कर्मभ्याम्	कर्मभिः इत्यादि

अनुरूप शब्द

जन्मन्	उत्पत्ति	वर्मन्	कवच	वेश्मन्	घर
छद्मन्	छल	पर्वन्	गाँठ, जोड़	चर्मन्	खाल

युवन् (जवान पुरुष)

प्रथमा	युवा	युवानौ	युवानः
संबोधन	युवन्	,,	,,
द्वितीया	युवानम्	,,	यूनः
तृतीया	यूना	युवभ्याम्	युवभिः

चतुर्थी	यूने	,,	युवभ्यः
पंचमी	यूनः	,,	,,
षष्ठी	,,	यूनोः	यूनाम्
सप्तमी	यूनि	,,	युवसु

स्त्रीलिंग-युवतिः, मतिवत्, यूनी, नदीवत्

श्वन् (कुत्ता)

प्रथमा	श्वा	श्वानौ	श्वानः
संबोधन	श्वन्	,,	,,
द्वितीया	श्वानम्	,,	शुनः
तृतीया	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
चतुर्थी	शुने	,,	,,
पंचमी	शुनः	,,	,,
षष्ठी	,,	शुनोः	शुनाम्
सप्तमी	शुनि	,,	श्वसु

स्त्रीलिंग—शुनी, नदीवत्

अहन् (दिन) नपुंसकलिंग

९७—अहन् के न् को स् और सु विभक्तियोंसे पूर्व : (विसर्ग) और भ्-आदि विभक्तियोंसे पूर्व ओ हो जाता है। शेष रूप नामन् की तरह होंगे।

प्रथमा-सं०, द्वि०	अहः	अह्नी-अहनी	अह्नानि
तृतीया	अह्ना	अहोभ्याम्	अहोभिः
चतुर्थी	अह्ने	,,	अहोभ्यः
पंचमी	अह्नः	,,	,,
षष्ठी	,,	अह्नोः	अह्नाम्
सप्तमी	अह्नि	,,	अहःसु

पथिन् (मार्ग)

९८—सर्वनामस्थान विभक्तियोंसे पूर्व पथिन् को पन्थान् (प्र० एकवचनमें पन्थाः) और असर्वनामस्थान अजादि विभक्तियों से पूर्व पथ् हो जायगा।

प्रथमा-सं०	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
द्वितीया	पन्थानम्	,,	पथः
तृतीया	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
चतुर्थी	पथे	,,	पथिभ्यः
पंचमी	पथः	,,	,,
षष्ठी	,,	पथोः	पथाम्
सप्तमी	पथि	पथोः	पथिषु

विद्वस् (विद्वान् पुरुष)

सर्वनामस्थान विभक्तियोंमें विद्वस् के रूप श्रेयस् की तरह होंगे। असर्वनाम स्थान अजादि विभक्तियोंसे पूर्व विद्वस् को विदुष् हो जाता है, और सर्वनामस्थान-हलादि विभक्तियोंसे पूर्व विद्वस् के स् को द् हो जाता है।

प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
संबोधन	विद्वन्	,,	,,
द्वितीया	विद्वांसम्	,,	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	,,	विद्वद्भ्यः
पंचमी	विदुषः	,,	,,
षष्ठी	,,	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	,,	विद्वत्सु

६६—सर्वनामस्थान विभक्तियोंसे पूर्व पुमस् के स् से पूर्व आन् जोड़ा जाता है और हलादि विभक्तियोंसे पूर्व अन्तिम स् का लोप हो जाता है। जैसे—पुमस् + स् = पुमान् + स् + पुमान्। पुमस् = औ = पुमान् + स् + औ = पुमांसौ। पुमस् + भ्याम् = पुंभ्याम्।

प्रथमा	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः
संबोधन	पुमन्	,,	,,
द्वितीया	पुमांसम्	,,	पुंसः
तृतीया	पुंसा	पुंभ्याम्	पुंभिः
चतुर्थी	पुंसे	पुंभ्याम्	पुंभ्यः

पंचमी	पुंस:	पुंभ्याम	पुंभ्य:
षष्ठी	पुंस:	पुंसा:	पुंसाम्
सप्तमी	पुंसि	,,	पुंसु

अप्—(पानी) स्त्रीलिंग

प्रथमा-सं०	आप:	पञ्चमी	अद्भ्य:
द्वितीया	अप:	षष्ठी	अपाम्
तृतीया	अद्भि:	सप्तमी	अप्सु
चतुर्थी	अद्भ्य:		

इनका अनुवाद संस्कृत में करो—

विद्वानोंकी सभामें मूर्ख इस तरह (एवम्) नहीं अच्छे लगते (शुभ्) जैसे हंसोंके बीचमें कौवे।

गीदड़ और कुत्ता दोनों एकही जातिके पशु हैं, दोनोंका रंग रूप (आकृति) भी एकसा (सम) होता है, पर गीदड़ कुत्तेसे बहुत चालाक होता है।

अगले (आगामिन) सप्ताहके बुधवारके दिन मेरे इमतिहानका नतीजा (परिणाम) निकलेगा (प्रकाश्)।

इस सभामें जिसके सिरपर पीले रंगकी पाग है और जो सबसे ऊंचे आसनपर बैठा है, वही श्रीमान् देवराज, इस सभाका प्रधान है।

इस संसारमें कर्मोंकी प्रधानता है, जिसके अच्छे या बुरे कर्म होते हैं उसे उसी तरहका अच्छा या बुरा फल मिलता है।

कई विद्वानोंकी जीभ (जिह्वा, रसना) में ऐसी शक्ति होती है कि उससे निकला हुआ हर शब्द जादूका असर करता है, और उसके सुनने वाले उसपर लट्टू (मुग्ध) हो जाते हैं।

इस दरज़ी (तुन्नवाय) के पास लोगोंके सीनेके लिए इतने कपड़े हैं कि उनकी हद नहीं।

वह हर एक कपड़ेकी लंबाई (आयाम) और चौड़ाई (परिणाह) मापकर उसे कैंची (कर्तनी) से काटता है, फिर जंपर (चलडातक) या अंगरखा (अंगरक्ष) सीता है (सीव्)।

जब किसी देशपर विपत्ति आती है तो उस देशके रहने वाले

जवानोंकी जवानीकी परख (परीक्षा) होती है।

सभामें हर प्रकारके लोग होते हैं, बड़े और छोटेभी. पर बोलनेसे पहले मनुष्यको अपनी बड़ाई या छुटाईका विचार कर लेना चाहिए।

अनुशीलनी

१—विद्वस् , अप् , अहन् , कर्मन् , राजन् , श्वन्—इनके रूप सब विभक्तियोंमें लिखो।

२—इन वाक्योंमें जिन शब्दोंके साथ विभक्तियाँ नहीं लगी हैं, उनमें उन्हें लगाकर वाक्य पूर्ण करो—

इह कृतानां कर्म फल अमुत्राधिगच्छन्ति जना: । जगत् अनेक जना: प्रतिदिनम् उत्पद्यन्ते म्रियन्ते च । अप् गात्राणि शुध्यन्ति । भवत: वृत्तं श्रुत्वा मम मनस् महत् व्यथा उत्पन्ना । पथिन् चलन्तौ द्वौ पान्थ अस्मद् दृष्टौ ।

३—हलन्त शब्दोंके आगे कौन कौन विभक्तियां आती हैं?

संख्यावाचक विशेषण (Numeral Adjectives)

१००—जिन शब्दोंसे किसी प्राणी या पदार्थकी संख्याका बोध हो, उन्हें संख्यावाचक शब्द कहते हैं।

जैसे—पञ्च गजा:, नव कमलानि, दश माला: ।

संख्यावाचक विशेषण दो प्रकार के हैं—संख्यावाचक (Cardinals) और पूरण (Ordinals) ।

Cardinals

१—एक	६—षष्	२०—विंशति	७०—सप्तति
२—द्वि	७—सप्तन्	३०—त्रिंशत्	८०—अशीति
३—त्रि	८—अष्टन्	४०—चत्वारिंशत्	९०—नवति
४—चतुर्	९—नवन्	५०—पञ्चाशत्	१००—शत
५—पञ्चन्	१०—दशन्	६०—षष्टि	१०००—सहस्र

१०१—संस्कृतमें संख्यावाचक समस्त शब्द (जब किसी दशकके साथ छोटी संख्या एक-आदिका जोड़ हो) दशकसे पूर्व एक आदि (एकसे नव तक) संख्याके जोड़नेसे बनते हैं।

जैसे—चतुर्दश, द्विचत्वारिंशत्, अष्टषष्टि आदि। हिन्दीमें भी ऐसी ही प्रक्रिया चलती है। जैसे—तेतीस (तीन-तीस), चौबीस (चार-बीस) आदि। अंग्रेजीमें इसके विपरीत होता है। वहां पर दशक पहले होता है। जैसे—twenty-four, eighty-seven.

१०२—(क) दशन्से पूर्व एकको एका होजाता है। एकादश।

(ख) (१) दशन्, विंशति और त्रिंशत्से पूर्व द्वि को द्वा, त्रि को त्रयः और अष्टन्को अष्टा हो जाता है।

जैसे—द्वादश, त्रयोदश, अष्टादश, द्वाविंशतिः, त्रयोविंशतिः, अष्टाशीतिः, द्वात्रिंशत्, त्रयस्त्रिंशत्, अष्टात्रिंशत्।

(२) चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्, षष्टि, सप्तति, नवति से पूर्व द्वि को द्वा, त्रि को त्रयः, अष्टन् को अष्टा विकल्प से होंगे।

जैसे—द्विचत्वारिंशत्-द्वाचत्वारिंशत्, त्रिषष्टि-त्रयःषष्टिः, अष्टसप्ततिः-अष्टासप्ततिः।

(३) अशीति से पूर्व द्वि आदिमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

जैसे—द्वि+अशीति=द्व्यशीतिः, त्र्यशीतिः, अष्टाशीतिः।

(ग) दशन्-आदिसे पूर्व न्-अन्त (पञ्चन्-आदि) शब्दों के न् का लोप हो जाता है।

पञ्चन् + दश=पञ्चदश, सप्तविंशतिः, नवत्रिंशत्, अष्टपञ्चाशत्।

(ङ) षष् के ष् को ट् हो जाता है यदि परे अघोष वर्ण हो या कुछ न हो और ड् हो जाता है, यदि परे कोई घोष वर्ण हो।

जैसे—षट्, षड्विंशतिः, षडशीतिः, षट्त्रिंशत्, षट्चत्वारिंशत्,

षट्पञ्चाशत्, षट्षष्टिः, षट्सप्ततिः।

अपवाद—षष् + दश=षोडश, षष् +नवतिः=षण्णवतिः।

एक के रूप एकवचनमें और बहुवचनमें*, द्वि के द्विवचनमें और त्रि से लेकर नवदशन् पर्यन्त शब्दोंके रूप बहुवचनमें होंगे।

एक द्वि, त्रि और चतुर् के रूप तीनों लिंगोंमें अलग अलग होते हैं और शेष शब्दोंके तीनों लिंगोंमें समान ही होते हैं।

(एक के रूप सर्वनामोंकी तरह होते हैं)।

	पु०	स्त्री०	नपुं०
प्रथमा	एकः	एका	एकम्
द्वितीया	एकम्	एकाम्	,,
तृतीया	एकेन	एकया	एकेन
चतुर्थी	एकस्मै	एकस्यै	एकस्मै
पञ्चमी	एकस्मात्	एकस्याः	एकस्मात्
षष्ठी	एकस्य	,,	एकस्य
सप्तमी	एकस्मिन्	एकस्याम्	एकस्मिन्

द्वि

(द्वि को द्व बना कर उसकी रूपसिद्धि करना)।

प्रथमा	द्वौ	द्वे	द्वे
द्वितीया	द्वौ	,,	,,
तृतीया	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
चतुर्थी	,,	,,	,,
पञ्चमी	,,	,,	,,
षष्ठी	द्वयोः	द्वयोः	द्वयोः
सप्तमी	,,	,,	,,

त्रि के रूप पुलिंगमें कवि की तरह होते हैं। परन्तु षष्ठीके बहुवचनमें इसका

---

* बहुवचनमें एक शब्दका अर्थ कुछ (some) है। जैसे—एके वदन्ति। अर्थात्—केचित् वदन्ति।

रूप 'त्रयाणाम्' बनता है। स्त्रीलिंगमें त्रि को तिसृ हो जाता है। नपुंसकलिंगमें इसके रूप वारिकी तरह होते हैं। नाम्-अन्त रूप त्रयाणाम् होता है।

	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्रथमा	त्रयः	तिस्रः	त्रीणि
द्वितीया	त्रीन्	तिस्रः	,,
तृतीया	त्रिभिः	तिसृभिः	त्रिभिः
चतुर्थी	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः
पञ्चमी	,,	,,	,,
षष्ठी	त्रयाणाम्	तिसृणाम्	त्रयाणाम्
सप्तमी	त्रिषु	तिसृषु	त्रिषु

चतुर्

१०३—पुंलिंगमें *अस्* और नपुंसकलिंगमें *इ* (प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन) से पूर्व चतुर् के र् से पहले *आ* जोड़ा जाता है। जैसे—चतुर् + अस् = चतुआर् + अस् = चत्वारः। चतुर् + इ = चतु + आर् + इ = चत्वारि।

स्त्रीलिंगमें चतुर् को चतसृ हो जाता है।

	पुंलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
प्रथमा	चत्वारः	चतस्रः	चत्वारि
द्वितीया	चतुरः	,,	,,
तृतीया	चतुर्भिः	चतसृभिः	चतुर्भिः
चतुर्थी	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
पञ्चमी	,,	,,	,,
षष्ठी	चतुर्णाम्	चतसृणाम्	चतुर्णाम्
सप्तमी	चतुर्षु	चतसृषु	चतुर्षु

१०४—न्-अन्त शब्दोंके न् का विभक्तिसे पूर्व लोप हो जाता है।

	पञ्चन्	सप्तन्	नवन्	दशन्
प्रथमा	पञ्च	सप्त	नव	दश
द्वितीया	,,	,,	,,	,,
तृतीया	पञ्चभि:	सप्तभि:	नवभि:	दशभि:
चतुर्थी	पंचभ्य:	सप्तभ्य:	नवभ्य:	दशभ्य:
पञ्चमी	,,	,,	,,	,,
षष्ठी	पंचानाम्	सप्तानान्	नवानाम्	दशानाम्
सप्तमी	पंचसु	सप्तसु	नवसु	दशसु

षष्

प्रथमा-द्वितीया	षट्-ड्	पञ्चमी	षड्भ्य:
तृतीया	षड्भि:	षष्ठी	षण्णाम्
चतुर्थी	षड्भ्य:	सप्तमी	षट्सु

अष्टन् के रूप एक तो पञ्चन् की तरह होंगे और दूसरे प्रथमा और द्वितीयामें औ और शेष विभक्तियोंसे पूर्व आ कर देनेसे बनते हैं।

प्रथमा	अष्टौ- अष्ट
द्वितीया	,, ,,
तृतीया	अष्टाभि:-अष्टभि:
चतुर्थी	अष्टाभ्य:-अष्टभ्य:
पञ्चमी	अष्टाभ्य:-अष्टभ्य:
षष्ठी	अष्टानाम्
सप्तमी	अष्टासु -अष्टसु

एकादशन् से नवदशन् तक शब्दों के रूप पंचन् की तरह होंगे।

विंशति से लेकर सब शब्दोंके रूप केवल एकवचन और स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं। अत: इनका विशेष्य यदि कोई पुंलिङ्ग या नपुंसकलिङ्ग वाचक बहुवचनान्त शब्द भी हो तो भी संख्यावाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग में एक-वचनान्त ही होगा। जैसे—विंशति: कमलानि, त्रिंशत् पुरुषा:, चत्वारिंशत् नार्य:, विंशत्या कमलै:, त्रिंशते पुरुषेभ्य:, चत्वारिंशत: नारीणाम्।

इकारान्त (विंशति, षष्टि, सप्तति, अशीति, नवति) शब्दों के रूप मति

की तरह और त्-अन्त (त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्) शब्दोंके रूप सरित् की तरह होंगे।

	विंशति	त्रिंशत्
प्रथमा	विंशतिः	त्रिंशत्
द्वितीया	विंशतिम्	त्रिंशतम्
तृतीया	विंशत्या	त्रिंशता
चतुर्थी	विंशत्यै-तये	त्रिंशते
पञ्चमी	विंशत्याः-तेः	त्रिंशतः
षष्ठी	,, ,,	,,
सप्तमी	विंशत्याम्-तौ	त्रिंशति

षष्टि, सप्तति, अशीति और नवति के रूप विंशतिकी तरह और चत्वारिंशत् और पञ्चाशत् के रूप त्रिंशत् की तरह होंगे। शत, सहस्र (हजार), लक्ष (लाख) नपुंसकलिंगमें फल की तरह हैं।

१ से १०० तक गणना

विंशति-आदि किसी दशकसे पूर्व यदि नव हो तो उसकी जगह एकोन वा एकान्न भी आता है। किन्तु ये अगले दशकके पूर्व आते हैं। जैसे—नवविंशतिः-ऊनत्रिंशत्, एकोनविंशतिः एकान्नविंशतिः।

आगे सब रूप प्रथमान्त दिए हैं।

१—एकः	११—एकादश	२१—एकविंशतिः
२—द्वौ	१२—द्वादश	२२—द्वाविंशतिः
३—त्रयः	१३—त्रयोदश	२३—त्रयोविंशतिः
४—चत्वारः	१४—चतुर्दश	२४—चतुर्विंशतिः
५—पञ्च	१५—पञ्चदश	२५—पञ्चविंशतिः
६—षट्	१६—षोडश	२६—षड्विंशतिः
७—सप्त	१७—सप्तदश	२७—सप्तविंशतिः
८—अष्ट-अष्टौ	१८—अष्टादश	२८—अष्टाविंशतिः
९—नव	१९—नवदश-ऊनविंशतिः	२९—नवविंशतिः
१०—दश	२०—विंशतिः	ऊनत्रिंशत्;

एकोनत्रिंशत्-
एकान्नत्रिंशत्
३०—त्रिंशत्
३१—एकत्रिंशत्
३२—द्वात्रिंशत्
३३—त्रयस्त्रिंशत्
३४—चतुस्त्रिंशत्
३५—पञ्चत्रिंशत्
३६—षट्त्रिंशत्
३७—सप्तत्रिंशत्
३८—अष्टात्रिंशत्
३९—नवत्रिंशत्-
ऊनचत्वारिंशत्-
एकोनचत्वारिंशत्-
एकान्नचत्वारिंशत्
४०—चत्वारिंशत्
४१—एकचत्वारिंशत्
४२—द्विचत्वारिंशत्-
द्वाचत्वारिंशत्
४३—त्रिचत्वारिंशत्-
त्रयश्चत्वारिंशत्
४४—चतुश्चत्वारिंशत्
४५—पञ्चचत्वारिंशत्
४६—षट्चत्वारिंशत्
४७—सप्तचत्वारिंशत्
४८—अष्टचत्वारिंशत्-
अष्टाचत्वारिंशत्
४९—नवचत्वारिंशत्

ऊनपंचाशत्-
एकोनपञ्चाशत्-
एकान्नपञ्चाशत्
५०—पंचाशत्
५१—एकपंचाशत्
५२—द्विपंचाशत्-
द्वापंचाशत्
५३—त्रिपंचाशत्-
त्रयःपंचाशत्
५४—चतुःपंचाशत्
५५—पंचपंचाशत्
५६—षट्पंचाशत्
५७—सप्तपंचाशत्
५८—अष्टपंचाशत्-
अष्टापंचाशत्
५९—नवपंचाशत्-
ऊनषष्टिः
एकोनषष्टिः-
एकान्नषष्टिः-
६०—षष्टिः
६१—एकषष्टिः
६२—द्विषष्टिः-
द्वाषष्टिः
६३—त्रिषष्टिः-
त्रयःषष्टिः
६४—चतुःषष्टिः
६५—पंचषष्टिः
६६—षट्षष्टिः

६७—सप्तषष्टिः
६८—अष्टषष्टिः-
अष्टाषष्टिः
६९—नवषष्टिः-
ऊनसप्ततिः-
एकोनसप्ततिः-
एकान्नसप्ततिः
७०—सप्ततिः
७१—एकसप्ततिः
७२—द्विसप्ततिः-
द्वासप्ततिः
७३—त्रिसप्ततिः-
त्रयःसप्ततिः
७४—चतुःसप्ततिः
७५—पंचसप्ततिः
७६—षट्सप्ततिः
७७—सप्तसप्ततिः
७८—अष्टसप्ततिः-
अष्टासप्ततिः
७९—नवसप्ततिः-
ऊनाशीतिः-
एकोनाशीतिः-
एकान्नाशीतिः
८०—अशीतिः
८१—एकाशीतिः
८२—द्व्यशीतिः
८३—त्र्यशीतिः
८४—चतुरशीतिः

८५—पंचाशीतिः

८६—षडशीतिः

८७—सप्ताशीतिः

८८—अष्टाशीतिः

८९—नवाशीतिः-
ऊननवतिः-
एकोननवतिः-
एकान्ननवतिः

९०—नवतिः

९१—एकनवतिः

९२—द्विनवतिः-
द्वानवति

९३—त्रिनवतिः-
त्रयोनवतिः

९४—चतुर्नवतिः

९५—पंचनवतिः

९६—षण्णवतिः

९७—सप्तनवतिः

९८—अष्टनवतिः-
अष्टानवतिः

९९—नवनवतिः-
एकोनशतम्

१००—शतम् (सौ)

१०००—सहस्रम् (हजार)

१००००—अयुतम्
(दस हजार)

१०००००—लक्षम् (लाख)
लक्षा (स्त्री०)

१००००००—नियुतम
(दस लाख)

१०००००००—कोटिः
(करोड़)

शताधिक संख्या

संस्कृतमें छोटी संख्या बड़ी संख्यासे पूर्व आती है। *इसलिए संख्याको शब्दोंमें लिखते समय शतसे कम संख्या सबसे पहले आती है। उस के बाद शत (सैंकड़े), फिर हजार, लाख आदि। यदि संख्या सैंकड़ोंसे अधिक हो तो दहाईके बाद अधिक या उत्तर लगा देते हैं। जैसे-१०१= १००+१=एकोत्तरशतम् वा एकाधिकशतम्। २२५=२००+२५=पंचविंशत्युत्तरद्विशतम्। ५७२=५००+७२=द्विसप्तत्यधिकपंचशतम्।

यदि संख्या सैंकड़ोंसे बढ़ जाय तो प्रत्येक शत, सहस्र, या लक्ष आदिके साथ उत्तर या अधिक लगता जायगा। जैसे-१६३४=१०००+ ६००+३४=चतुस्त्रिंशदुत्तरषट्शतोत्तरसहस्रम्। ८७८७=८०००+७००+८७= सप्ताशीत्यधिकसप्तशताधिकाष्टसहस्रम्। २६९४२=२६०००+९००+४२=द्वाचत्वारिंशदुत्तरनवशतोत्तरसप्तविंशतिसहस्रम्। संख्या बढ़ते जाने पर इसी प्रकार अधिक वा उत्तर लगाते जाओ।

---

*अङ्कस्य वामा गतिः।

पूरण संख्या (ordinals)

पहला	प्रथम	पाँचवाँ, सातवाँ, आठवाँ, नौवाँ, दसवाँ—इनके लिए
दूसरा	द्वितीय	पूरणशब्द संख्यावाचकोंके अन्तिम न् को म कर देनेसे
तीसरा	तृतीय	बनते हैं।
चौथा	चतुर्थ, तुरीय	जैसे—पञ्चम, सप्तम, अष्टम, नवम,
छठा	षष्ठ	दशम।

एकादशन् से लेकर नवदशन् तक के न् का लोप कर देनेसे उनके पूरण रूप बन जाते हैं। एकादशन् = एकादशः (ग्यारहवां), द्वादशः (बारहवां), त्रयोदशः, चतुर्दशः, पञ्चदशः, षोडशः, सप्तदशः, अष्टादशः, नवदशः। नवदशन् के बादके सब पूरण शब्द संख्यावाचकोंके अन्तमें तम लगा देनेसे बन जाते हैं। जैसे—विंशतितमः, द्वात्रिंशत्तमः, षष्टितमः, पञ्चाशीतितमः इत्यादि।

विंशतिसे लेकर पूरण रूप दूसरे प्रकारके (तम-अन्तसे भिन्न) भी होते हैं। वे इस तरह बनते हैं—

१०५—(क) *विंशतिके ति* का और *त्-अन्त* शब्दोंके त् का लोप हो जाता है। विंशः, एकविंशः, द्वाविंशः, षड्विंशः, त्रिंशः, चतुस्त्रिंशः, चत्वारिंशः, सप्तचत्वारिंशः, पञ्चाशः, षट्पञ्चाशः, नवपञ्चाशः।

(ख) *इकारान्त* संख्यावाचकोंके इ को *अ* हो जाता है।

जैसे—एकषष्टः, चतुष्षष्टः, त्रयस्सप्ततः, सप्तसप्ततः, द्व्यशीतः, नवाशीतः, पञ्चनवतः, नवनवतः।

अपवाद—असमस्त षष्टि (साठ) आदिके इ को अ नहीं होता। अतः इसका पूरणरूप तम-अन्त ही बनता है। जैसे—षष्टितमः (साठवाँ), सप्ततितमः (सत्तरवाँ), अशीतितमः (अस्सीवाँ), नवतितमः (नब्बेवाँ)।

(ग) *शत और* उसके बादके सब संख्यावाचकोंके *पूरण* रूप

केवल तम लगकर ही बनते हैं।

जैसे—शततमः। पञ्चशततमः। सप्तत्यधिकशततमः। षण्णवत्यधिक-सप्तशततमः। सहस्रतमः। नवोत्तरपञ्चसहस्रतमः। सप्तलक्षतमः इत्यादि।

पुंलिंग

तम-अन्त और दूसरे पूरण शब्दोंके रूप पुंलिंगमें रामकी तरह होंगे।

अपवाद—प्रथमके प्रथमा-बहुवचनमें प्रथमे-प्रथमाः होंगे। द्वितीय और तृतीयके चतुर्थी, पंचमी, और सप्तमीके एकवचनमें दो-दो रूप होंगे—एक सर्वकी तरह और दूसरा रामकी तरह। जैसे—द्वितीयस्मै-द्वितीयाय। द्वितीय-स्मात्-द्वितीयात्। द्वितीयस्मिन्-द्वितीये। इसी तरह तृतीय के भी होते हैं। इनके शेष रूप रामकी तरह होंगे।

स्त्रीलिंग

प्रथमका प्रथमा, द्वितीयका द्वितीया, तृतीयका तृतीया, स्त्रीलिंग रूप होंगे। इनके रूप लता की तरह होंगे। किन्तु द्वितीया और तृतीयाके चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमीमें एक एक रूप सर्वाकी तरहभी होंगे—तृतीयस्यै-तृतीयायै। तृतीय-स्याः—तृतीयायाः। तृतीयस्याः-तृतीयायाः। तृतीयस्याम्-तृतीयायाम्। इसी तरह द्वितीयाके रूप भी होंगे।

शेष सब पूरण शब्द (तम-अन्त और दूसरे भी) ईकारान्त हो जायेंगे। उनके रूप नदी की तरह होंगे। चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पञ्चदशी, षोडशी, सप्तदशी, अष्टादशी, नवदशी, विंशी, एकविंशी, सप्तविंशी, त्रिंशी, पञ्चत्रिंशी, चत्वारिंशी, सप्तचत्वारिंशी, पञ्चाशी, नवपञ्चाशी, षट्षष्टी, पञ्चसप्तती, नवाशीती, षण्णवती। विंशतितमी, पञ्चत्रिंशत्तमी, षष्टितमी, सप्ताशीतितमी, एकोत्तरशततमी, नवाशीत्यधिकपञ्चशताधिक-द्विसहस्रतमी।

नपुंसकलिङ्ग

पूरण संख्यावाचकोंके रूप नपुंसकलिङ्गमें फलकी तरह ही होंगे। विंशम्, त्रिंशे, विंशानि, षष्टितमम्, षष्टितमानि।

संख्यावाचक क्रियाविशेषण (Numeral adverbs)

१—पौनः-पुन्यवाचक क्रियाविशेषण—सकृत् (एक बार), द्विः (दो बार), त्रिः (तीन बार , चतुः (चार बार) हैं। शेष रूप संख्यावाचकोंके अन्तमें 'कृत्वः' लगाकर बनते हैं। जैसे—पञ्चकृत्वः, नवकृत्वः, अशीतिकृत्वः, शतकृत्वः।

२—प्रकारवाचक क्रियाविशेषण—संख्यावाचक के बाद धा लगाने से बनते हैं। जैसे—एकधा (एक प्रकारका), चतुर्धा (चार प्रकारका), षट् +धा= षोढा (छः प्रकार का)।

३—गणवाचक क्रियाविशेषण संख्यावाचकोंके बाद 'शः' लगाने से बनते हैं। जैसे—एकशः (एक एक कर), द्विशः (दो दो कर, दो दो के गण में) इसी तरह पञ्चशः, विंशतिशः, शतशः, सहस्रशः।

गुण (एक ही संख्याको कई बार दोहराना, जर्ब)—अर्थमें संख्यावाचकके आगे गुण या गुणित लगा देते हैं। जैसे—द्विगुणम्–द्विगुणितम् (दुगुना), सप्तगुणः—सप्तगुणितः (सात गुना)।

अभ्यासः

त्रिंशता दिवसैर्मासो भवति, द्वादशभिर्मासैर्वर्षम्। युगाश्चत्वारः—कलिः, द्वापरः, त्रेता, कृतयुगश्च। वर्णेषु प्रथमं स्थानं विप्राणां, द्वितीयं क्षत्रियाणां, तृतीयं विशां, चतुर्थं च शूद्राणाम्, पूर्वे त्रयो वर्णा द्विजन्मानः। चत्वारो वेदाः, षट् च दर्शनानि। एकचत्वारिंशदुत्तरनवशतोत्तरैक-सहस्रतमे संवत्सरे भाद्रपदस्य मासस्य चतुर्थ्यां तिथावयं ग्रन्थः समाप्ति-मगच्छत्। कति रसाः? रसा नव। तस्मिन्नुत्सवे सहस्रशः प्राणिनः अवर्तन्त, का कथा शतशो नराणाम्। षड्विंशतिरिमानि फलानि, एषु षट् त्वं गृहाण, शिष्टानि विंशतिं पञ्चशः विभज्यैतेषु बालकेषु प्रत्येकाय चत्वारि चत्वारि देहि। पुरावृत्ते महाभारतयुद्धे उभयोः पक्षयोः मिलित्वा अष्टादशाक्षौहिण्यो वाहिनीनामविशन्त, एकादश कौरवपक्षे, सप्त च पाण्डवपक्षे।

इसका अनुवाद संस्कृत में करो:—

इस स्कूलकी छठी जमातमें पचपन लड़के पढ़ते हैं। उनमें केवल बारह ही सालाना (वार्षिकी) परीक्षामें पास हुए (उद्‌तृ)।

इस मासकी चौबीसवीं तारीख़ (तिथि) को चन्द्रग्रहण होगा, उसी रातको सैकड़ों, हज़ारों लोग हरिद्वारको स्नानके लिए जायेंगे।

शुक्लपक्षकी चन्द्रहवीं तिथिको पूर्णिमा कहते हैं, उस दिन चांदका प्रकाश प्रतिपद् के प्रकाशसे पंद्रहगुणा (पंचदशगुण) होता है।

गुण चौबीस हैं, उनमें तीसरा, चौथा, दसवां, सोलहवां और तेरहवां कौन कौन हैं ?

इस पंक्तिमें जो आठवीं लड़की बैठी है, वह सरला है, जो इस परीक्षामें पहली निकली थी।

उस ब्राह्मणने दो सेर मिठाई एक ही बार (सकृत्) खा तो ली पर उसे कई दिन बदहज़मी (अजीर्ण) रही।

इन लड़कोंको दो दो के गणों में बांट दो, फिर सीधी (सरल) पंक्तिमें बाग़में खेलनेको ले जाओ।

सम्वत् १९३९ में संसारव्यापी युद्धका आरंभ हुआ।

साठ, सत्तर, चौबीस, चौवन और निन्यानवे आमोंको इनमें बांट दो (विभज्)।

आम तीन सौ सात हैं और लड़के ग्यारह हैं, इन्हें कैसे बाँटूं ?

गोपालको सात दो और शेष लड़कोंको दस दस।

एक सौ ग्यारह, पचपन और सात सौ चौरासीको योग करो (संयोजय, सङ्कलय)।

नौ सौ बत्तीस को दो सौ तेतीस से भाग करो (विभज)।

अठसठको पंद्रहसे गुणन करो (गुणय)।

अनुशीलनी—१६

१—पूरण किसे कहते हैं ? इनमें पूरण कौन हैं और साधारण संख्यावाचक कौन हैं ? द्वौ, सप्त, दशमः, चतुर्थः, चत्वारः, त्रिंशः, विंशतितमः, विंशतिः।

२—द्वादश, द्वादशः, इनमें क्या भेद है ? वाक्योंमें प्रयोग द्वारा बताओ।

३—संख्यावाचक क्रियाविशेषण कितने हैं ? प्रत्येक के दो दो उदाहरण दो।

४—पौनःपुन्य और प्रकार अर्थ में कौन कौन से प्रत्यय हैं ? द्वि, पंचन्, चतुर्, विंशति, इनके आगे दोनों प्रकारके प्रत्यय लगा कर रूप बनाओ।

५—इन संख्याओं को शब्दोंमें लिखो—७, १६, ४६ वाँ, ५५, ७०वाँ, १०१, ९६, ८२वाँ, ८३२, १६८१, ४५४वाँ, ३१७।

६—(क) इनके रूप प्रथमा, चतुर्थी और सप्तमी में लिखो—पंचन्, अष्टन्, विंशति, पंचाशत्, शत, चतुर् (स्त्री०)।

(ख) इनके रूप द्वितीया, तृतीया और षष्ठी में लिखो—त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, त्रि (पुं०), द्वि (नपुं०), सहस्र, षष्टि, नवति।

७—समस्त संख्यावाचक पदोंमें अधिक और उत्तरका प्रयोग कहाँ होता है? उदाहरणों में स्पष्ट करो।

८—इनमें रिक्त स्थानों को भरो—

अष्टौ—भ्रमणार्थं गृहात्—तेषु द्वौ पुरुषौ—प्राप्तौ, चत्वार:—न निवृत्ता:। रामस्य तिस्र:—द्वौ—इति मिलित्वा पंच अपत्यानि आसन्। षोडश—च युक्त्वा त्रयस्त्रिंशत् जायन्ते।

धातु-प्रकरण—१

१०६—व्याकरण-प्रक्रियामें समस्त शब्दों और विशेषत: क्रियाशब्दोंके मूल-रूप को *धातु* कहते हैं।

धातु एक प्रकृति (मूल-रूप) है जिसके आगे अन्यान्य प्रत्यय लगाकर शब्दोंके भिन्न-भिन्न रूप बनाते हैं। जैसे—भू (धातु) से यदि अन (प्रत्यय) जोड़ा जाय तो भवन (होना, घर) संज्ञा शब्द बनता है। यदि ति (क्रिया-विभक्ति) लगाई जाय तो भवति (होता है) क्रिया बनती है। इसी प्रकार हृ से परे अ से हार, अन से हरण, ति से हृति, ति (क्रिया-विभक्ति) से हरति रूप बनते हैं। इस प्रकरणमें धातुओंसे क्रियापद बनाने की विधि बताई गई है।

१०७—धातुओंसे क्रिया-पद बनानेके लिए जो प्रत्यय लगाए जाते हैं, उन्हें *तिङ्* विभक्ति भी कहते हैं।

जैसे—नामोंकी विभक्तियों को सु से प् तक होने से सुप् कहते हैं, इसी तरह क्रियाओंकी विभक्तियों को ति से ङ् तक होने से तिङ् कहते हैं।

गण

धातुओंकी अनुरूपता (समानता) के विचारसे उनको दस गणों (विभागों) में बाँटा हुआ है। प्रत्येक गणका नाम उस गणके पहले धातुसे रक्खा गया है। जैसे—भ्वादि (भू+आदि) गणके धातुओंका पहला धातु भू है और इस गण के समस्त धातुओं के रूप भू की तरह हैं।

१—भ्वादि (भू-आदि) गण।	६—तुदादि (तुद्-आदि) गण।
२—अदादि (अद्-आदि) गण।	७—रुधादि (रुध्-आदि) गण।
३- जुहोत्यादि (जुहोति (हु)-आदि) गण।	८—तनादि (तन्-आदि) गण।
४—दिवादि (दिव्-आदि) गण।	९—क्र्यादि (क्री-आदि) गण।
५—स्वादि (सु-आदि) गण।	१०—चुरादि (चुर्-आदि) गण।

किसी क्रिया (कार्य) के होने का पूर्ण ज्ञान तब तक नहीं हो सकता जब तक यह न मालूम हो जाय कि वह किस समय में हुई है।

१०८—क्रियाका पूर्ण ज्ञान करानेके लिए भिन्न भिन्न कालों के लिए उसके भिन्न भिन्न रूप बनते हैं। उन कालोंको व्याकरण-प्रक्रिया में लकार (Tense and moods) कहते हैं।

लकार *दस हैं, किन्तु प्रधान पाँच हैं, क्योंकि इन्हींके ज्ञान से काम चल सकती है। इसलिए प्रारम्भिक ज्ञान के लिए इन्हींका ज्ञान आवश्यक है। वे पाँच लकार ये हैं—

लट् (Present tense, वर्तमान काल),
लोट् (Imperative mood, आज्ञा),
लिङ्-विधि (Potential mood, विधि, आज्ञा, निमन्त्रण),
लङ् (Imperfect Past tense, भूत)।

---

*दस लकार ये हैं—लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्। इनमें लेट् का प्रयोग वेदमें ही होता है। लिङ् के दो भेद होते हैं—विधि-लिङ् और आशीर्लिङ्।

लृट् (Simple Future, भविष्यत्),

१२६—क्रिया (कार्य) करने वाला कोई स्वयं होता है, या कोई ऐसा होता है जो कर्ता के सामने हो और जिसे निर्देश किया जा सके अथवा कोई ऐसा होता है जो इन दोनोंसे भिन्न हो, अर्थात् न वह स्वयं हो और न कोई सामने खड़ा हो। इनसे भिन्न कोई और क्रियाका कर्ता नहीं हो सकता। उस कर्ताको व्याकरण-प्रक्रियामें पुरुष कहते हैं। इसलिए धातुके आगे जो लकार जोड़े जाते हैं, उनके तीन पुरुष होते हैं।

१—प्रथम पुरुष २—मध्यम पुरुष ३—उत्तम पुरुष

१०९—*प्रथम पुरुष* वह होता है जो न स्वयं हो और न कोई सामने खड़ा हो अर्थात् *अन्य* हो।

इसलिए प्रथम पुरुषको अन्य पुरुष भी कहते हैं। अस्मद् और युष्मद् शब्दों को छोड़कर और सब प्रथम पुरुष हैं।

जैसे—सः गच्छति (वह जाता है।), मोहनः पठति (मोहन पढ़ता है।)

११०—मध्यम पुरुष उसके लिए आता है *जो सामने खड़ा हो*। जैसे—त्वं वदसि (तू बोलता है।), यूयं भक्षयथ (तुम खाते हो।)

१११—उत्तम पुरुष *अपने लिए* प्रयुक्त होता है। जैसे—अहं चलामि (मैं चलता हूँ।) वयं पश्यामः (हम देखते हैं।)

उत्तम पुरुषकी क्रियाका कर्ता अस्मद्, मध्यम पुरुषकी क्रियाका युस्मद् और अन्य पुरुषकी क्रियाका कर्ता इनसे भिन्न कोई होता है।

पुरुष-ज्ञान के पश्चात् इस बात का ज्ञान आवश्यक है कि वह पुरुष एक है, दो हैं, या अधिक हैं।

११२—लकारकी विभक्तिके जिस रूपसे यह पता लगे कि पुरुषकी संख्या क्या है, उस रूपको उस लकारका *वचन* कहते हैं। इसलिए प्रत्येक पुरुषके तीन वचन हैं। एकवचन द्विवचन बहुवचन

११३—एकके लिए एकवचन दोके लिए द्विवचन और दोसे अधिकोंके लिए बहुवचन आते हैं। अतः—प्रत्येक लकारके

नौ नौ रूप बनते हैं।

प्रथम पुरुष—एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
मध्यम पुरुष—एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष—एकवचन	द्विवचन	बहुवचन

पद-विभाग

प्रत्येक गणके धातुओंमें कई धातु परस्मैपदी, कई आत्मनेपदी और कई उभयपदी (परस्मैपद और आत्मनेपद दोनोंमें) हैं। परस्मैपदी धातुओंके लिए अलग विभक्तियाँ हैं और आत्मनेपदी धातुओंके लिए अलग। इसलिए प्रत्येक लकार (विभक्ति) के अठारह रूप होते हैं—नौ परस्मैपदी धातुओंके लिए और नौ आत्मनेपदी धातुओंके लिए।

लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् और लृट् इन अर्थों में प्रयुक्त होते हैं।

११४—*वर्तमान* कालका बोध करानेके लिए लट् लकार का प्रयोग होता है।

परस्मैपद के प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ति	तः	अन्ति
मध्यम पुरुष	सि	थः	थ
उत्तम पुरुष	मि	वः	मः

११५—*आज्ञाके* लिए लोट् का प्रयोग होता है।

प्रथम पुरुष	तु	ताम्	अन्तु
मध्यम पुरुष	हि	तम्	त
उत्तम पुरुष	आनि	आव	आम

११६—*विधि* (शास्त्र-आज्ञा, आज्ञा), और संकेत (Condition) आदि के लिए *विधि-लिङ्* प्रयुक्त होता है!

प्रथम पुरुष	इत्	इताम्	इयुः
मध्यम ,,	इः	इतम्	इत

उत्तम पुरुष	,,	इयम्	इव	इम

११७—*भूत* (गुज़री हुई) घटना के लिए लङ् का प्रयोग होता है।

प्रथम पुरुष	त्	ताम्	अन्
मध्यम पुरुष	स् (:)	तम्	त
उत्तम पुरुष	अम्	व	म

११८—*भविष्यमें* होनेवाली घटनाके लिए लृट् आता है।

प्रथम पुरुष	स्यति	स्यतः	स्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्यसि	स्यथः	स्यथ
उत्तम पुरुष	स्यामि	स्यावः	स्यामः

यदि देखा जाय तो लट् की विभक्तियोंके पूर्व स्य जोड़नेसे लृट्की विभक्तियाँ बनी हैं।

गण-विकरण

११९—प्रत्येक गणके लिए एक विशेष चिह्न होता है, जिसे *विकरण* कहते हैं।

यह विकरण धातु और विभक्तिके बीच में केवल सार्वधातुक में, अर्थात् लट्, लोट्, विधि-लिङ् और लङ् लकारों में ही आता है। और लृट्, लिट् और दूसरे आर्धधातुक लकारों में नहीं आता।

भ्वादि—अ	स्वादि—नु	क्र्यादि—ना
अदादि—०	तुदादि—अ	चुरादि—अय
जुहोत्यादि—०	रुधादि—न	
दिवादि—य	तनादि—उ	

भ्वादि-गण

(इस पुस्तकमें भ्वादि, दिवादि, तुदादि और चुरादि-गण पहले रक्खे गए हैं, क्योंकि इनके धातुओंके रूपों में समानता है, शेष गण यथाक्रम पीछे आयेंगे)।

भू (होना)

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
	(वह होता है)	(वे दो होते हैं)	(बहुत होते हैं)
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
	(तू होता है)	(तुम दो होते हो)	(तुम बहुत होते हो)
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः
	(मैं होता हूं)	(हम दो होते हैं)	(हम बहुत होते हैं)

लोट्

प्रथम पुरुष	भवतु	भवताम्	भवन्तु
	(वह होवे)	(वे दो होवें)	(वे बहुत होवें)
मध्यम पुरुष	भव*	भवतम्	भवत
	(तू हो)	(तुम दो होओ)	(तुम बहुत होओ)
उत्तम पुरुष	भवानि	भवावः	भवामः
	(मैं होऊँ)	(हम दो होवें)	(हम बहुत होवें)

विधि-लिङ्

भू + अ+इत् = भव् + अ+इत् = भव् + एत् = भवेत् ।

प्रथम पुरुष	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
	(वह होवे)	(वे दो होवें)	(वे बहुत होवें)
मध्यम पुरुष	भवेः	भवेतम्	भवेत
	(तू होवे)	(तुम दो होओ)	(तुम बहुत होओ)
उत्तम पुरुष	भवेयम्	भवेव	भवेम
	(मैं होऊँ)	(हम दो होवें)	(हम बहुत होवें)

---

*भ्वादि, दिवादि, तुदादि और चुरादि गणों के धातुओं से परे हि का लोप हो जाता है ।

लङ्

प्रथम पुरुष	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
	(वह हुआ)	(वे दो हुए)	(वे बहुत हुए)
मध्यम पुरुष	अभवः	अभवतम्	अभवत
	(तू हुआ)	(तुम दो हुए)	(तुम बहुत हुए)
उत्तम पुरुष	अभवम्	अभवाव	अभवाम
	(मैं हुआ)	(हम दो हुए)	(हम बहुत हुए)

लृट्

पीछे कहा गया है कि लृट्में गण-विकरण नहीं आता, परन्तु लृट्के पूर्व कई धातुओंके अन्तमें विकरणकी जगह इ आता है और कई धातुओं में नहीं आता।

१२०—जिनमें इ आता है वे *सेट्* **(स+इट्) धातु कहलाते हैं और जिनमें नहीं आता वे** *अनिट्* **(अन्+इट्) कहलाते हैं।**

इ के बाद स् को ष् हो जाता है। जैसे—भू=भव्+स्यति=भविस्यति=भविष्यति। या+स्यति=यास्यति। लृट् में धातुकी उपधाके ह्रस्व स्वर वा अन्तिम स्वर (दीर्घ वा ह्रस्व) को गुण होता है।

प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

भ्वादि गणके दूसरे परस्मैपदी सेट् धातुओंके लृट्-रूप भी भू की तरह ही होंगे।

कृदन्त—क्त-भूतः, क्तवत्-भूतवान् (भूतवती स्त्री०), क्त्वा-भूत्वा, तुम्-भवितुम्, शतृ-भवन् (भवन्ती स्त्री०), तव्य-भवितव्यः, अनीय-भवनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-भावयति-ते। भाववाच्य-भूयते (सदा प्र० पुरुषमें एकवचनान्त।)

भू कुछ उपसर्गोंके साथ—

अति भू (उत्कृष्ट होना, to exell), अनुभू (अनुभव करना),

उद् भू (उदय होना), परा भू (परास्त करना), प्र भू (समर्थ होना), सम् भू (उत्पन्न होना, इकट्ठे होना) ।

गम्—जाना (गच्छ्)

लट्

प्रथम पु०	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
मध्यम पु०	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
उत्तम पु०	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः

लोट्

प्रथम पु०	गच्छतु	गच्छताम्	गच्छन्तु
मध्यम पु०	गच्छ	गच्छतम्	गच्छत
उत्तम पु०	गच्छानि	गच्छाव	गच्छाम

लङ्

प्रथम पु०	अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्
मध्यम पु०	अगच्छः	अगच्छतम्	अगच्छत
उत्तम पु०	अगच्छम्	अगच्छाव	अगच्छाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः
मध्यम पु०	गच्छेः	गच्छेतम्	गच्छेत
उत्तम पु०	गच्छेयम्	गच्छेव	गच्छेम

लृट्

प्रथम पुरुष	गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	गमिष्यसि	गमिष्यथः	गमिष्यथ
उत्तम पुरुष	गमिष्यामि	गमिष्यावः	गमिष्यामः

कृदन्त—क्त-गतः, क्तवत् गतवान् (गतवती स्त्री०), क्त्वा-गत्वा, तुम्-गन्तुम्, शतृ-गच्छन् (गच्छन्ती स्त्री०), तव्य गन्तव्यः, अनीय-गमनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-गमयति ते, कर्मवाच्य-गम्यते ।

उपसर्ग-सहित—अतिगम् (बिताना), अधिगम् (पाना), अनुगम् (पीछे जाना), अभिगम् (पहुंचना), अवगम् (जानना), उद्गम् (ऊपर

जाना), उपगम् (पास जाना), निर्गम् (निकलना), आगम् (आना), प्रतिआगम् (प्रत्यागम्, लौटना) !

दृश्-(पश्य्) देखना

लट्

प्रथम पु०	पश्यति	पश्यतः	पश्यन्ति
मध्यम पु०	पश्यसि	पश्यथः	पश्यथ
उत्तम पु०	पश्यामि	पश्यावः	पश्यामः

लोट्

प्रथम पु०	पश्यतु	पश्यताम्	पश्यन्तु
मध्यम पु०	पश्य	पश्यतम्	पश्यत
उत्तम पु०	पश्यानि	पश्याव	पश्याम

लङ्

प्रथम पु०	अपश्यत्	अपश्यताम्	अपश्यन्
मध्यम पु०	अपश्यः	अपश्यतम्	अपश्यत
उत्तम पु०	अपश्यम्	अपश्याव	अपश्याम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	पश्येत्	पश्येताम्	पश्येयुः
मध्यम पु०	पश्येः	पश्येतम्	पश्येत
उत्तम पु०	पश्येयम्	पश्येव	पश्येम

लृट्

प्रथम पु०	द्रक्ष्यति	द्रक्ष्यतः	द्रक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	द्रक्ष्यसि	द्रक्ष्यथः	द्रक्ष्यथ
उत्तम पु०	द्रक्ष्यामि	द्रक्ष्यावः	द्रक्ष्यामः

कृदन्त—क्त-दृष्टः, क्तवत् दृष्टवान् (दृष्टवती-स्त्री०), क्त्वा-दृष्ट्वा, तुम्-द्रष्टुम्, शतृ पश्यन् (पश्यन्ती स्त्री०), तव्य-द्रष्टव्यः, अनीय-दर्शनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-दर्शयति-ते । कर्मवाच्य-दृश्यते ।

सद् (सीद्) दुःख पाना

लट्

प्रथम पु०	सीदति	सीदतः	सीदन्ति
मध्यम पु०	सीदसि	सीदथः	सीदथ
उत्तम पु०	सीदामि	सीदावः	सीदामः

लोट्

प्रथम पु०	सीदतु	सीदताम्	सीदन्तु
मध्यम पु०	सीद	सीदतम्	सीदत
उत्तम पु०	सीदानि	सीदाव	सीदाव

लङ्

प्रथम पु०	असीदत्	असीदताम्	असीदन्
मध्यम पु०	असीदः	असीदतम्	असीदत
उत्तम पु०	असीदम्	असीदाव	असीदाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	सीदेत्	सीदेताम्	सीदेयुः
मध्यम पु०	सीदेः	सीदेतम्	सीदेत
उत्तम पु०	सीदेयम्	सीदेव	सीदेम

लृट्

प्रथम पुरुष	सत्स्यति	सत्स्यतः	सत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	सत्स्यसि	सत्स्यथः	सत्स्यथ
उत्तम पुरुष	सत्स्यामि	सत्स्यावः	सत्स्यामः

कृदन्त—क्त-सन्नः, क्तवत्-सन्नवान् (सन्नवती स्त्री०), क्त्वा-सत्त्वा, तुम्-सत्तुम्, शतृ-सीदन् (सीदन्ती स्त्री०), तव्य सत्तव्यः, अनीय-सदनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-सादयति-ते। भाववाच्य-सद्यते।

उपसर्गहित-अवसद् (क्षय होना), निसद् (बैठना), विसद् (खिन्न होना)।

स्था (तिष्ठ्) ठहरना

लट्

प्रथम पु०	तिष्ठति	तिष्ठतः	तिष्ठन्ति
मध्यम पु०	तिष्ठसि	तिष्ठथः	तिष्ठथ

उत्तम पु०	तिष्ठामि	तिष्ठावः	तिष्ठामः

लङ्

प्रथम पु०	अतिष्ठत्	अतिष्ठताम्	अतिष्ठन्
मध्यम पु०	अतिष्ठः	अतिष्ठतम्	अतिष्ठत
उत्तम पु०	अतिष्ठम्	अतिष्ठाव	अतिष्ठाम

लोट्

प्रथम पु०	तिष्ठतु	तिष्ठताम्	तिष्ठन्तु
मध्यम पु०	तिष्ठ	तिष्ठतम्	तिष्ठत
उत्तम पु०	तिष्ठानि	तिष्ठाव	तिष्ठाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	तिष्ठेत्	तिष्ठेताम्	तिष्ठेयुः
मध्यम पु०	तिष्ठेः	तिष्ठेतम्	तिष्ठेत
उत्तम पु०	तिष्ठेयम्	तिष्ठेव	तिष्ठेम

लृट्

प्रथम पुरुष	स्थास्यति	स्थास्यतः	स्थास्यन्ति
मध्यम पुरुष	स्थास्यसि	स्थास्यथः	स्थास्यथ
उत्तम पुरुष	स्थास्यामि	स्थास्यावः	स्थास्यामः

कृदन्त—क्त-स्थितः, क्तवत् स्थितवान् (स्थितवती स्त्री०), क्त्वा-स्थित्वा, तुम्-स्थातुम्, शतृ-तिष्ठन् (तिष्ठन्ती स्त्री०), तव्य-स्थातव्यः, अनीय-स्थानीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) स्थापयति-ते, भाववाच्य-स्थीयते ।

उपसर्गसहित—अधिस्था (बसना), अनुस्था (पीछे चलना, पूरा करना), उपस्था (निकट आना), उद्स्था (खड़े होना), प्रस्था (चल पड़ना) ।

स्मृ (स्मर) याद करना

लट्

प्रथम पु०	स्मरति	स्मरतः	स्मरन्ति
मध्यम पु०	स्मरसि	स्मरथः	स्मरथ
उत्तम पु०	स्मरामि	स्मरावः	स्मरामः

लोट

प्रथम पु०	स्मरतु	स्मरताम	स्मरन्तु
मध्यम पु०	स्मर	स्मरतम्	स्मरत
उत्तम पु०	स्मराणि	स्मराव	स्मराम

लङ्

प्रथम पु०	अस्मरत्	अस्मरताम्	अस्मरन्
मध्यम पु०	अस्मर:	अस्मरतम्	अस्मरत
उत्तम पु०	अस्मरम्	अस्मराव	अस्मराम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	स्मरेत्	स्मरेताम्	स्मरेयु:
मध्यम पु०	स्मरे:	स्मरेतम्	स्मरेत
उत्तम पु०	स्मरेयम्	स्मरेव	स्मरेम

लृट्

प्रथम पु०	स्मरिष्यति	स्मरिष्यत:	स्मरिष्यन्ति
मध्यम पु०	स्मरिष्यसि	स्मरिष्यथ:	स्मरिष्यथ
उत्तम पु०	स्मरिष्यामि	स्मरिष्याव:	स्मरिष्याम:

कृदन्त—क्त-स्मृत:, क्तवत्--स्मृतवान् (स्मृतवती स्त्री०), क्त्वा-स्मृत्वा, तुम्-स्मर्तुम्, शतृ स्मरन् (स्मरन्ती स्त्री०) तव्य-स्मर्तव्य:, अनीय-स्मरणीय: ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) स्मारयति-ते । कर्मवाच्य-स्मर्यते ।

उपसर्गसहित-विस्मृ (भूलना) ।

पा (पिब्) पीना

लट्

प्रथम पु०	पिबति	पिबत:	पिबन्ति
मध्यम पु०	पिबसि	पिबथ:	पिबथ
उत्तम पु०	पिबामि	पिबाव:	पिबाम:

लोट्

प्रथम पु०	पिबतु	पिबताम्	पिबन्तु
मध्यम पु०	पिब	पिबतम	पिबत

उत्तम पु०	पिबानि	पिबाव	पिबाम

लङ्

प्रथम पु०	अपिबत्	अपिबताम	अपिबन्
मध्यम पु०	अपिबः	अपिबतम्	अपिबत
उत्तम पु०	अपिबम	अपिबाव	अपिबाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	पिबेत्	पिबेताम	पिबेयुः
मध्यम पु०	पिबेः	पिबेतम्	पिबेत
उत्तम पु०	पिबेयम्	पिबेव	पिबेम

लृट्

प्रथम पु०	पास्यति	पास्यतः	पास्यन्ति
मध्यम पु०	पास्यसि	पास्यथः	पास्यथ
उत्तम पु०	पास्यामि	पास्यावः	पास्यामः

कृदन्त—क्त-पीतः, क्तवत् पीतवान् (पीतवती स्त्री०), क्त्वा-पीत्वा, तुम्-पातुम्, शतृ- पिबन् (पिबन्ती स्त्री०), तव्य-पातव्यः, अनीय-पानीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) पाययति-ते। कर्मवाच्य-पीयते।

जि (जि=जे=जय्) जीतना

लट्

प्रथम पु०	जयति	जयतः	जयन्ति
मध्यम पु०	जयसि	जयथः	जयथ
उत्तम पु०	जयामि	जयावः	जयामः

लोट्

प्रथम पु०	जयतु	जयताम्	जयन्तु
मध्यम पु०	जय	जयतम्	जयत
उत्तम पु०	जयानि	जयाव	जयाम

लङ्

प्रथम पु०	अजयत्	अजयताम	अजयन्
मध्यम पु०	अजयः	अजयतम्	अजयत

उत्तम पु०	अजयम्	अजयाव	अजयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	जयेत्	जयेताम्	जयेयुः
मध्यम पु०	जयेः	जयेतम्	जयेत
उत्तम पु०	जयेयम्	जयेव	जयेम

लृट्

प्रथम पु०	जेष्यति	जेष्यतः	जेष्यन्ति
मध्यम पु०	जेष्यसि	जेष्यथः	जेष्यथ
उत्तम पु०	जेष्यामि	जेष्यावः	जेष्यामः

कृदन्त—क्त-जितः, क्तवत्-जितवान् (जितवती स्त्री०), क्त्वा-जित्वा, तुम्-जेतुम्, शतृ-जयन् (जयन्ती स्त्री०), तव्य-जेतव्यः, अनीय-जयनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) जापयति-ते। कर्मवाच्य-जीयते।

उपसर्गसहित—विजि (आत्म० परास्त करना), पराजि (आत्म०) परास्त करना।

हस् (हंसना)

लट्

प्रथम पु०	हसति	हसतः	हसन्ति
मध्यम पु०	हससि	हसथः	हसथ
उत्तम पु०	हसामि	हसावः	हसामः

लोट्

प्रथम पु०	हसतु	हसताम्	हसन्तु
मध्यम पु०	हस	हसतम्	हसत
उत्तम पु०	हसानि	हसाव	हसाम

लङ्

प्रथम पु०	अहसत्	अहसताम्	अहसन्
मध्यम पु०	अहसः	अहसतम्	अहसत
उत्तम पु०	अहसम्	अहसाव	अहसाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	हसेत्	हसेताम्	हसेयुः
मध्यम पु०	हसेः	हसेतम्	हसेत
उत्तम पु०	हसेयम्	हसेव	हसेम

लृट्

प्रथम पु०	हसिष्यति	हसिष्यतः	हसिष्यन्ति
मध्यम पु०	हसिष्यसि	हसिष्यथः	हसिष्यथ
उत्तम पु०	हसिष्यामि	हसिष्यावः	हसिष्यामः

कृदन्त—क्त-हसितः, क्तवत्-हसितवान् (हसितवती स्त्री०), क्त्वा-हसित्वा, तुम्-हसितुम् , शतृ-हसन् (हसन्ती स्त्री०), तव्य-हसितव्यः, अनीय-हसनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) हासयति-ते। भाववाच्य-हस्यते।

उपसर्गसहित-उपहस् (मजाक करना), वि-हस् (मंदहास्य करना)।

पठ् (पढ़ना)

लट्

प्रथम पु०	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यम पु०	पठसि	पठथः	पठथ
उत्तम पु०	पठामि	पठावः	पठामः

लोट्

प्रथम पु०	पठतु	पठताम्	पठन्तु
मध्यम पु०	पठ	पठतम्	पठत
उत्तम पु०	पठानि	पठाव	पठाम

लङ्

प्रथम पु०	अपठत्	अपठताम्	अपठन्
मध्यम पु०	अपठः	अपठतम्	अपठत
उत्तम पु०	अपठम्	अपठाव	अपठाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः

मध्यम पु०	पठेः	पठेतम्	पठेत
उत्तम पु०	पठेयम्	पठेव	पठेम

लृट्

प्रथम पु०	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति
मध्यम पु०	पठिष्यसि	पठिष्यथः	पठिष्यथ
उत्तम पु०	पठिष्यामि	पठिष्यावः	पठिष्यामः

कृदन्त—क्त-पठितः, क्तवत्-पठितवान् (पठितवती स्त्री०), क्त्वा-पठित्वा, तुम्-पठितुम्, शतृ-पठन् (पठन्ती स्त्री०), तव्य-पठितव्यः, अनीय-पठनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-पाठयति-ते। कर्मवाच्य-पठ्यते।

पच् (पकाना)

लट्

प्रथम पु०	पचति	पचतः	पचन्ति
मध्यम पु०	पचसि	पचथः	पचथ
उत्तम पु०	पचामि	पचावः	पचामः

लोट्

प्रथम पु०	पचतु	पचताम्	पचन्तु
मध्यम पु०	पच	पचतम्	पचत
उत्तम पु०	पचानि	पचाव	पचाम

लङ्

प्रथम पु०	अपचत्	अपचताम्	अपचन्
मध्यम पु०	अपचः	अपचतम्	अपचत
उत्तम पु०	अपचम्	अपचाव	अपचाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	पचेत्	पचेताम्	पचेयुः
मध्यम पु०	पचेः	पचेतम्	पचेत
उत्तम पु०	पचेयम्	पचेव	पचेम

लृट्

प्रथम पु०	पक्ष्यति	पक्ष्यतः	पक्ष्यन्ति

मध्यम पु०	पचसि	पचथः	पचथ
उत्तम पु०	पचामि	पचावः	पचामः

कृदन्त—क्त-पक्वः, क्तवत्-पक्ववान् (पक्ववती स्त्री०), क्त्वा-पक्त्वा, तुम्-पक्तुम्, शतृ-पचन् (पचन्ती स्त्री०), तव्य-पक्तव्यः, अनीय-पचनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)—पाचयति-ते। कर्मवाच्य-पच्यते।

रक्ष् (रक्षा करना)

प्रथम पु०	रक्षति	रक्षतः	रक्षन्ति
मध्यम पु०	रक्षसि	रक्षथः	रक्षथ
उत्तम पु०	रक्षामि	रक्षावः	रक्षामः

लोट्

प्रथम पु०	रक्षतु	रक्षताम्	रक्षन्तु
मध्यम पु०	रक्ष	रक्षतम्	रक्षत
उत्तम पु०	रक्षाणि	रक्षाव	रक्षाम

लङ्

प्रथम पु०	अरक्षत्	अरक्षताम्	अरक्षन्
मध्यम पु०	अरक्षः	अरक्षतम्	अरक्षत
उत्तम पु०	अरक्षम्	अरक्षाव	अरक्षाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	रक्षेत्	रक्षेताम्	रक्षेयुः
मध्यम पु०	रक्षेः	रक्षेतम्	रक्षेत
उत्तम पु०	रक्षेयम्	रक्षेव	रक्षेम

लृट्

प्रथम पु०	रक्षिष्यति	रक्षिष्यतः	रक्षिष्यन्ति
मध्यम पु०	रक्षिष्यसि	रक्षिष्यथः	रक्षिष्यथ
उत्तम पु०	रक्षिष्यामि	रक्षिष्यावः	रक्षिष्यामः

कृदन्त—क्त रक्षितः, क्तवत-रक्षितवान् (रक्षितवती स्त्री०), क्त्वा-रक्षित्वा, तुम्-रक्षितुम्, शतृ-रक्षन्, (रक्षन्ती स्त्री०) तव्य-रक्षितव्यः। अनीय-रक्षणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)—रक्षयति-ते। कर्मवाच्य-रक्ष्यते।

वद् (बोलना)

लट्

प्रथम पु०	वदति	वदतः	वदन्ति
मध्यम पु०	वदसि	वदथः	वदथ
उत्तम पु०	वदामि	वदावः	वदामः

लोट्

प्रथम पु०	वदतु	वदताम्	वदन्तु
मध्यम पु०	वद	वदतम्	वदत
उत्तम पु०	वदानि	वदाव	वदाम

लङ्

प्रथम पु०	अवदत्	अवदताम्	अवदन्
मध्यम पु०	अवदः	अवदतम्	अवदत
उत्तम पु०	अवदम्	अवदाव	अवदाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	वदेत्	वदेताम्	वदेयुः
मध्यम पु०	वदेः	वदेतम्	वदेत
उत्तम पु०	वदेयम्	वदेव	वदेम

लृट्

प्रथम पु०	वदिष्यति	वदिष्यतः	वदिष्यन्ति
मध्यम पु०	वदिष्यसि	वदिष्यथः	वदिष्यथ
उत्तम पु०	वदिष्यामि	वदिष्यावः	वदिष्यामः

कृदन्त—क्त-उदितः, क्तवत्-उदितवान् (उदितवती स्त्री०), क्त्वा-उदित्वा, तुम्-वदितुम्, शतृ-वदन् (वदन्ती स्त्री०), तव्य-वदितव्यः, अनीय-वदनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)—वादयति-ते। कर्मवाच्य—उद्यते।

उपसर्गसहित-उपवद् (खुशामद करना), परिवद् (निंदा करना), प्रवद् (बुलाना), प्रतिवद् (उत्तर में कहना, विरोध करना), सम्+वद्=संवद् (बात-चीत करना)।

नम् (झुकना)

लट्

प्रथम पु०	नमति	नमतः	नमन्ति
मध्यम पु०	नमसि	नमथः	नमथ
उत्तम पु०	नमामि	नमावः	नमामः

लोट्

प्रथम पु०	नमतु	नमताम्	नमन्तु
मध्यम पु०	नम	नमतम्	नमत
उत्तम पु०	नमानि	नमाव	नमाम

लङ्

प्रथम पु०	अनमत्	अनमताम्	अनमन्
मध्यम पु०	अनमः	अनमतम्	अनमत
उत्तर पु०	अनमम्	अनमाव	अनमाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	नमेत्	नमेताम्	नमेयुः
मध्यम पु०	नमेः	नमेतम्	नमेत
उत्तम पु०	नमेयम्	नमेव	नमेम

लृट्

प्रथम पु०	नंस्यति	नंस्यतः	नंस्यन्ति
मध्यम पु०	नंस्यसि	नंस्यथः	नंस्यथ
उत्तम पु०	नंस्यामि	नंस्यावः	नंस्यामः

कृदन्त--क्त-नतः, क्तवत-नतवान् (नतवती स्त्री०) क्त्वा-नत्वा, तुमु-नन्तुम्, शतृ-नमन् (नमन्ती स्त्री०), तव्य-नन्तव्यः, अनीय-नमनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-नमयति-नामयति। कर्मवाच्य-नम्यते।

उपसर्गसहित-अवनम् (झुकना), उद्+नम्=उन्नम् (उठना), प्रणम् (प्रणाम करना), विपरिणम् (बदलना, विकृत होना)।

भ्वादिगणके कुछ और परस्मैपदी धातु—

क्रीड् (खेलना)—क्रीडति, क्रीडतु, अक्रीडत्, क्रीडेत्, क्रीडिष्यति।

घ्रा (जिघ्र्-सूंघना)—जिघ्रति, जिघ्रतु, अजिघ्रत्, जिघ्रेत्, घ्रास्यति।

धाव् (दौड़ना)—धावति, धावतु, अधावत्, धावेत्, धाविष्यति।

पत् (गिरना)—पतति, पततु, अपतत्, पतेत्, पतिष्यति।

उपसर्गसहित-अभिपत् (चढ़ाई करना), उत्पत् (उड़ना), निपत् (नीचे उतरना), प्रणिपत् (नमस्कार करना)।

जप् (जपना)—जपति, जपतु, अजपत्, जपेत्, जपिष्यति।

खाद् (खाना)—खादति, खादतु, अखादत्, खादेत्, खादिष्यति।

वस् (रहना)—वसति, वसतु, अवसत्, वसेत्, वत्स्यति।

उपसर्गसहित-उपवस् (निराहार करना), प्रवस् (परदेशमें रहना), प्रतिवस् (पास रहना)।

दा (यच्छ्-देना)—यच्छति, यच्छतु, अयच्छत्, यच्छेत्, दास्यति।

उपसर्गसहित—आदा (लेना), प्रतिदा (बदलना)।

दह् (जलाना)—दहति, दहतु, अदहत्, दहेत्, धक्ष्यति।

वाञ्छ् (चाहना)—वाञ्छति, वाञ्छतु, अवाञ्छत्, वाञ्छेत्, वाञ्छिष्यति।

तॄ (तर्-तैरना)—तरति, तरतु, अतरत्, तरेत्, तरिष्यति।

अर्ज् (कमाना)—अर्जति, अर्जतु, आर्जत्, अर्जेत्, अर्जिष्यति।

अर्च् (पूजना)—अर्चति, अर्चतु, आर्चत्, अर्चेत्, अर्चिष्यति।

हृ (हर्-चुराना)—हरति, हरतु, अहरत्, हरेत्, हरिष्यति।

उपसर्गसहित-अपहृ-(झपट लेना), आहृ (लाना), उद्हृ=उद्धृ (निकालना), परिहृ (त्यागना), प्रहृ (चोट करना), वि-अव-हृ=व्यवहृ (उद्योग धंधा करना) संहृ (समाप्त करना)।

सृ (सरकना)—सरति, सरतु, असरत्, सरेत्, सरिष्यति।

उपसर्गसहित-अनुसृ (पीछे चलना), अभिसृ (पहुंचना, आक्रमण करना), निःसृ (निकलना, खिसकना)।

शुच् (शोक करना)—शोचति, शोचतु, अशोचत्, शोचेत्, शोचिष्यति।

ज्वल् (जलना)—ज्वलति, ज्वलतु, अज्वलत्, ज्वलेत्, ज्वलिष्यति।

आत्मनेपद-प्रत्यय

लट्

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पु०	ते	इते	अन्ते
मध्यम पु०	से	इथे	ध्वे
उत्तम पु०	इ	वहे	महे

लोट्

प्रथम पु०	ताम्	इताम्	अन्ताम्
मध्यम पु०	स्व	इथाम्	ध्वम्
उत्तम पु०	ऐ	आवहै	आमहै

लङ्

प्रथम पु०	त	इताम्	अन्त
मध्यम पु०	थास्	इथाम्	ध्वम्
उत्तम पु०	इ	वहि	महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ईत	ईयाताम्	ईरन्
मध्यम पु०	ईथाः	ईयाथाम्	ईध्वम्
उत्तम पु०	ईय	ईवहि	ईमहि

लृट्

प्रथम पु०	स्यते	स्येते	स्यन्ते
मध्यम पु०	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे
उत्तम पु०	स्ये	स्यावहे	स्यामहे

सेव् (सेवा करना)

लट्

प्रथम पु०	सेवते	सेवेते	सेवन्ते
मध्यम पु०	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे
उत्तम पु०	सेवे	सेवावहे	सेवामहे

लोट्

प्रथम पु०	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्
मध्यम पु०	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्
उत्तम पु०	सेवै	सेवावहै	सेवामहै

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्
मध्यम पु०	सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्
उत्तम पु०	सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि

लृट्

प्रथम पु०	सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते
मध्यम पु०	सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे
उत्तम पु०	सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे

कृदन्त—क्त-सेवितः, क्तवत्-सेवितवान् (सेवितवती स्त्री०) क्त्वा-सेवित्वा, तुम्-सेवितुम्, शानच्-सेवमानः, तव्य-सेवितव्यः, अनीय-सेवनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) सेवयति-ते। कर्मवाच्य-सेव्यते।

मुद् (मोद्) प्रसन्न होना

लट्

प्रथम पु०	मोदते	मोदेते	मोदन्ते
मध्यम पु०	मोदसे	मोदेथे	मोदध्वे
उत्तम पु०	मोदे	मोदावहे	मोदामहे

लोट्

प्रथम पु०	मोदताम्	मोदेताम्	मोदन्ताम्
मध्यम पु०	मोदस्व	मोदेथाम्	मोदध्वम्
उत्तम पु०	मोदै	मोदावहै	मोदामहै

लङ्

प्रथम पु०	अमोदत	अमोदेताम्	अमोदन्त
मध्यम पु०	अमोदथाः	अमोदेथाम्	अमोदध्वम्
उत्तम पु०	अमोदे	अमोदावहि	अमोदामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	मोदेत	मोदेयाताम्	मोदेरन्
मध्यम पु०	मोदेथाः	मोदेयाथाम्	मोदेध्वम्
उत्तम पु०	मोदेय	मोदेवहि	मोदेमहि

लृट्

प्रथम पु०	मोदिष्यते	मोदिष्येते	मोदिष्यन्ते
मध्यम पु०	मोदिष्यसे	मोदिष्येथे	मोदिष्यध्वे
उत्तम पु०	मोदिष्ये	मोदिष्यावहे	मोदिष्यामहे

कृदन्त—क्त-मु (मो) दितः, क्तवत्-मु (मो) दितवान् (मु-(मो) दितवती स्त्री०), क्त्वा-मुदित्वा, तुम्-मोदितुम , शानच्-मोदमानः, तव्य-मोदितव्यः, अनीय-मोदनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-मोदयति-ते । भाववाच्य (मुद्यते) ।

लभ् (पाना)

लट्

प्रथम पु०	लभते	लभेते	लभन्ते
मध्यम पु०	लभसे	लभेथे	लभध्वे
उत्तम पु०	लभे	लभावहे	लभामहे

लोट्

प्रथम पु०	लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्
मध्यम पु०	लभस्व	लभेथाम्	भलध्वम्
उत्तम पु०	लभै	लभावहै	लभामहै

लङ्

प्रथम पु०	अलभत	अलभेताम्	अलभन्त
मध्यम पु०	अलभथाः	अलभेथाम्	अलभध्वम्
उत्तम पु०	अलभे	अलभावहि	अलभामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	लभेत	लभेयाताम्	लभेरन्
मध्यम पु०	लभेथाः	लभेयाथाम्	लभेध्वम्

उत्तम पु०	लभेय	लभेवहि	लभेमहि

लृट्

प्रथम पु०	लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते
मध्यम पु०	लप्स्यसे	लप्स्येथे	लप्स्यध्वे
उत्तम पु०	लप्स्ये	लप्स्यावहे	लप्स्यामहे

कृदन्त—क्त-लब्धः, क्तवत्-लब्धवान्, (लब्धवती स्त्री०) क्त्वा-लब्ध्वा, तुम्-लब्धुम्, शानच्-लभमानः, तव्य-लब्धव्यः, अनीय-लम्भनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)—लम्भयति-ते । कर्मवाच्य-लभ्यते ।

वृध् (वर्ध्) बढ़ना

लट्

प्रथम पु०	वर्धते	वर्धेते	वर्धन्ते
मध्यम पु०	वर्धसे	वर्धेथे	वर्धध्वे
उत्तम पु०	वर्धे	वर्धावहे	वर्धामहे

लोट्

प्रथम पु०	वर्धताम्	वर्धेताम्	वर्धन्ताम्
मध्यम पु०	वर्धस्व	वर्धेथाम्	वर्धध्वम्
उत्तम पु०	वर्धै	वर्धावहै	वर्धामहै

लङ्

प्रथम पु०	अवर्धत	अवर्धेताम्	अवर्धन्त
मध्यम पु०	अवर्धथाः	अवर्धेथाम्	अवर्धध्वम्
उत्तम पु०	अवर्धे	अवर्धावहि	अवर्धामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	वर्धेत	वर्धेयाताम्	वर्धेरन्
मध्यम पु०	वर्धेथाः	वर्धेयाथाम्	वर्धेध्वम्
उत्तम पु०	वर्धेय	वर्धेवहि	वर्धेमहि

लृट्

प्रथम पु०	वर्धिष्यते	वर्धिष्येते	वर्धिष्यन्ते
मध्यम पु०	वर्धिष्यसे	वर्धिष्येथे	वर्धिष्यध्वे

उत्तम पु०	वर्धिष्ये	वर्धिष्यावहे	वर्धिष्यामहे

कृदन्त—क्त-वृद्धः, क्तवत-वृद्धवान् (वृद्धवती स्त्री०), क्त्वा-वृद्ध्वा, तुम्-वर्धितुम्, शानच्-वर्धमानः, तव्य-वर्धितव्यः, अनीय-वर्धनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)—वर्धयति-ते । भाववाच्य—वृध्यते ।

वृत् (वर्त्) होना

लट्

प्रथम पु०	वर्तते	वर्तेते	वर्तन्ते
मध्यम पु०	वर्तसे	वर्तेथे	वर्तध्वे
उत्तम पु०	वर्ते	वर्तावहे	वर्तामहे

लोट्

प्रथम पु०	वर्तताम्	वर्तेताम्	वर्तन्ताम्
मध्यम पु०	वर्तस्व	वर्तेथाम्	वर्तध्वम्
उत्तम पु०	वर्तै	वर्तावहै	वर्तामहै

लङ्

प्रथम पु०	अवर्तत	अवर्तेताम्	अवर्तन्त
मध्यम पु०	अवर्तथाः	अवर्तेथाम्	अवर्तध्वम्
उत्तम पु०	अवर्ते	अवर्तावहि	अवर्तामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	वर्तेत	वर्तेयाताम्	वर्तेरन्
मध्यम पु०	वर्तेथाः	वर्तेयाथाम्	वर्तेध्वम्
उत्तम पु०	वर्तेय	वर्तेवहि	वर्तेमहि

लृट्

प्रथम पु०	वर्तिष्यते	वर्तिष्येते	वर्तिष्यन्ते
मध्यम पु०	वर्तिष्यसे	वर्तिष्येथे	वर्तिष्यध्वे
उत्तम पु०	वर्तिष्ये	वर्तिष्यावहे	वर्तिष्यामहे

कृदन्त—क्त-वृत्तः, क्तवत-वृत्तवान् (वृत्तवती स्त्री०), क्त्वा-वृत्त्वा, तुम्-वरि (री) तुम्, शानच्-वर्तमानः, तव्य-वरि (री) तव्यः, अनीय-वर्तनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-वर्तयति-ते । भाववाच्य-वृत्यते ।

उपसर्गसहित—अनुवृत् (पीछे जाना), अभिवृत् (किसी की ओर जाना), आवृत् (लौटना), निवृत् (लौटना), परआ (परा) वृ (लौटना), प्रवृत् (आरम्भ करना)।

ईक्ष् (देखना)

लट्

प्रथम पु०	ईक्षते	ईक्षेते	ईक्षन्ते
मध्यम पु०	ईक्षसे	ईक्षेथे	ईक्षध्वे
उत्तम पु०	ईक्षे	ईक्षावहे	ईक्षामहे

लोट्

प्रथम पु०	ईक्षताम्	ईक्षेताम्	ईक्षन्ताम्
मध्यम पु०	ईक्षस्व	ईक्षेथाम्	ईक्षध्वम्
उत्तम पु०	ईक्षै	ईक्षावहै	ईक्षामहै

लङ्

प्रथम पु०	ऐक्षत	ऐक्षेताम्	ऐक्षन्त
मध्यम पु०	ऐक्षथाः	ऐक्षेथाम्	ऐक्षध्वम्
उत्तम पु०	ऐक्षे	ऐक्षावहि	ऐक्षामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ईक्षेत	ईक्षेयाताम्	ईक्षेरन्
मध्यम पु०	ईक्षेथाः	ईक्षेयाथाम्	ईक्षेध्वम्
उत्तम पु०	ईक्षेय	ईक्षेवहि	ईक्षेमहि

लृट्

प्रथम पु०	ईक्षिष्यते	ईक्षिष्येते	ईक्षिष्यन्ते
मध्यम पु०	ईक्षिष्यसे	ईक्षिष्येथे	ईक्षिष्यध्वे
उत्तम पु०	ईक्षिष्ये	ईक्षिष्यावहे	ईक्षिष्यामहे

कृदन्त—क्त-ईक्षितः, क्तवत् ईक्षितवान् (ईक्षितवती स्त्री०), क्त्वा-ईक्षित्वा, तुमु-ईक्षितुम् , शानच्-ईक्षमाणः, तव्य-ईक्षितव्यः, अनीय-ईक्षणीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) ईक्षयति-ते । कर्मवाच्य-ईक्ष्यते ।

उपसर्गसहित—अनुईक्ष् (अन्वीक्ष् , ढूँढना), अपईक्ष् (अपेक्ष ,

चाहना), **निर् ईक्ष्** (अच्छी तरह देखना भालना), **परीक्ष्** (परीक्षा लेना), **समीक्ष्** (विचारना), **उपेक्ष्** (बेपरवाही करना) ।

सह् (सहना)

प्रथम पु०	सहते	सहेते	सहन्ते
मध्यम पु०	सहसे	सहेथे	सहध्वे
उत्तम पु०	सहे	सहावहे	सहामहे

लोट्

प्रथम पु०	सहताम्	सहेताम्	सहन्ताम्
मध्यम पु०	सहस्व	सहेथाम्	सहध्वम्
उत्तम पु०	सहै	सहावहै	सहामहै

लङ्

प्रथम पु०	असहत	असहेताम्	असहन्त
मध्यम पु०	असहथाः	असहेथाम्	असहध्वम्
उत्तम पु०	असहे	असहावहि	असहामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	सहेत	सहेयाताम्	सहेरन्
मध्यम पु०	सहेथाः	सहेयाथाम्	सहेध्वम्
उत्तम पु०	सहेय	सहेवहि	सहेमहि

लृट्

प्रथम पु०	सहिष्यते	सहिष्येते	सहिष्यन्ते
मध्यम पु०	सहिष्यसे	सहिष्येथे	सहिष्यध्वे
उत्तम पु०	सहिष्ये	सहिष्यावहे	सहिष्यामहे

कृदन्त—क्त-सोढः, क्तवत्-सोढवान् (सोढवती स्त्री०), क्त्वा-सोढ्वा, तुम्-सहितु-सोढुम्, शानच्-सहमानः, तव्य-सहितव्यः-सोढव्य, अनीय-सहनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) साहयति-ते । भाववाच्य-सह्यते ।

उभयपद-धातु

याच् (मांगना)

परस्मैपद (लट्)

प्रथम पु०	याचति	याचतः	याचन्ति
मध्यम पु०	याचसि	याचथः	याचथ
उत्तम पु०	याचामि	याचावः	याचामः

लोट्

प्रथम पु०	याचतु	याचताम्	याचन्तु
मध्यम पु०	याच	याचतम्	याचत
उत्तम पु०	याचानि	याचाव	याचाम

लङ्

प्रथम पु०	अयाचत	अयाचताम्	अयाचन्
मध्यम पु०	अयाचः	अयाचतम्	अयाचत
उत्तम पु०	अयाचम्	अयाचाव	अयाचाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	याचेत्	याचेताम्	याचेयुः
मध्यम पु०	याचेः	याचेतम्	याचेत
उत्तम पु०	याचेयम्	याचेव	याचेम

लृट्

प्रथम पु०	याचिष्यति	याचिष्यतः	याचिष्यन्ति
मध्यम पु०	याचिष्यसि	याचिष्यथः	याचिष्यथ
उत्तम पु०	याचिष्यामि	याचिष्यावः	याचिष्यामः

आत्मनेपद (लट्)

प्रथम पु०	याचते	याचेते	याचन्ते
मध्यम पु०	याचसे	याचेथे	याचध्वे
उत्तम पु०	याचे	याचावहे	याचांमहे

लोट्

प्रथम पु०	याचताम्	याचेताम्	याचन्ताम्
मध्यम पु०	याचस्व	याचेथाम्	याचध्वम्
उत्तम पु०	याचै	याचावहै	याचामहै

लङ्

प्रथम पु०	अयाचत	अयाचेताम्	अयाचन्त
मध्यम पु०	अयाचथाः	अयाचेथाम्	अयाचध्वम्
उत्तम पु०	अयाचे	अयाचावहि	अयाचामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	याचेत	याचेयाताम्	याचेरन्
मध्यम पु०	याचेथाः	याचेयाथाम्	याचेध्वम्
उत्तम पु०	याचेय	याचेवहि	याचेमहि

लृट्

प्रथम पु०	याचिष्यते	याचिष्येते	याचिष्यन्ते
मध्यम पु०	याचिष्यसे	याचिष्येथे	याचिष्यध्वे
उत्तम पु०	याचिष्ये	याचिष्यावहे	याचिष्यामहे

कृदन्त—क्त-याचितः, क्तवत्-याचितवान् (याचितवती स्त्री०), क्त्वा-याचित्वा, तुम्-याचितुम्, शतृ-याचन् (याचन्ती स्त्री०), शानच्-याचमानः, तव्य-याचितव्यः, अनीय-याचनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) याचयति-ते। कर्मवाच्य-याच्यते।

नी (लेजाना)

परस्मैपद (लट्)

प्रथम पु०	नयति	नयतः	नयन्ति
मध्यम पु०	नयसि	नयथः	नयथ
उत्तम पु०	नयामि	नयावः	नयामः

लोट्

प्रथम पु०	नयतु	नयताम्	नयन्तु
मध्यम पु०	नय	नयतम्	नयत

उत्तम पु०	नयानि	नयाव	नयाम

लङ्

प्रथम पु०	अनयत्	अनयताम	अनयन्
मध्यम पु०	अनयः	अनयतम्	अनयत
उत्तम पु०	अनयम्	अनयाव	अनयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	नयेत्	नयेताम	नयेयुः
मध्यम पु०	नयेः	नयेतम्	नयेत
उत्तम पु०	नयेयम्	नयेव	नयेम

लृट्

प्रथम पु०	नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति
मध्यम पु०	नेष्यसि	नेष्यथः	नेष्यथ
उत्तम पु०	नेष्यामि	नेष्यावः	नेष्यामः

आत्मनेपद (लट्)

प्रथम पु०	नयते	नयेते	नयन्ते
मध्यम पु०	नयसे	नयेथे	नयध्वे
उत्तम पु०	नये	नयावहे	नयामहे

लोट्

प्रथम पु०	नयताम्	नयेताम्	नयन्ताम्
मध्यम पु०	नयस्व	नयेथाम्	नयध्वम्
उत्तम पु०	नयै	नयावहै	नयामहै

लङ्

प्रथम पु०	अनयत	अनयेताम्	अनयन्त
मध्यम पु०	अनयथाः	अनयेथाम्	अनयध्वम्
उत्तम पु०	अनये	अनयावहि	अनयामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	नयेत	नयेयाताम्	नयेरन्
मध्यम पु०	नयेथाः	नयेयाथाम	नयेध्वम्

उत्तम पु०	नयेय	नयेवहि	नयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते
मध्यम पु०	नेष्यसे	नेष्येथे	नेष्यध्वे
उत्तम पु०	नेष्ये	नेष्यावहे	नेष्यामहे

कृदन्त—क्त-नीतः, क्तवत्-नीतवान्, क्त्वा-नीत्वा। तुम्-नेतुम। शतृ-नयन् (नयन्ती स्त्री०), शानच् (नयमानः), तव्य-नेतव्यः, अनीय-नयनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) नाययति-ते। कर्मवाच्य-नीयते।

उपसर्गसहित—अनुनी (प्रसन्न करना), अपनी (ले जाना), आनी (ले आना), निर्णी (निर्णय करना), परिणी (व्याहना) प्रणी (ग्रंथ रचना), विनी (शिक्षित करना)।

कुछ आत्मनेपदी भ्वादिगणी अन्य धातु—

शिक्ष् (सीखना)—शिक्षते, शिक्षताम्, अशिक्षित, शिक्षेत, शिक्षिष्यते।

यत् (यत्न करना)—यतते, यतताम्, अयतत, यतेत, यतिष्यते।

श्लाघ् (प्रशंसा करना)—श्लाघते, श्लाघताम्, अश्लाघत, श्लाघेत, श्लाघिष्यते।

एध् (बढ़ना)—एधते, एधताम्, ऐधत, एधेत, एधिष्यते।

शुभ् (चमकना, अच्छा लगना)—शोभते, शोभताम्, अशोभत, शोभेत, शोभिष्यते।

भाष् (बोलना)—भाषते, भाषताम्, अभाषत, भाषेत, भाषिष्यते।

शङ्क् (संदेह करना)—शङ्कते, शङ्कताम्, अशङ्कत, शङ्केत, शङ्किष्यते।

ध्वंस् (नष्ट होना)—ध्वंसते, ध्वसताम्, अध्वंसत, ध्वंसेत, ध्वंसिष्यते।

कम्प् (कांपना)—कम्पते, कम्पताम्, अकम्पत, कम्पेत, कम्पिष्यते।

डी (डय्-उड़ना)—डयते, डयताम्, अडयत, डयेत, डयिष्यते।

कूर्द् (कूदना)—कूर्दते, कूर्दताम्, अकूर्दत, कूर्देत, कूर्दिष्यते।

रुच् (पसंद आना)—रोचते, रोचताम् , अरोचत, रोचेत, रोचिष्यते ।

बुध् (उभय० जानना)—बोधति, बोधतु, अबोधत् , बोधेत् , बोधिष्यति । बोधते, बोधताम् , अबोधत, बोधेत, बोधिष्यते ।

उपसर्गसहित-अनुबुध् (बूझना), अवबुध् (सीखना, जानना), उद्बुध् (जानना), सम्बुध् (समझना) ।

वह् (उभय० लेजाना, बहाना)—वहति, वहतु, अवहत् , वहेत् , वक्ष्यति । वहते, वहताम् , अवहत, वहेत, वक्ष्यते ।

उपसर्गसहित-अतिवह् (बिताना), अपवह् (दूर करना), उद्वह् (ऊँचा उठाना, ब्याहना), विवह् (ब्याहना) ।

वाक्ययोजनाविधि

जो भी कार्य (क्रिया) होता है उसे करनेवाला कोई न कोई अवश्य होता है, अन्यथा वह कार्य हो ही नहीं सकता ।

२११—क्रियाके करनेवालेको '*कर्ता*' कहते हैं ।

जैसे—(गच्छति) से गम्यमान क्रिया तब हो सकती है, जब कोई जानेवाला हो । अतः जब यह कहा जाय कि—'अश्वः गच्छति' तब क्रिया पूर्ण होती है ।

कई ऐसी क्रियायें होती हैं जिनकी पूर्तिके लिए कोई न कोई जिज्ञासा रहती है और वह जिज्ञासा क्या ? किसे ? किसको ? इन प्रश्नसूचक पदों से उठती है । जैसे—रामः पठति । (राम पढ़ता है ।) इतना ही कहनेसे यह जाननेकी इच्छा होती है कि क्या पढ़ता है ? उस जिज्ञासा को पूर्ण करनेके लिए यदि कहा जाय—पुस्तकं पठति । तो वाक्य पूर्ण हो जाता है । फिर कुछ पूछनेकी इच्छा नहीं रहती । इसी प्रकार नृपः दण्डयति । (राजा दण्ड देता है ।) कहनेसे यह जिज्ञासा होती है कि राजा किसे दण्ड देता है ? जब कहा जाय 'चौरं दण्डयति ।' तब यह वाक्य पूर्ण हो जाता है । ऐसी क्रियाओंको सकर्मक क्रिया कहते हैं और 'क्या ?' किसे ?' किसको ? इन प्रश्नसूचक शब्दोंके जो उत्तर होकर क्रियाके अर्थको पूर्ण करते हैं, वे पद उन क्रियाओंके कर्म होते हैं ।

जिन क्रियाओंके कहनेसे क्या ? किसे ? किसको ? आदिसे कोई जिज्ञासा नहीं उठती, वे क्रियाएं अकर्मक (कर्महीन) हैं। अहं तिष्ठामि (मैं बैठता हूँ), यह कहने से यह प्रश्न नहीं उठता कि क्या बैठता हूँ या किसे बैठता हूँ, या किसको बैठता हूँ। अतः 'तिष्ठति' क्रिया अकर्मक है। इसी प्रकार वृध् (बढ़ना), शी (सोना), भू (होना), ज्वल् (जलना) आदि धातु अकर्मक हैं। इन अर्थोंके धातु अकर्मक होते हैं।

लज्जा सत्ता स्थिति जागरणम् वृद्धिक्षय भय जीवित मरणम्।
शयन क्रीड़ा रूचि दीप्त्यर्थं धातुगणं तमकर्मकमाहुः ॥

लज्जा (शरम खाना), सत्ता (होना), स्थिति (ठहरना, बैठना), जागरण (जागना), वृद्धि (बढ़ना), क्षय (कम होना), भय (डरना), जीवित (जीना), मरण (मरना), शयन (सोना), क्रीड़ा (खेलना), रूचि (पसन्द आना), दीप्ति (चमकना) इन अर्थों के धातु अकर्मक हैं।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

इस योरोप (योरोपीय) के युद्ध में अंगरेज़ों (आङ्गल) ने जर्मनों को जीता है।

मेरी कापी (पत्रसञ्चिका) को किसीने देखा है ?

ईश्वर हम सबकी रक्षा करे।

जिस किसीको देखो मेरा सन्देश दे दो।

सूर्यकी धूप (आतप) से सारा आंगन (अङ्गन) चमक उठा।

दोपहर (मध्याह्न) की धूप तेज़ (तीक्ष्ण, तीव्र) होती है।

इस शबील (प्रपा) से प्यासे (तृषित) लोग ठंडा (शीत) पानी पीते हैं।

एक चोर अस्तबल (वाजिशाला) से मेरा घोड़ा चुरा ले गया।

वीरकी मृत्यु एक वार (सकृत्) होती है और भीरु पुरुषकी बार बार (वारशः)।

तुम्हारे आग्रहसे मोहन शायद मुझे ले जाय।

इस मेलेमें भिखारी इकट्ठे होंगे और भिक्षा मांगेंगे।

उस दूकानपर सूती (कार्पास) और रेशमी वस्त्रोंकी बिक्री (विक्रय) हो रही थी।

मटकी (मणिक) का दूध कसोरे (शराव) में गिर रहा है।

मैं उस दुष्टकी गालिआं (गाली)

न सहूंगा।

उस शिकारीने बकरिओंको बाघसे बचाया।

उसकी कलाई (मणिबन्ध) पर सोनेका (सौवर्ण) कंगन (कङ्कण) है।

आज शनिवार है पाठशाला क्यों नहीं गये ?

तुम्हारी जमात (वर्ग) में कितने (कति) छात्र हिन्दी भाषा पढ़ते हैं।

सज्जन विपत्तिमें किसीको नहीं छोड़ते।

बादलोंसे जलकी बूंदे गिर रही हैं।

तुम्हारी कड़वी (कटु) बातोंसे मेरा चित्त दुःखित हो रहा है।

यह वही बन है जहां राम और सीता रहते थे।

अनुशीलनी—२०

१—पतन्ति, अवतन्त, वर्धिष्यन्ते, भवेयुः, हसेव, गच्छथ, अरक्षाव, रक्षथ, नेष्यावहे, नेष्यसि—इनके धातु, लकार और वचन बताओ।

२—स्मृ के लट्, याच् के लङ्, हृ के लृट्, गम् के लोट् और भू के विधि-लिङ् के रूप लिखो।

३—इनमें सन्धिच्छेद नियम बता कर लिखो।

कस्यापि, विकालाङ्गः, गात्राण्यसीदन्, पालनायायात्वयम्, महाराजस्याज्ञा, विपत्तावपि, पदार्थः, पीताम्बरः, व्याधितस्यौषधम्, यद्यधर्मात्, पश्येदम्।

४—इनके लिए संस्कृत-पद दो:—मांगें, (वे दो) जायेंगे, याद किया, ले जाओ (तुम), रक्षा करोगे, हँसते हैं, गिर जा, देखेगा (तू), बढ़ें।

५—इनमें रिक्त स्थानोंको भरो:—मम भ्राता—पठनाय—। मोहनाय—संदेशं—। वर्षासु पल्वलेषु— —। जलेन वृक्षाः—। यदि—वचनं स्मरिष्यसि तर्हि सुखी—। तस्याः नार्याः नेत्राभ्याम्—विन्दवः—।

६—इन वाक्योंको शुद्ध करो:—

वयं पुस्तकं पठावः। सा वाप्या जलं पिबसि। यूयं किं हसथः। वाणाः मृगस्य शरीरे सीदन्ति। अद्य के पठिष्यतः। पर्वतस्य शिखरात् पाषाणाः अपतत्। त्वम् एतं वानरं गृहं नय। कतोनां वचनेषु माधुर्यं भवन्ति। मूर्खाः सभासु न वदेत्। अस्मिन् स्थाने वहवः जनाः वर्तन्ति। गंगाया जलं शुद्धानि भवन्ति।

७—सकर्मक और अकर्मक धातुमें क्या भेद है ? उदाहरण देकर समझाओ। कोई पांच अकर्मक धातु बताओ।

८—धातु किसे कहते हैं ? धातुओंको कितने भागोंमें बाँटा गया है ? उन भागों को क्या कहते हैं ? गण कितने हैं ? उनके नाम और प्रत्येक का विकरण बताओ।

९—कुल लकार कितने हैं ? इस पुस्तकमें कितने लकारों का वर्णन है ? प्रत्येकका नाम और काल बताओ।

१०—लट्, लोट्, लङ्, विधि-लिङ् और लृट् की विभक्तियाँ परस्मैपद और आत्मनेपदमें लिखो।

दिवादि-गण

१२२—दिवादि-गणके धातुओंका विकरण य है।

दिवादि-गणके धातुओंमें गुण नहीं होता। शेष सब कार्य वे ही होते हैं जो भ्वादि-गणके धातुओंमें होते हैं।

परस्मैपद

नश् (नष्ट होना)

लट् (Present tense)

प्रथम पु०	नश्यति	नश्यतः	नश्यन्ति
मध्यम पु०	नश्यसि	नश्यथः	नश्यथ
उत्तम पु०	नश्यामि	नश्यावः	नश्यामः

लोट् (Imperative mood)

प्रथम पु०	नश्यतु	नश्यताम्	नश्यन्तु
मध्यम पु०	नश्य	नश्यतम्	नश्यत
उत्तम पु०	नश्यानि	नश्याव	नश्याम

लङ् (Imperfect tense)

प्रथम पु०	अनश्यत्	अनश्यताम्	अनश्यन्
मध्यम पु०	अनश्यः	अनश्यतम्	अनश्यत
उत्तम पु०	अनश्यम्	अनश्याव	अनश्याम

विधि-लिङ् (Potential mood)

प्रथम पु०	नश्येत्	नश्येताम्	नश्येयुः
मध्यम पु०	नश्येः	नश्येतम्	नश्येत
उत्तम पु०	नश्येयम्	नश्येव	नश्येम

लृट् (Future tense)

१२३—लृट् लकारोंमें नश् धातु वेट् (वा+इट्) है। अर्थात् इसमें इ जोड़ भी दिया जाता है और नहीं भी जोड़ा जाता।

लृट् (सेट्)

प्रथम पु०	नशिष्यति	नशिष्यतः	नशिष्यन्ति
मध्यम पु०	नशिष्यसि	नशिष्यथः	नशिष्यथ
उत्तम पु०	नशिष्यामि	नशिष्यावः	नशिष्यामः

अनिट्

प्रथम पु०	नंक्ष्यति	नंक्ष्यतः	नंक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	नंक्ष्यसि	नंक्ष्यथः	नंक्ष्यथ
उत्तम पु०	नंक्ष्यामि	नंक्ष्यावः	नंक्ष्यामः

कृदन्त—क्त-नष्टः, क्तवत्-नष्टवान् (नष्टवती स्त्री॰), क्त्वा-नशित्वा-नष्ट्वा-नंष्ट्वा, तुम्-नशितुम्-नंष्टुम्, शतृ-नश्यत् (नश्यन्ती स्त्री॰), तव्य-नशितव्यः—नंष्टव्यः, अनीय-नशनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) नाशयति-ते। भाववाच्य-नश्यते।

दिव् (दीव्) चमकना, जुआ खेलना

लट्

प्रथम पु०	दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति
मध्यम पु०	दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ
उत्तम पु०	दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः

लोट्

प्रथम पु०	दीव्यतु	दीव्यताम्	दीव्यन्तु
मध्यम पु०	दीव्य	दीव्यतम्	दीव्यत

उत्तम पु०	दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम

लङ्

प्रथम पु०	अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्
मध्यम पु०	अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत
उत्तम पु०	अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः
मध्यम पु०	दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत
उत्तम पु०	दीव्येयम	दीव्येव	दीव्येम

लृट्

प्रथम पु०	देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति
मध्यम पु०	देविष्यसि	देविष्यथः	देविष्यथ
उत्तम पु०	देविष्यामि	देविष्यावः	देविष्यामः

कृदन्त—क्त-द्यूतः-द्यूनः, क्तवत्-द्यूत (न) वान् (द्यूत (न) वती स्त्री०), क्त्वा-देवित्वा, तुम्-देवितुम्, शतृ-दीव्यन् (दीव्यन्ती स्त्री०), तव्य-देवितव्यः, अनीय-देवनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-देवयति-ते। कर्मवाच्य-दीव्यते।

नृत् (नाचना)

लट्

प्रथम पु०	नृत्यति	नृत्यतः	नृत्यन्ति
मध्यम पु०	नृत्यसि	नृत्यथः	नृत्यथ
उत्तम पु०	नृत्यामि	नृत्यावः	नृत्यामः

लोट्

प्रथम पु०	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु
मध्यम पु०	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत
उत्तम पु०	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम

लङ्

प्रथम पु०	अनृत्यत्	अनृत्यताम्	अनृत्यन्

मध्यम पु०	अनृत्यः	अनृत्यतम्	अनृत्यत
उत्तम पु०	अनृत्यम्	अनृत्याव	अनृत्याम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	नृत्येत्	नृत्येताम्	नृत्येयुः
मध्यम पु०	नृत्येः	नृत्येतम्	नृत्येत
उत्तम पु०	नृत्येयम्	नृत्येव	नृत्येम

लृट्

प्र० पु०	नर्तिष्यति-नर्त्स्यति	नर्तिष्यतः-नर्त्स्यतः	नर्तिष्यन्ति-नर्त्स्यन्ति
म० पु०	नर्तिष्यसि-नित्स्र्यसि	नर्तिष्यथः-नर्त्स्यथः	नर्तिष्यथ-नर्त्स्यथ
उ० पु०	नर्तिष्यामि-नर्त्स्यामि	नर्तिष्यावः-नर्त्स्यावः	नर्तिष्यामः-नर्त्स्यामः

कृदन्त—क्त-नृत्तः, क्तवत्-नृत्तवान् (नृत्तवती स्त्री०), क्त्वा-नर्तित्वा, तुम्-नर्तितुम्, शतृ-नृत्यन् (नृत्यन्ती स्त्री०), तव्य-नर्तितव्यः, अनीय-नर्तनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) नर्तयति-ते। भाववाच्य-नृत्यते।

शम् (शाम्) शान्त होना

लट्

प्रथम पु०	शाम्यति	शाम्यतः	शाम्यन्ति
मध्यम पु०	शाम्यसि	शाम्यथः	शाम्यथ
उत्तम पु०	शाम्यामि	शाम्यावः	शाम्यामः

लोट्

प्रथम पु०	शाम्यतु	शाम्यताम्	शाम्यन्तु
मध्यम पु०	शाम्य	शाम्यतम्	शाम्यत
उत्तम पु०	शाम्यानि	शाम्याव	शाम्याम

लङ्

प्रथम पु०	अशाम्यत्	अशाम्यताम्	अशाम्यन्
मध्यम पु०	अशाम्यः	अशाम्यतम्	अशाम्यत
उत्तम पु०	अशाम्यम्	अशाम्याव	अशाम्याम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	शाम्येत्	शाम्येताम्	शाम्येयुः

मध्यम पु०	शाम्येः	शाम्येतम्	शाम्येत
उत्तम पु०	शाम्येयम्	शाम्येव	शाम्येम

लृट्

प्रथम पु०	शमिष्यति	शमिष्यतः	शमिष्यन्ति
मध्यम पु०	शमिष्यसि	शमिष्यथः	शमिष्यथ
उत्तम पु०	शमिष्यामि	शमिष्यावः	शमिष्यामः

कृदन्त—क्त-शान्तः, क्तवत्-शान्तवत् (शान्तवती स्त्री०), क्त्वा-शान्त्वा-शमित्वा, तुम-शमितुम्, शत-शाम्यन् (शाम्यन्ती स्त्री०), तव्य-शमितव्यः, अनीय-शमनीयः।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त)-शमयति-ते। कर्मवाच्य-शम्यते।

उपसर्गसहित—प्रशम (शान्त होना), निशम् (सुनना)।

व्यध्—(विध्) बांधना

लट्

प्रथम पु०	विध्यति	विध्यतः	विध्यन्ति
मध्यम पु०	विध्यसि	विध्यथः	विध्यथ
उत्तम पु०	विध्यामि	विध्यावः	विध्यामः

लोट्

प्रथम पु०	विध्यतु	विध्यताम्	विध्यन्तु
मध्यम पु०	विध्य	विध्यतम्	विध्यत
उत्तम पु०	विध्यानि	विध्याव	विध्याम

लङ्

प्रथम पु०	अविध्यत्	अविध्यताम्	अविध्यन्
मध्यम पु०	अविध्यः	अविध्यतम्	अविध्यत
उत्तम पु०	अविध्यम्	अविध्याव	अविध्याम

विधि—लिङ्

प्रथम पु०	विध्येत्	विध्येताम्	विध्येयुः
मध्यम पु०	विध्येः	विध्येतम्	विध्येत
उत्तम पु०	विध्येयम्	विध्येव	विध्येम

लृट्

प्रथम पु०	व्यत्स्यति	व्यत्स्यतः	व्यत्स्यन्ति
मध्यम पु०	व्यत्स्यसि	व्यत्स्यथः	व्यत्स्यथ
उत्तम पु०	व्यत्स्यामि	व्यस्यावः	व्यत्स्यामः

कृदन्त—क्त-विद्धः, क्तवत्-विद्धवान् , क्त्वा-विद्ध्वा, तुम्-वेद्धुम्, शतृ-विध्यन् (विध्यन्ती स्त्री०) । तव्य-वेद्धव्यः, अनीय-वेधनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-वेधयति-ते । कर्मवाच्य-विध्यते ।

भ्रम (भ्राम्) घूमना

लट्

प्रथम पु०	भ्राम्यति	भ्राम्यतः	भ्राम्यन्ति
मध्यम पु०	भ्राम्यसि	भ्राम्यथः	भ्राम्यथ
उत्तम पु०	भ्राम्यामि	भ्राम्यावः	भ्राम्यामः

लोट्

प्रथम पु०	भ्राम्यतु	भ्राम्यताम्	भ्राम्यन्तु
मध्यम पु०	भ्राम्य	भ्राम्यतम्	भ्राम्यत
उत्तम पु०	भ्राम्यानि	भ्राम्याव	भ्राम्याम

लङ्

प्रथम पु०	अभ्राम्यत्	अभ्राम्यताम्	अभ्राम्यन्
मध्यम पु०	अभ्राम्यः	अभ्राम्यतम्	अभ्राम्यत
उत्तम पु०	अभ्राम्यम्	अभ्राम्याव	अभ्राम्याम

विधि—लिङ्

प्रथम पु०	भ्राम्येत्	भ्राम्येताम्	भ्राम्येयुः
मध्यम पु०	भ्राम्येः	भ्राम्येतम्	भ्राम्येत
उत्तम पु०	भ्राम्येयम्	भ्राम्येव	भ्राम्येम

लृट्

प्रथम पु०	भ्रमिष्यति	भ्रमिष्यतः	भ्रमिष्यन्ति
मध्यम पु०	भ्रमिष्यसि	भ्रमिष्यथः	भ्रमिष्यथ
उत्तम पु०	भ्रमिष्यामि	भ्रमिष्यावः	भ्रमिष्यामः

कृदन्त—क्त-भ्रान्तः, क्तवत्-भ्रान्तवान् (भ्रान्तवती स्त्री०), क्त्वा-भ्रमित्वा-भ्रान्त्वा, तुम्-भ्रमितुम्, शतृ-भ्राम्यन् (भ्राम्यन्ती स्त्री०) तव्य-भ्रमितव्यः, अनीय-भ्रमणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त)-भ्रमयति ते। कर्मवाच्य-भ्रम्यते।

दिवादिगण के कुछ परस्मैपदी धातु—

कुप् (क्रोध करना) कुप्यति, कुप्यतु, अकुप्यत्, कुप्येत्, कोपिष्यति।

पुष् (पुष्ट करना, पालना) पुष्यति, पुष्यतु, अपुष्यत्, पुष्येत्, पोक्ष्यति।

सिध् (सिद्ध करना) सिध्यति, सिध्यतु, असिध्यत्, सिध्येत्, सेत्स्यति।

क्रुध्—(क्रोध करना) क्रुध्यति, क्रुध्यतु, अक्रुध्यत्, क्रुध्येत्, क्रोत्स्यति।

सिव्—(सीना) सीव्यति, सीव्यतु, असीव्यत्, सीव्येत्, सेविष्यति।

त्रस्—(डरना) त्रस्यति, त्रस्यतु, अत्रस्यत्, त्रस्येत्, त्रसिष्यति।

क्लिश्—(दुःख सहना) क्लिश्यति, क्लिश्यतु, अक्लिश्यत्, क्लिश्येत्, क्लेशिष्यति।

मुह्—(बेहोश होना) मुह्यति, मुह्यतु, अमुह्यत्, मुह्येत्, मोहिष्यति-मोक्ष्यति।

लुभ्—(लालच करना) लुभ्यति, लुभ्यतु, अलुभ्यत्, लुभ्येत्, लोप्स्यति।

शुध्—(शुद्ध होना) शुध्यति, शुध्यतु, अशुध्यत्, शुध्येत्, शोत्स्यति।

आत्मनेपद

युध् (लड़ना)

लट्

प्रथम पु०	युध्यते	युध्येते	युध्यन्ते
मध्यम पु०	युध्यसे	युध्येथे	युध्यध्वे
उत्तम पु०	युध्ये	युध्यावहे	युध्यामहे

लोट्

प्रथम पु०	युध्यताम्	युध्येताम्	युध्यन्ताम्

मध्यम पु०	युध्यस्व	युध्येथाम्	युध्यध्वम्
उत्तम पु०	युध्यै	युध्यावहै	युध्यामहै

लङ्

प्रथम पु०	अयुध्यत	अयुध्येताम्	अयुध्यन्त
मध्यम पु०	अयुध्यथाः	अयुध्येथाम्	अयुध्यध्वम्
उत्तम पु०	अयुध्ये	अयुध्यावहि	अयुध्यामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	युध्येत	युध्येयाताम्	युध्येरन्
मध्यम पु०	युध्येथाः	युध्येयाथाम्	युध्येध्वम्
उत्तम पु०	युध्येय	युध्येवहि	युध्येमहि

लृट्

प्रथम पु०	योत्स्यते	योत्स्येते	योत्स्यन्ते
मध्यम पु०	योत्स्यसे	योत्स्येथे	योत्स्यध्वे
उत्तम पु०	योत्स्ये	योत्स्यावहे	योत्स्यामहे

कृदन्त—क्त-युद्धम्, क्तवत्-युद्धवान् (युद्धवती स्त्री०), क्त्वा-युद्ध्वा, तुम्-योद्धुम्, शानच्-युध्यमानः, तव्य-योद्धव्यम्, अनीय-योधनीयम्।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) योधयति-ते। भाववाच्य-युध्यते।

विद् (होना)

लट्

प्रथम पु०	विद्यते	विद्येते	विद्यन्ते
मध्यम पु०	विद्यसे	विद्येथे	विद्यध्वे
उत्तम पु०	विद्ये	विद्यावहे	विद्यामहे

लोट्

प्रथम पु०	विद्यताम्	विद्येताम्	विद्यन्ताम्
मध्यम पु०	विद्यस्व	विद्येथाम्	विद्यध्वम्
उत्तम पु०	विद्यै	विद्यावहै	विद्यामहै

लङ्

प्रथम पु०	अविद्यत	अविद्येताम्	अविद्यन्त

मध्यम पु०	अविद्यथा:	अविद्येथाम्	अविद्यध्वम्
उत्तम पु०	अविद्ये	अविद्यावहि	अविद्यामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	विद्येत	विद्येयाताम्	विद्येरन्
मध्यम पु०	विद्येथा:	विद्येयाथाम्	विद्येध्वम्
उत्तम पु०	विद्येय	विद्येवहि	विद्येमहि

लृट्

प्रथम पु०	वेत्स्यते	वेत्स्येते	वेत्स्यन्ते
मध्यम पु०	वेत्स्यसे	वेत्स्येथे	वेत्स्यध्वे
उत्तम पु०	वेत्स्ये	वेत्स्यावहे	वेत्स्यामहे

कृदन्त—क्त-वित्त:, क्तवत-वित्तवान् (वित्तवती स्त्री०), क्त्वा-वित्त्वा, तुम्-वेत्तुम्, शानच्-विद्यमान:, तव्य-वेत्तव्य:, अनीय-वेदनीय:।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) वेदयति-ते। कर्मवाच्य-विद्यते।

जन (जा) उत्पन्न होना

लट्

प्रथम पु०	जायते	जायेते	जायन्ते
मध्यम पु०	जायसे	जायेथे	जायध्वे
उत्तम पु०	जाये	जायावहे	जायामहे

लोट्

प्रथम पु०	जायताम्	जायेताम्	जायन्ताम्
मध्यम पु०	जायस्व	जायेथाम्	जायध्वम्
उत्तम पु०	जायै	जायावहै	जायामहै

लङ्

प्रथम पु०	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
मध्यम पु०	अजायथा:	अजायेथाम्	अजायध्वम्
उत्तम पु०	अजाये	अजायावहि	अजायामहि

लृट्

प्रथम पु०	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते

मध्यम पु०	जनिष्यसे	जनिष्येथे	जनिष्यध्वे
उत्तम पु०	जनिष्ये	जनिष्यावहे	जनिष्यामहे

कृदन्त—क्त-जातः, क्तवत्-जातवान् (जातवती स्त्री०), क्त्वा-जनित्वा, तुम्-जनितुम्, शानच्-जायमानः, तव्य-जनितव्यः, अनीय-जननीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) जनयति । भाववाच्य-जन्यते ।

दिवादि गणके कुछ अन्य आत्मनेपदी धातु—

मन् (मानना) मन्यते, मन्यताम्, अमन्यत, मन्येत, मंस्यते !

उपसर्गसहित—अनुमन् (अनुमान करना), अपमन् (अनादर करना), सम्मन् (आदर करना) ।

भ्रश् (गिरना) भ्रश्यते, भ्रश्यताम्, अभ्रश्यत, भ्रश्येत, भ्राशिष्यते ।

खिद् (थकना) खिद्यते, खिद्यताम्, अखिद्यत, खिद्येत, खेत्स्यते ।

तुदादि-गण

१२४—तुदादि-गणका विकरण भी अ (भ्वादिकी तरह) है ।

किन्तु दोनोंमें भेद यह है कि तुदादिगणके विकरणसे पूर्व गुण नहीं होता ।

तुद् (तङ्ग करना)

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	तुदति	तुदतः	तुदन्ति
मध्यम पु०	तुदसि	तुदथः	तुदथ
उत्तम पु०	तुदामि	तुदावः	तुदामः

लोट्

प्रथम पु०	तुदतु	तुदताम्	तुदन्तु
मध्यम पु०	तुद	तुदतम्	तुदत
उत्तम पु०	तुदानि	तुदाव	तुदाम

लङ्

प्रथम पु०	अतुदत्	अतुदताम्	अतुदन्

मध्यम पु०	अतुदः	अतुदतम्	अतुदत
उत्तम पु०	अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः
मध्यम पु०	तुदेः	तुदेतम्	तुदेत
उत्तम पु०	तुदेयम्	तुदेव	तुदेम

लृट्

प्रथम पु०	तोत्स्यति	तोत्स्यतः	तोत्स्यन्ति
मध्यम पु०	तोत्स्यसि	तोत्स्यथः	तोत्स्यथ
उत्तम पु०	तोत्स्यामि	तोत्स्यावः	तोत्स्यामः

कृदन्त—क्त-तुन्नः, क्तवत्-तुन्नवान् (तुन्नवती स्त्री०), क्त्वा-तुत्वा, तुम्-तोत्तुम् , शतृ-तुदन् (तुदती-न्ती स्त्री०), तव्य-तोत्तव्यः, अनीय-तोदनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) तोदयति-ते । कर्मवाच्य-तुद्यते ।

इष् (इच्छ्) चाहना

लट्

प्रथम पु०	इच्छति	इच्छतः	इच्छन्ति
मध्यम पु०	इच्छसि	इच्छथः	इच्छथ
उत्तम पु०	इच्छामि	इच्छावः	इच्छामः

लोट्

प्रथम पु०	इच्छतु	इच्छताम्	इच्छन्तु
मध्यम पु०	इच्छ	इच्छतम्	इच्छत
उत्तम पु०	इच्छानि	इच्छाव	इच्छाम

लङ्

प्रथम पु०	ऐच्छत्	ऐच्छताम्	ऐच्छन्
मध्यम पु०	ऐच्छः	ऐच्छतम्	ऐच्छत
उत्तम पु०	ऐच्छम्	ऐच्छाव	ऐच्छाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	इच्छेत्	इच्छेताम्	इच्छेयुः

मध्यम पु०	इच्छेः	इच्छेतम्	इच्छेत
उत्तम पु०	इच्छेयम्	इच्छेव	इच्छेम

लृट्

प्रथम पु०	एषिष्यति	एषिष्यतः	एषिष्यन्ति
मध्यम पु०	एषिष्यसि	एषिष्यथः	एषिष्यथ
उत्तम पु०	एषिष्यामि	एषिष्यावः	एषिष्यामः

कृदन्त—क्त-इष्टः, क्तवत-इष्टवान् (इष्टवती स्त्री०), क्त्वा-इष्ट्वा-एषित्वा, तुम्-एष्टुम्, शतृ-इच्छन् (इच्छती-न्ती स्त्री०), तव्य-एष्टव्यः, अनीय-एषणीयः ।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त)-एषयति-ते । कर्मवाच्य-इष्यते ।

उपसर्गसहित—अन्विष् (अन्विष्, ढूंढना), अभीष् (अभीष्, चाहना) ।

स्पृश् (छूना)

लट्

प्रथम पु०	स्पृशति	स्पृशतः	स्पृशन्ति
मध्यम पु०	स्पृशसि	स्पृशथः	स्पृशथ
उत्तम पु०	स्पृशामि	स्पृशावः	स्पृशामः

लोट्

प्रथम पु०	स्पृशतु	स्पृशताम्	स्पृशन्तु
मध्यम पु०	स्पृश	स्पृशतम्	स्पृशत
उत्तम पु०	स्पृशानि	स्पृशाव	स्पृशाम

लङ्

प्रथम पु०	अस्पृशत्	अस्पृशताम्	अस्पृशन्
मध्यम पु०	अस्पृशः	अस्पृशतम्	अस्पृशत
उत्तम पु०	अस्पृशम्	अस्पृशाव	अस्पृशाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	स्पृशेत्	स्पृशेताम्	स्पृशेयुः
मध्यम पु०	स्पृशेः	स्पृशेतम्	स्पृशेत
उत्तम पु०	स्पृशेयम्	स्पृशेव	स्पृशेम

लृट्

प्र० पु०	स्प्रक्ष्यति-स्पर्क्ष्यति	स्प्रक्ष्यतः-स्पर्क्ष्यतः	स्प्रक्ष्यन्ति-स्पर्क्ष्यन्ति
म० पु०	स्प्रक्ष्यसि-स्पर्क्ष्यसि	स्प्रक्ष्यथः-स्पर्क्ष्यथः	स्प्रक्ष्यथ-स्पर्क्ष्यथ
उ० पु०	स्प्रक्ष्यामि-स्पर्क्ष्यामि	स्प्रक्ष्यावः-स्पर्क्ष्यावः	स्प्रक्ष्यामः-स्पर्क्ष्यामः

कृदन्त—क्त-स्पृष्टः, क्तवत्-स्पृष्टवान्, क्त्वा-स्पृष्ट्वा, तुम्-स्प्रष्टुम्-स्पर्ष्टुम्, शतृ-स्पृशन् (स्पृशती-न्ती स्त्री०), तव्य-स्प्रष्टव्यः-स्पर्ष्टव्यः, अनीय-स्पर्शनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) स्पर्शयति-ते। कर्मवाच्य-स्पृश्यते।

प्रच्छ् (पृच्छ्) पूछना

लट्

प्रथम पु०	पृच्छति	पृच्छतः	पृच्छन्ति
मध्यम पु०	पृच्छसि	पृच्छथः	पृच्छथ
उत्तम पु०	पृच्छामि	पृच्छावः	पृच्छामः

लोट्

प्रथम पु०	पृच्छतु	पृच्छताम्	पृच्छन्तु
मध्यम पु०	पृच्छ	पृच्छतम्	पृच्छत
उत्तम पु०	पृच्छानि	पृच्छाव	पृच्छाम

लङ्

प्रथम पु०	अपृच्छत्	अपृच्छताम्	अपृच्छन्
मध्यम पु०	अपृच्छः	अपृच्छतम्	अपृच्छत
उत्तम पु०	अपृच्छम्	अपृच्छाव	अपृच्छाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	पृच्छेत्	पृच्छेताम्	पृच्छेयुः
मध्यम पु०	पृच्छेः	पृच्छेतम्	पृच्छेत
उत्तम पु०	पृच्छेयम्	पृच्छेव	पृच्छेम

लृट्

प्रथम पु०	प्रक्ष्यति	प्रक्ष्यतः	प्रक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	प्रक्ष्यसि	प्रक्ष्यथः	प्रक्ष्यथ
उत्तम पु०	प्रक्ष्यामि	प्रक्ष्यावः	प्रक्ष्यामः

कृदन्त—क्त-पृष्टः, क्तवत्-पृष्टवान् (पृष्टवती स्त्री०), क्त्वा-पृष्ट्वा, तुम्-प्रष्टुम्, शतृ-पृच्छन् (पृच्छती-न्ती स्त्री०), तव्य-प्रष्टव्यः, अनीय-प्रच्छनीयः।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त) प्रच्छयति-ते। कर्मवाच्य-पृच्छ्यते।

उपसर्गसहित—आपृच्छ् (विदा मांगना)।

तुदादि गणके कुछ परस्मैपदी धातु—

लिख् (लिखना)—लिखति, लिखतु, अलिखत्, लिखेत्, लेखिष्यति

विश् (प्रवेश करना)—विशति, विशतु, अविशत्, विशेत्, वेक्ष्यति (यह प्रायः वि उपसर्गसहित आता है)।

सृज् (उत्पन्न करना, त्यागना)—सृजति, सृजतु, असृजत्, सृजेत्, स्रक्ष्यति।

उपसर्गसहित—उत्सृज् (छोड़ना, बढ़ाना), विसृज् (त्यागना), संसृज् (मिलना)।

मिल् (मिलना)—मिलति, मिलतु, अमिलत्, मिलेत्, मेलिष्यति।

मृ (म्रिय्) मरना—आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	म्रियते	म्रियेते	म्रियन्ते
मध्यम पु०	म्रियसे	म्रियेथे	म्रियध्वे
उत्तम पु०	म्रिये	म्रियावहे	म्रियामहे

लोट्

प्रथम पु०	म्रियताम्	म्रियेताम्	म्रियन्ताम्
मध्यम पु०	म्रियस्व	म्रियेथाम्	म्रियध्वम्
उत्तम पु०	म्रियै	म्रियावहै	म्रियामहै

लङ्

प्रथम पु०	अम्रियत	अम्रियेताम्	अम्रियन्त
मध्यम पु०	अम्रियथाः	अम्रियेथाम्	अम्रियध्वम्
उत्तम पु०	अम्रिये	अम्रियावहि	अम्रियामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	म्रियेत	म्रियेयाताम्	म्रियेरन्
मध्यम पु०	म्रियेथाः	म्रियेयाथाम्	म्रियेध्वम्
उत्तम पु०	म्रियेय	म्रियेवहि	म्रियेमहि

मृ धातु लृट् में परस्मैपदी होता है ।—लृट्

प्रथम पु०	मरिष्यति	मरिष्यतः	मरिष्यन्ति
मध्यम पु०	मरिष्यसि	मरिष्यथः	मरिष्यथ
उत्तम पु०	मरिष्यामि	मरिष्यावः	मरिष्यामः

कृदन्त—क्त-मृतः, क्तवत-मृतवान् (मृतवती स्त्री०), क्त्वा-मृत्वा, तुम्-मर्तुम्, शानच्-म्रियमाणः, तव्य-मर्तव्यः, अनीय-मरणीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) मारयति-ते । भाववाच्य-म्रियते ।

उभयपद

विद् (विन्द्), पाना

लट् (परस्मैपद)

प्रथम पु०	विन्दति	विन्दतः	विन्दन्ति
मध्यम पु०	विन्दसि	विन्दथः	विन्दथ
उत्तम पु०	विन्दामि	विन्दावः	विन्दामः

लोट्

प्रथम पु०	विन्दतु	विन्दताम्	विन्दतु
मध्यम पु०	विन्द	विन्दतम्	विन्दत
उत्तम पु०	विन्दानि	विन्दाव	विन्दाम

लङ्

प्रथम पु०	अविन्दत्	अविन्दताम्	अविन्दन्
मध्यम पु०	अविन्दः	अविन्दतम्	अविन्दत
उत्तम पु०	अविन्दम्	अविन्दाव	अविन्दाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	विन्देत्	विन्देताम्	विन्देयुः
मध्यम पु०	विन्देः	विन्देतम्	विन्देत

उत्तम पु०	विन्देयम्	विन्देव	विन्देम

लृट्

प्र० पु०	वेदिष्यति-वेत्स्यति	वेदिष्यतः-वेत्स्यतः	वेदिष्यन्ति-वेत्स्यन्ति
म० पु०	वेदिष्यसि-वेत्स्यसि	वेदिष्यथः-वेत्स्यथः	वेदिष्यथ-वेत्स्यथ
उ० पु०	वेदिष्यामि-वेत्स्यामि	वेदिष्यावः-वेत्स्यावः	वेदिष्यामः-वेत्स्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	विन्दते	विन्देते	विन्दन्ते
मध्यम पु०	विन्दसे	विन्देथे	विन्दध्वे
उत्तम पु०	विन्दे	विन्दावहे	विन्दामहे

लोट्

प्रथम पु०	विन्दताम्	विन्देताम्	विन्दन्ताम्
मध्यम पु०	विन्दस्व	विन्देथाम्	विन्दध्वम्
उत्तम पु०	विन्दै	विन्दावहै	विन्दामहै

लङ्

प्रथम पु०	अविन्दत	अविन्देताम्	अविन्दन्त
मध्यम पु०	अविन्दथाः	अविन्देथाम्	अविन्दध्वम्
उत्तम पु०	अविन्दे	अविन्दावहि	अविन्दामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	विन्देत	विन्देयाताम्	विन्देरन्
मध्यम पु०	विन्देथाः	विन्देयाथाम्	विन्देध्वम्
उत्तम पु०	विन्देय	विन्देवहि	विन्देमहि

लृट्

प्र० पु०	वेदिष्यते-वेत्स्यते	वेदिष्येते-वेत्स्येते	वेदिष्यन्ते-वेत्स्यन्ते
म० पु०	वेदिष्यसे-वेत्स्यसे	वेदिष्येथे-वेत्स्येथे	वेदिष्यध्वे-वेत्स्यध्वे
उ० पु०	वेदिष्ये-वेत्स्ये	वेदिष्यावहे-वेत्स्यावहे	वेदिष्यामहे-वेत्स्यामहे

कृदन्त—क्त-विन्नः-वित्तः, क्तवत्-विन्नवान् वित्तवान् (विन्न (त्त) वती स्त्री०), क्त्वा-वित्त्वा, तुम्-वेदितुम्-वेत्तुम्। शतृ-विन्दन् (विन्दती-न्ती स्त्री०),

शानच्-विन्दमानः । तव्य-वेदितव्यः-वेत्तव्यः, अनीय-वेदनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) वेदयति-ते । कर्मवाच्य विद्यते ।

मुच् (मुञ्च्) छोड़ना

(परस्मैपद) लट्

प्रथम पु०	मुञ्चति	मुञ्चतः	मुञ्चन्ति
मध्यम पु०	मुञ्चसि	मुञ्चथः	मुञ्चथ
उत्तम पु०	मुञ्चामि	मुञ्चावः	मुञ्चामः

लोट्

प्रथम पु०	मुञ्चतु	मुञ्चताम्	मुञ्चन्तु
मध्यम पु०	मुञ्च	मुञ्चतम्	मुञ्चत
उत्तम पु०	मुञ्चानि	मुञ्चाव	मुञ्चाम

लङ्

प्रथम पु०	अमुञ्चत्	अमुञ्चताम्	अमुञ्चन्
मध्यम पु०	अमुञ्चः	अमुञ्चतम्	अमुञ्चत
उत्तम पु०	अमुञ्चम्	अमुञ्चाव	अमुञ्चाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	मुञ्चेत्	मुञ्चेताम्	मुञ्चेयुः
मध्यम पु०	मुञ्चेः	मुञ्चेतम्	मुञ्चेत
उत्तम पु०	मुञ्चेयम्	मुञ्चेव	मुञ्चेम

लट्

प्रथम पु०	मोचयति	मोचयतः	मोचयन्ति
मध्यम पु०	मोचयसि	मोचयथः	मोचयथ
उत्तम पु०	मोचयामि	मोचयावः	मोचयामः

(आत्मनेपद) लट्

प्रथम पु०	मुञ्चते	मुञ्चेते	मुञ्चन्ते
मध्यम पु०	मुञ्चसे	मुञ्चेथे	मुञ्चध्वे
उत्तम पु०	मुञ्चे	मुञ्चावहे	मुञ्चामहे

लोट्

प्रथम पु०	मुञ्चताम्	मुञ्चेताम्	मुञ्चन्ताम्
मध्यम पु०	मुञ्चस्व	मुञ्चेथाम्	मुञ्चध्वम्
उत्तम पु०	मुञ्चै	मुञ्चावहै	मुञ्चामहै

लङ्

प्रथम पु०	अमुञ्चत	अमुञ्चेताम्	अमुञ्चन्त
मध्यम पु०	अमुञ्चथाः	अमुञ्चेथाम्	अमुञ्चध्वम्
उत्तम पु०	अमुञ्चे	अमुञ्चावहि	अमुञ्चामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	मुञ्चेत	मुञ्चेयाताम्	मुञ्चेरन्
मध्यम पु०	मुञ्चेथाः	मुञ्चेयाथाम्	मुञ्चेध्वम्
उत्तम पु०	मुञ्चेय	मुञ्चेवहि	मुञ्चेमहि

लृट्

प्रथम पु०	मोक्ष्यते	मोक्ष्येते	मोक्ष्यन्ते
मध्यम पु०	मोक्ष्यसे	मोक्ष्येथे	मोक्ष्यध्वे
उत्तम पु०	मोक्ष्ये	मोक्ष्यावहे	मोक्ष्यामहे

कृदन्त—क्त-मुक्तः, क्तवत्-मुक्तवान् (मुक्तवती स्त्री०), क्त्वा मुक्त्वा, तुम्-मोक्तुम्; शतृ-मुञ्चन् (मुञ्चती-न्ती स्त्री०) शानच्-मुञ्चमानः, तव्य-मोक्तव्यः, अनीय-मोचनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) मोचयति-ते। कर्मवाच्य-मुच्यते।

तुदादिगण के अन्य उभयपदी धातु

सिच्—(सिञ्च्, सींचना) सिञ्चति, सिञ्चतु, असिञ्चत्, सिञ्चेत्, सेक्ष्यति। सिञ्चते, सिञ्चताम्, असिञ्चत, सिञ्चेत, सेक्ष्यते।

अभिषिच्—(अभिषेक करना)।

लिप्—(लिम्प्, लीपना) लिम्पति, लिम्पतु, अलिम्पत्, लिम्पेत्, लेप्स्यति। लिम्पते, लिम्पताम्, अलिम्पत, लिम्पेत, लेप्स्यते।

क्षिप्—(फेंकना) क्षिपति, क्षिपतु, अक्षिपत्, क्षिपेत्, क्षेप्स्यति।

क्षिपते, क्षिपताम्, अक्षिपत, क्षिपेत, क्षेप्स्यते।

उपसर्ग सहित—अधिक्षिप्—(गाली देना), उत्क्षिप् (ऊपर फेंकना, उछालना), निक्षिप् (नीचे रखना, इमानत रखना), प्रक्षिप् (फेंकना) संक्षिप् (छोटा करना)।

चुरादि-गण

१२५—चुरादिगण के धातुओं का विकरण अय है।

चुरादिगण के सब धातु प्रायः उभयपदी हैं।

चुर् (चुराना)

लट्

प्रथम पु०	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पु०	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पु०	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लोट्

प्रथम पु०	चोरयतु	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पु०	चोरय	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पु०	चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पु०	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पु०	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

लङ्

प्रथम पु०	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पु०	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पु०	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

१२६—लृट् में भी चुरादि-गण के धातुओं के बाद गण-विकरण (अय) जोड़ा जाता है। चुर् + अय + इ + स्यति = चोरयिस्यति = चोरयिष्यति।

प्रथम पु०	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति

मध्यम पु०	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पु०	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पु०	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पु०	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लोट्

प्रथम पु०	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पु०	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पु०	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पु०	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पु०	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पु०	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पु०	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-चोरितः, क्तवत्-चोरितवान् (चोरितवती स्त्री०), क्त्वा-चोरयित्वा, तुम्-चोरयितुम्, शतृ-चोरयन् (चोरयन्ती-स्त्री०) शानच्-चोरयमाणः। तव्य-चोरयितव्यः, अनीय-चोरणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) चोरयति-ते। कर्मवाच्य-चोर्यते।

चित् (चिन्त्) सोचना

(परस्मैपद) लट्

प्रथम पु०	चिन्तयति	चिन्तयतः	चिन्तयन्ति
मध्यम पु०	चिन्तयसि	चिन्तयथः	चिन्तयथ
उत्तम पु०	चिन्तयामि	चिन्तयावः	चिन्तयामः

लोट्

प्रथम पु०	चिन्तयतु	चिन्तयताम	चिन्तयन्तु
मध्यम पु०	चिन्तय	चिन्तयतम्	चिन्तयत
उत्तम पु०	चिन्तयानि	चिन्तयाव	चिन्तयाम

लङ्

प्रथम पु०	अचिन्तयत	अचिन्तयताम्	अचिन्तयन
मध्यम पु०	अचिन्तयः	अचिन्तयतम	अचिन्तयत
उत्तम पु०	अचिन्तयम्	अचिन्तयाव	अचिन्तयाम

विधि लिङ्

प्रथम पु०	चिन्तयेत्	चिन्तयेताम्	चिन्तयेयुः
मध्यम पु०	चिन्तयेः	चिन्तयेतम्	चिन्तयेत
उत्तम पु०	चिन्तयेयम्	चिन्तयेव	चिन्तयेम

लृट्

प्रथम पु०	चिन्तयिष्यति	चिन्तयिष्यतः	चिन्तयिष्यन्ति
मध्यम पु०	चिन्तयिष्यसि	चिन्तयिष्यथः	चिन्तयिष्यथ
उत्तम पु०	चिन्तयिष्यामि	चिन्तयिष्यावः	चिन्तयिष्याम

(आत्मनेपद) लट्

प्रथम पु०	चिन्तयते	चिन्तयेते	चिन्तयन्ते
मध्यम पु०	चिन्तयसे	चिन्तयेथे	चिन्तयध्वे
उत्तम पु०	चिन्तये	चिन्तयावहे	चिन्तयामहे

लोट्

प्रथम पु०	चिन्तयताम	चिन्तयेताम	चिन्तयन्ताम्
मध्यम पु०	चिन्तयस्व	चिन्तयेथाम	चिन्तयध्वम
उत्तम पु०	चिन्तयै	चिन्तयावहै	चिन्तयामहै

लङ्

प्रथम पु०	अचिन्तयत	अचिन्तयेताम	अचिन्तयन्त
मध्यम पु०	अचिन्तयथाः	अचिन्तयेथाम	अचिन्तयध्वम
उत्तम पु०	अचिन्तये	अचिन्तयावहि	अचिन्तयामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	चिन्तयेत	चिन्तयेयाताम्	चिन्तयेरन्
मध्यम पु०	चिन्तयेथाः	चिन्तयेयाथाम्	चिन्तयेध्वम्
उत्तम पु०	चिन्तयेय	चिन्तयेवहि	चिन्तयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	चिन्तयिष्यते	चिन्तयिष्येते	चिन्तयिष्यन्ते
मध्यम पु०	चिन्तयिष्यसे	चिन्तयिष्येथे	चिन्तयिष्यध्वे
उत्तम पु०	चिन्तयिष्ये	चिन्तयिष्यावहे	चिन्तयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-चिन्तितः, क्तवत्-चिन्तितवान् , (चिन्तितवती स्त्री०) क्त्वा-चिन्तयित्वा, तुम्-चिन्तयितुम् , शतृ चिन्तयन् (चिन्तयन्ती स्त्री०), शानच्-चिन्तयमानः । तव्य-चिन्तयितव्यः, अनीय-चिन्तनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) चिन्तयति-ते । कर्मवाच्य-चिन्त्यते ।

कथ् (कहना)

(परस्मैपद) लट्

प्रथम पु०	कथयति	कथयतः	कथयन्ति
मध्यम पु०	कथयसि	कथयथः	कथयथ
उत्तम पु०	कथयामि	कथयावः	कथयामः

लोट्

प्रथम पु०	कथयतु	कथयताम्	कथयन्तु
मध्यम पु०	कथय	कथयतम्	कथयत
उत्तम पु०	कथयानि	कथयाव	कथयाम

लङ्

प्रथम पु०	अकथयत्	अकथयताम्	अकथयन्
मध्यम पु०	अकथयः	अकथयतम्	अकथयत
उत्तम पु०	अकथयम्	अकथयाव	अकथयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	कथयेत्	कथयेताम्	कथयेयुः
मध्यम पु०	कथयेः	कथयेतम्	कथयेत

उत्तम पु०	कथयेयम्	कथयेव	कथयेम

लृट्

प्रथम पु०	कथयिष्यति	कथयिष्यतः	कथयिष्यन्ति
मध्यम पु०	कथयिष्यसि	कथयिष्यथः	कथयिष्यथ
उत्तम पु०	कथयिष्यामि	कथयिष्यावः	कथयिष्यामः

(आत्मनेपद) लट्

प्रथम पु०	कथयते	कथयेते	कथयन्ते
मध्यम पु०	कथयसे	कथयेथे	कथयध्वे
उत्तम पु०	कथये	कथयावहे	कथयामहे

लोट्

प्रथम पु०	कथयताम्	कथयेताम्	कथयन्ताम्
मध्यम पु०	कथयस्व	कथयेथाम्	कथयध्वम्
उत्तम पु०	कथयै	कथयावहै	कथयामहै

लङ्

प्रथम पु०	अकथयत	अकथयेताम्	अकथयन्त
मध्यम पु०	अकथयथाः	अकथयेथाम्	अकथयध्वम्
उत्तम पु०	अकथये	अकथयावहि	अकथयामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	कथयेत	कथयेयाताम्	कथयेरन्
मध्यम पु०	कथयेथाः	कथयेयाथाम्	कथयेध्वम्
उत्तम पु०	कथयेय	कथयेवहि	कथयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	कथयिष्यते	कथयिष्येते	कथयिष्यन्ते
मध्यम पु०	कथयिष्यसे	कथयिष्येथे	कथयिष्यध्वे
उत्तम पु०	कथयिष्ये	कथयिष्यावहे	कथयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-कथितः, क्तवत्-कथितवान् (कथितवती स्त्री०), क्त्वा-कथयित्वा, तुमुन्-कथयितुम्, शतृ-कथयन् (कथयन्ती स्त्री०), शानच्-कथयमानः तव्य-कथयितव्यः, अनीय-कथनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) कथयति-ते । कर्मवाच्य--कथ्यते ।

तड् (ताड्) पीटना

(परस्मैपद) लट्

प्रथम पु०	ताडयति	ताडयतः	ताडयन्ति
मध्यम पु०	ताडयसि	ताडयथः	ताडयथ
उत्तम पु०	ताडयामि	ताडयावः	ताडयामः

लोट्

प्रथम पु०	ताडयतु	ताडयताम्	ताडयन्तु
मध्यम पु०	ताडय	ताडयतम्	ताडयत
उत्तम पु०	ताडयानि	ताडयाव	ताडयाम

लङ्

प्रथम पु०	अताडयत्	अताडयताम्	अताडयन्
मध्यम पु०	अताडयः	अताडयतम्	अताडयत
उत्तम पु०	अताडयम्	अताडयाव	अताडयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ताडयेत्	ताडयेताम्	ताडयेयुः
मध्यम पु०	ताडयेः	ताडयेतम	ताडयेत
उत्तम पु०	ताडयेयम्	ताडयेव	ताडयेम

लृट्

प्रथम पु०	ताडयिष्यति	ताडयिष्यतः	ताडयिष्यन्ति
मध्यम पु०	ताडयिष्यसि	ताडयिष्यथः	ताडयिष्यथ
उत्तम पु०	ताडयिष्यामि	ताडयिष्यावः	ताडयिष्यामः

(आत्मनेपद) लट्

प्रथम पु०	ताडयते	ताडयेते	ताडयन्ते
मध्यम पु०	ताडयसे	ताडयेथे	ताडयध्वे
उत्तम पु०	ताडये	ताडयावहे	ताडयामहे

लोट्

प्रथम पु०	ताडयताम्	ताडयेताम्	ताडयन्ताम्

मध्यम पु०	ताडयस्व	ताडयेथाम्	ताडयध्वम्
उत्तम पु०	ताडयै	ताडयावहै	ताडयामहै

लङ्

प्रथम पु०	अताडयत	अताडयेताम्	अताडयन्त
मध्यम पु०	अताडयथाः	अताडयेथाम्	अताडयध्वम्
उत्तम पु०	अताडये	अताडयावहि	अताडयामहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ताडयेत	ताडयेयाताम्	ताडयेरन्
मध्यम पु०	ताडयेथाः	ताडयेयाथाम्	ताडयेध्वम्
उत्तम पु०	ताडयेय	ताडयेवहि	ताडयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	ताडयिष्यते	ताडयिष्येते	ताडयिष्यन्ते
मध्यम पु०	ताडयिष्यसे	ताडयिष्येथे	ताडयिष्यध्वे
उत्तम पु०	ताडयिष्ये	ताडयिष्यावहे	ताडयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-ताडितः, क्तवत्-ताडितवान् (ताडितवती स्त्री०), क्त्वा-ताडयित्वा, तुम्-ताडयितुम्, शतृ-ताडयन्, (ताडयन्ती स्त्री०) शानच्-ताडयमानः, तव्य-ताडयितव्यः, अनीय-ताडनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) ताडयति-ते। कर्मवाच्य-ताड्यते।

भक्ष् (खाना)

(परस्मैपद) लट्

प्रथम पु०	भक्षयति	भक्षयतः	भक्षयन्ति
मध्यम पु०	भक्षयसि	भक्षयथः	भक्षयथ
उत्तम पु०	भक्षयामि	भक्षयावः	भक्षयामः

लोट्

प्रथम पु०	भक्षयतु	भक्षयताम्	भक्षयन्तु
मध्यम पु०	भक्षय	भक्षयतम्	भक्षयत
उत्तम पु०	भक्षयाणि	भक्षयाव	भक्षयाम

लङ्

प्रथम पु०	अभक्षयत्	अभक्षयताम्	अभक्षयन्
मध्यम पु०	अभक्षयः	अभक्षयतम्	अभक्षयत
उत्तम पु०	अभक्षयम्	अभक्षयाव	अभक्षयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	भक्षयेत्	भक्षयेताम्	भक्षयेयुः
मध्यम पु०	भक्षयेः	भक्षयेतम्	भक्षयेत
उत्तम पु०	भक्षयेयम्	भक्षयेव	भक्षयेम

लृट्

प्रथम पु०	भक्षयिष्यति	भक्षयिष्यतः	भक्षयिष्यन्ति
मध्यम पु०	भक्षयिष्यसि	भक्षयिष्यथः	भक्षयिष्यथ
उत्तम पु०	भक्षयिष्यामि	भक्षयिष्यावः	भक्षयिष्यामः

(आत्मनेपद) लट्

प्रथम पु०	भक्षयते	भक्षयेते	भक्षयन्ते
मध्यम पु०	भक्षयसे	भक्षयेथे	भक्षयध्वे
उत्तम पु०	भक्षये	भक्षयावहे	भक्षयामहे

लोट्

प्रथम पु०	भक्षयताम्	भक्षयेताम्	भक्षयन्ताम्
मध्यम पु०	भक्षयस्व	भक्षयेथाम्	भक्षयध्वम्
उत्तम पु०	भक्षयै	भक्षयावहै	भक्षयामहै

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	भक्षयेत	भक्षयेयाताम्	भक्षयेरन्
मध्यम पु०	भक्षयेथाः	भक्षयेयाथाम्	भक्षयेध्वम्
उत्तम पु०	भक्षयेय	भक्षयेवहि	भक्षयेमहि

लृट्

प्रथम पु०	भक्षयिष्यते	भक्षयिष्येते	भक्षयिष्यन्ते
मध्यम पु०	भक्षयिष्यसे	भक्षयिष्येथे	भक्षयिष्यध्वे
उत्तम पु०	भक्षयिष्ये	भक्षयिष्यावहे	भक्षयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-भक्षितः, क्तवत्-भक्षितवान् (भक्षितवती स्त्री०), क्त्वा-भक्षयित्वा, तुम्-भक्षयितुम्, शतृ-भक्षयन् (भक्षयन्ती स्त्री०) शानच्-भक्षयमाणः, तव्य-भक्षयितव्यः, अनीय-भक्षणीयः।

प्रेरणार्थ—(णिजन्त) भक्षयति-ते। कर्मवाच्य-भक्ष्यते।

चुरादि-गणके कुछ अन्य धातु—

गण्—(गिनना)—गणयति, गणयतु, अगणयत्, गणयेत्, गणयिष्यति। गणयते, गणयताम्, अगणयत, गणयेत, गणयिष्यते।

पूज्—(पूजना)—पूजयति, पूजयतु, अपूजयत्, पूजयेत्, पूजयिष्यति। पूजयते, पूजयताम्, अपूजयत, पूजयेत, पूजयिष्यते।

तुल्—(तोलना)—तोलयति, तोलयतु, अतोलयत्, तोलयेत्, तोलयिष्यति। तोलयते, तोलयताम्, अतोलयत, तोलयेत, तोलयिष्यते।

क्षल्—(क्षालन, धोना)—क्षालयति, क्षालयतु, अक्षालयत्, क्षालयेत्, क्षालयिष्यति। क्षालयते, क्षालयताम्, अक्षालयत, क्षालयेत, क्षालयिष्यते।

सूच्—(सूचना देना)—सूचयति, सूचयतु, असूचयत्, सूचयेत्, सूचयिष्यति। सूचयते, सूचयताम्, असूचयत, सूचयेत, सूचयिष्यते।

पाल्—(पालना)—पालयति, पालयतु, अपालयत्, पालयेत्, पालयिष्यति, पालयते, पालयताम्, अपालयत, पालयेत, पालयिष्यते।

चूर्ण्—(पीसना)—चूर्णयति, चूर्णयतु, अचूर्णयत्, चूर्णयेत्, चूर्णयिष्यति। चूर्णयते, चूर्णयताम्, अचूर्णयत, चूर्णयेत, चूर्णयिष्यते।

गवेष्—(ढूंढ़ना)—गवेषयति, गवेषयतु, अगवेषयत्, गवेषयेत्, गवेषयिष्यति। गवेषयते, गवेषयताम्, अगवेषयत, गवेषयेत, गवेषयिष्यते।

लकारों के प्रयोग (Use of Tenses)

लट् (Present tense)

१२६—लट् का प्रयोग (क) सामान्य वर्तमानमें होता है। जैसे—अस्यां पाठशालायाम् अद्य अनध्यायः वर्तते। अहं शिवं नमामि।

(ख)—*शाश्वतिक* (सच्ची) बातोंके कहनेमें प्रयोग होता है।

जैसे—सूर्यः पूर्वे उदयते। अग्नेः प्रकाशः अन्धकारं हरति।

(ग) कभी-कभी *आसन्न-भविष्यत्* अर्थमें प्रयोग होता है।

जैसे—अयम् अहम् आगच्छामि। (मैं अभी आता हूँ)।

(घ) ऐतिहासिक घटनाओं और *आख्यायिकाओंके* वर्णनमें प्रयोग होता है। जैसे—प्रतापः मानसिंहं वदति तव मम च साम्मुख्यं युद्धस्थले भविष्यति इति। एकः मेषः कस्यचित् नृपस्य महानसे यत् किञ्चित् पश्यति सर्वं भक्षयति।

(ङ) क्रियाके *सातत्य* (Continuation) को बतानेमें।

जैसे—मोहनः स्वपाठं पठति (पढ़ रहा है)। अयं यात्रिकः हरिद्वारं गच्छति (जा रहा है)।

लोट् (Imperative mood)

१२७—*लोट्* का प्रयोग *आज्ञा, अनुमति, प्रार्थना, उपदेश* आदि अर्थों में होता है। जैसे—(आज्ञा), न्यायाधीशः—एतं दुष्टं कारागारे क्षिपत। (अनुमति), गच्छानि किम् ? (क्या जाऊँ ?)। (प्रार्थना), अद्य यूयं मम गृहे एव भोजनं भक्षयत। (आज आप मेरे घर ही भोजन खायें)। (उपदेश), अनृतं मा वदत (झूठ मत बोलो)।

विधि-लिङ् (Potential mood)

१२८—*विधि-लिङ्* का प्रयोग भी *लोटके* ही अर्थोंमें होता है, परन्तु इसका विशेष प्रयोग *शास्त्र-विधिमें* होता है। जैसे—प्रातः सन्ध्याम् उपासीत (प्रातःकाल सन्ध्या करनी चाहिए)।

हेतुहेतुमद्भूत (Conditional) के अर्थमें भी *लिङ्* का सकता है। जैसे—वर्षा चेत् न भवेत्, सस्यं कथं वृद्धिमाप्नुयात्।

लङ् (Past Imperfect tense)

प्राचीन कालमें जब संस्कृत-भाषा सार्वजनिक बोल-चाल की भाषा थी तो बहुत पुराने भूतकाल, कुछ थोड़ा पुराने भूतकाल और आसन्न-भूतकाल के लिए अलग-अलग लकारोंका प्रयोग होता था। परन्तु ज्यों-ज्यों संस्कृतका प्रचार कम होता गया त्यों त्यों इन लकारोंका भेद भी लुप्त होता गया। कुछ समय से अब सबके सब भूत-कालिक लकार भूतकालमें प्रयुक्त होते हैं। इसलिए लङ् से ही केवल भूतकालिक क्रियाको बताने का काम चल सकता है।

१२९—लङ् का **प्रयोग** *सामान्यभूत* **और** *अनद्यतनभूत* **(जो आज का नहीं) अर्थ में आता है।** जैसे—अयोध्यायां दशरथः नृपः अभवत्। रविवासरेऽस्माकं कक्षायाम् अध्यापकः नागच्छत्। मम माता ह्यः गृहम् आगच्छत्।

(क)—**सातत्य को बतानेके लिए।** जैसे—मोहनः सर्वं दिवसं व्याकरणम् अपठत्।

किसी धातुके लट्-रूपके अन्तमें 'स्म' लगानेसे भूतकालका बोध होता है। जैसे—सर्वे पौराः नगरं गच्छन्तिस्म (जा रहे थे)।

लृट् (Simple Future)

१३०—लृट् **का प्रयोग** *सामान्य-भविष्यत्* **में होता है।**

जैसे—शकुन्तला पत्युः गृहं यास्यति।

कभी-कभी लृट् का प्रयोग लोट् के अर्थमें भी होता है। जैसे—मम गृहात् भोजनम् आनेष्यसि। (मेरे घर से भोजन लाना)।

इनका अनुवाद संस्कृत में करोः—

यदि बहुत वर्षा होगी तो सब खेत (क्षेत्र) नष्ट हो जायेंगे।

शकुनि और युधिष्ठिर पासों (अक्ष) से जुआ खेलते थे।

महल की ऊँची चोटी (शिखर) पर कई मोर नाच रहे हैं।

अरे क्रूर (कुटिल) शिकारी (व्याध), इस नुकीले (निशित) तीरसे बेचारे (वराक) हिरणको मत मार ।

गर्मीके मौसममें कई ग़रीब लोग हैज़े (विसूचिका) से मर जायेंगे ।

नंगे (नग्न, अनावृत) पांवोंसे इस कंटीली (कण्टकित) भूमिपर मत चलो ।

उसका व्याख्यान सुननेसे हमारा चित्त शान्त हो गया ।

अच्छे पुरुषको दुर्जनोंसे डर रहता है ।

क्या तुम भोजन खा रहे हो रमेश ?

जब मैं आया था तो दामोदर भी खाना खा रहा था ।

इन भोले (मुग्ध) पशुओंको मत मारो ।

जब वह तुमसे मेरा हाल (समाचार) पूछे तो सचसच बता देना ।

लोगोंसे खचाखच भरे (संकीर्ण) हुए मार्गमें कंधेसे कंधा (स्कन्ध) छू रहा था ।

अनुशीलनी—२१

१. चेतस्यावहे, युध्यध्वम् , जायामहै, ऐच्छाव, मुञ्चेरन् , स्पृशाम, शाम्यन्तु, व्यत्स्यामि, स्प्रक्ष्यथ—इनके धातु, लकार, पुरुष और वचन लिखो ।

२. चिन्त् के लङ् , स्पृश् के लोट् , विद् के विधि-लिङ् और प्रच्छ् के लृट् के रूप लिखो ।

३. जीवितस्यापि, सुकुरयान्यारभध्वम् , सूर्यस्योदये, क्षणायोद्वाहः, अभ्यर्थाः, एकैकः, तथापि, चान्नम्—इनमें सन्धिच्छेद करो ।

४. इन पदोंको जोड़ कर पूर्णवाक्य बनाओ—

योत्स्ये, विन्दन्ति, नमथ, पास्यामः, व्यत्स्यति, स्मरामि, जायेरन् , इच्छन्तु, मन्यन्ति, अभवत् ।

क्रियाप्रकरण—२

परस्मैपद

अदादि-आदि शेष गणोंके धातुओंके परस्मैपदमें लट् , लोट्

और लङ् की विभक्तियोंके रूप प्रायः वेही रहते हैं जो उनके पीछे आ चुके हैं। केवल,

१—लोट् का मध्यमपुरुष-एकवचन हि होता है और—

२—लङ् के प्रथमपुरुष-बहुवचनमें अन् के स्थान पर कहीं कहीं उस् हो जाता है।

३—विधि-लिङ् की विभक्तियों बिल्कुल अलग हैं। वे ये हैं—

प्रथम पु०	यात्	याताम्	युः
मध्यम पु०	याः	यातम्	यात
उत्तम पु०	याम्	याव	याम

आत्मनेपद

आत्मनेपदमें लट्, लोट् और लङ् की विभक्तियोंमें कुछ भेद है।

लट्

प्रथम पु०	ते	आते	अते
मध्यम पु०	से	आथे	ध्वे
उत्तम पु०	ए	वहे	महे

लोट्

प्रथम पु०	ताम्	आताम्	अताम्
मध्यम पु०	स्व	आताम्	ध्वम्
उत्तम पु०	ऐ	आवहै	आमहै

लङ्

प्रथम पु०	त	आताम्	अत
मध्यम पु०	थाः	आथाम्	ध्वम्
उत्तम पु०	इ	वहि	महि

विधि-लिङ् और लट् की विभक्तियां वही हैं।

अदादि-गण

१३१—अदादि-गणमें धातु और विभक्तिके मध्यमें कोई

विकरण नहीं आता।

परस्मैपद

अद् (खाना) लट्.

प्रथम पु०	अत्ति	अत्तः	अदन्ति
मध्यम पु०	अत्सि	अत्थः	अत्थ
उत्तम पु०	अद्मि	अद्वः	अद्मः

लोट्

प्रथम पु०	अत्तु	अत्ताम्	अदन्तु
मध्यम पु०	अद्धि	अत्तम्	अत्त
उत्तम पु०	अदानि	अदाव	अदाम

लङ्

प्रथम पु०	आदत्	आत्ताम्	आदन्
मध्यम पु०	आदः	आत्तम्	आत्त
उत्तम पु०	आदम्	आद्व	आद्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	अद्यात्	अद्याताम्	अद्युः
मध्यम पु०	अद्याः	अद्यातम्	अद्यात
उत्तम पु०	अद्याम्	अद्याव	अद्याम

लृट्

प्रथम पु०	अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यन्ति
मध्यम पु०	अत्स्यसि	अत्स्यथः	अत्स्यथ
उत्तम पु०	अत्स्यामि	अत्स्यावः	अत्स्यामः

कृदन्त—क्त-जग्धः (अन्न-भोजन आदि), क्तवत्-जग्धवान्, क्त्वा,-जग्ध्वा, तुन्- अत्तुम्, शतृ-अदत् (अदती स्त्री०) तव्य- अत्तव्यः। अनीय-अदनीयः।

प्रेरणार्थक —(णिजन्त) आदयति-ते कर्मवाच्य-अद्यते।

अस् (होना)

लट्

प्रथम पु०	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पु०	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पु०	अस्मि	स्वः	स्मः

लोट्

प्रथम पु०	अस्तु	स्ताम्	सन्तु
मध्यम पु०	एधि	स्तम्	स्त
उत्तम पु०	असानि	असाव	असाम

लङ्

प्रथम पु०	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पु०	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पु०	आसम्	आस्व	आस्म

वि० लिङ्

प्रथम पु०	स्यात्	स्याताम्	स्युः
मध्यम पु०	स्याः	स्यातम्	स्यात
उत्तम पु०	स्याम्	स्याव	स्याम

लृट्

प्रथम पु०	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पु०	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पु०	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

कृदन्त—क्त-भूतः, क्तवत्-भूतवान् । (भूतवती स्त्री०) क्त्वा-भूत्वा, तुम्-भवितुम्, शतृ-सन्, (सती स्त्री०) तव्य-भवितव्यः, अनीय-भवनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) भावयति-ते । भाववाच्य-भूयते ।

हन् (मारना)

लट्

प्रथम पु०	हन्ति	हतः	घ्नन्ति
मध्यम पु०	हंसि	हथः	हथ

उत्तम पु०	हन्मि	हन्वः	हन्मः

लोट्

प्रथम पु०	हन्तु	हताम्	घ्नन्तु
मध्यम पु०	जहि	हतम्	हत
उत्तम पु०	हनानि	हनाव	हनाम

लङ्

प्रथम पु०	अहन्	अहताम्	अघ्नन्
मध्यम पु०	,,	अहतम्	अहत
उत्तम पु०	अहनम्	अहन्व	अहन्म

वि० लिङ्

प्रथम पु०	हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः
मध्यम पु०	हन्याः	हन्यातम्	हन्यात
उत्तम पु०	हन्याम्	हन्याव	हन्याम

लृट्

प्रथम पु०	हनिष्यति	हनिष्यतः	हनिष्यन्ति
मध्यम पु०	हनिष्यसि	हनिष्यथः	हनिष्यथ
उत्तम पु०	हनिष्यामि	हनिष्यावः	हनिष्यामः

कृदन्त—क्त-हतः, क्तवत्-हतवान् (हतवती स्त्री०), क्त्वा-हत्वा, तुम्-हन्तुम्, शतृ-घ्नत् (घ्नती स्त्री०) तव्य-हन्तव्यः, अनीय-हननीयः ।

प्रेरणार्थक—णिजन्त, घातयति-ते । कर्मवाच्य- हन्यते ।

इ (जाना)

लट्

प्रथम पु०	एति	इतः	यन्ति
मध्यम पु०	एषि	इथः	इथ
उत्तम पु०	एमि	इवः	इमः

लोट्

प्रथम पु०	एतु	एताम्	यन्तु
मध्यम पु०	इहि	इतम्	इत

उत्तम पु०	अयानि	अयाव	अयाम

लङ्

प्रथम पु०	ऐत्	ऐताम्	आयन्
मध्यम पु०	ऐः	ऐतम्	ऐत
उत्तम पु०	आयम्	ऐव	ऐम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	इयात्	इयाताम्	इयुः
मध्यम पु०	इयाः	इयातम्	इयात
उत्तम पु०	इयाम्	इयाव	इयाम

कृदन्त—क्त-इतः, क्तवत्-इतवान् (इतवती स्त्री०) क्त्वा-इत्वा, तुम्-एतुम्, शतृ-यन् (यती स्त्री०), तव्य-एतव्यः, अनीय-अयनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) गमयति-ते । कर्मवाच्य-ईयते ।

लृट्

प्रथम पु०	एष्यति	एष्यतः	एष्यन्ति
मध्यम पु०	एष्यसि	एष्यथः	एष्यथ
उत्तम पु०	एष्यामि	एष्यामः	एष्याम

विद् (जानना)

लट्

प्रथम पु०	वेत्ति-वेद	वित्तः-विदतुः	विदन्ति-विदुः
मध्यम पु०	वेत्सि-वेत्थ	वित्थः-विदथुः	वित्थ-विद
उत्तम पु०	वेद्मि-वेद	विद्वः-विद्व	विद्मः-विद्म

लोट्

प्रथम पु०	वेत्तु	वित्ताम्	विदन्तु
मध्यम पु०	विद्धि	वित्तम्	वित्त
उत्तम पु०	वेदानि	वेदाव	वेदाम

अथवा

प्रथम पु०	विदाङ्करोतु	विदाङ्कुरुताम्	विदाङ्कुर्वन्तु
मध्यम पु०	विदाङ्कुरु	विदाङ्कुरुतम्	विदाङ्कुरुत

उत्तम पु०	विदाङ्करवाणि	विदाङ्करवाव	विदाङ्करवाम

लङ्

प्रथम पु०	अवेत्-द्	अवित्ताम्	अविदुः
मध्यम पु०	अवेः-अवेत्-द्	अवित्तम्	अवित्त
उत्तम पु०	अवेदम्	अविद्व	अविद्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	विद्यात्	विद्याताम्	विद्युः
मध्यम पु०	विद्याः	विद्यातम्	विद्यात
उत्तम पु०	विद्याम्	विद्याव	विद्याम

लृट्

प्रथम पु०	वेदिष्यति	वेदिष्यतः	वेदिष्यन्ति
मध्यम पु०	वेदिष्यसि	वेदिष्यथः	वेदिष्यथ
उत्तम पु०	वेदिष्यामि	वेदिष्यावः	वेदिष्यामः

कृदन्त—क्त-विदितः, क्तवत्-विदितवान्, क्त्वा-विदित्वा, तुम्-वेत्तुम्, शतृ-विदन् (विदती स्त्री०) तव्य-वेदितव्यः, अनीय-वेदनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) वेदयति-ते। कर्मवाच्य-विद्यते।

रुद् (रोना)

लट्

प्रथम पु०	रोदिति	रुदितः	रुदन्ति
मध्यम पु०	रोदिषि	रुदिथः	रुदिथ
उत्तम पु०	रोदिमि	रुदिवः	रुदिमः

लोट्

प्रथम पु०	रोदितु	रुदिताम्	रुदन्तु
मध्यम पु०	रुदिहि	रुदितम्	रुदित
उत्तम पु०	रोदानि	रोदाव	रोदाम

लङ्

प्रथम पु०	अरोदीत्-दत्	अरुदिताम्	अरुदन्
मध्यम पु०	अरोदीः-दः	अरुदितम्	अरुदित

उत्तम पु०	अरोदम्	अरुदिव	अरुदिम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	रुद्यात्	रुद्याताम्	रुद्युः
मध्यम पु०	रुद्याः	रुद्यातम्	रुद्यात
उत्तम पु०	रुद्याम्	रुद्याव	रुद्याम

लृट्

प्रथम पु०	रोदिष्यति	रोदिष्यतः	रोदिष्यन्ति
मध्यम पु०	रोदिष्यसि	रोदिष्यथः	रोदिष्यथ
उत्तम पु०	रोदिष्यामि	रोदिष्यावः	रोदिष्यामः

स्वप् और अन् के रूप भी रुद् की तरह होंगे।

स्वपिति, स्वपितु, अस्वपीत्-पत्, स्वप्यात्, स्वप्स्यति (अनिट्)। अनिति, अनितु, आनीत्-नत्, अन्यात्, अनिष्यति।

कृदन्त—क्त-रुदित:, क्तवत्-रुदितवान्, क्त्वा-रुदित्वा, तुम्-रोदितुम्, शतृ-रुदन्, (रुदती स्त्री०) तव्य-रोदितव्यम्, अनीय-रोदनीयम्।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) रोदयति-ते। कर्मवाच्य-रुद्यते।

या (जाना)

लट्

प्रथम पु०	याति	यातः	यान्ति
मध्यम पु०	यासि	याथः	याथ
उत्तम पु०	यामि	यावः	यामः

लोट्

प्रथम पु०	यातु	याताम्	यान्तु
मध्यम पु०	याहि	यातम्	यात
उत्तम पु०	यानि	याव	याम

लङ्

प्रथम पु०	अयात्	अयाताम्	अयुः-अयान्
मध्यम पु०	अयाः	अयातम्	अयात
उत्तम पु०	अयाम्	अयात	अयाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	यायात्	यायाताम्	यायुः
मध्यम पु०	यायाः	यायातम्	यायात
उत्तम पु०	यायाम्	यायाव	यायाम

जागृ (जागना)

लट्

प्रथम पु०	जागर्ति	जागृतः	जाग्रति
मध्यम पु०	जागर्षि	जागृथः	जागृथ
उत्तम पु०	जागर्मि	जागृवः	जागृमः

लोट्

प्रथम पु०	जागर्तु	जागृताम्	जाग्रतु
मध्यम पु०	जागृहि	जागृतम्	जागृत
उत्तम पु०	जागराणि	जागराव	जागराम

लङ्

प्रथम पु०	अजागः	अजागृताम्	अजागरुः
मध्यम पु०	,,	अजागृतम्	अजागृत
उत्तम पु०	अजागरम्	अजागृव	अजागृम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	जागृयात्	जागृयाताम्	जागृयुः
मध्यम पु०	जागृयाः	जागृयातम्	जागृयात
उत्तम पु०	जागृयाम्	जागृयाव	जागृयाम

लृट्

प्रथम पु०	जागरिष्यति	जागरिष्यतः	जागरिष्यन्ति
मध्यम पु०	जागरिष्यसि	जागरिष्यथः	जागरिष्यथ
उत्तम पु०	जागरिष्यामि	जागरिष्यावः	जागरिष्यामः

कृदन्त—क्त-जागरितः, क्तवत्-जागरितवान् (जागरितवती स्त्री०), क्त्वा-जागरित्वा, तुम्-जागरितुम् , शतृ-जाग्रत् (जाग्रती स्त्री०) तव्य-जागरितव्यम्, अनीय-जागरणीयम् ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) जागरयति-ते, भाववाच्य-जागर्यते ।

शास् (शासन करना, शिक्षा देना)

लट्

प्रथम पु०	शास्ति	शिष्टः	शासति
मध्यम पु०	शास्सि	शिष्ठः	शिष्ठ
उत्तम पु०	शास्मि	शिष्वः	शिष्मः

लोट्

प्रथम पु०	शास्तु	शिष्टाम्	शासतु
मध्यम पु०	शाधि	शिष्टम्	शिष्ट
उत्तम पु०	शासानि	शासाव	शासाम

लङ्

प्रथम पु०	अशात्-द्	अशिष्टाम्	अशासुः
मध्यम पु०	अशाः-अशात्-द्	अशिष्टम्	अशिष्ट
उत्तम पु०	अशासम्	अशिष्व	अशिष्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	शिष्यात्	शिष्यातम्	शिष्युः
मध्यम पु०	शिष्याः	शिष्यातम्	शिष्यात
उत्तम पु०	शिष्याम्	शिष्याव	शिष्याम

लृट्

प्रथम पु०	शासिष्यति	शासिष्यतः	शासिष्यन्ति
मध्यम पु०	शासिष्यसि	शासिष्यथः	शासिष्यथ
उत्तम पु०	शसिष्यामि	शासिष्यावः	शासिष्यामः

कृदन्त—क्त-शिष्टः, क्तवत्-शिष्टवान् (शिष्टवती स्त्री०), क्त्वा-शिष्ट्वा-शासित्वा, तुम्-शासितुम्, शतृ-शासत् (शासती स्त्री०) तव्य-शासितव्यः, अनीय-शासनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) शासयति-ते । कर्मवाच्य-शिष्यते ।

आत्मनेपद

आस् (बैठना) लट्

प्रथम पु०	आस्ते	आसाते	आसते
मध्यम पु०	आस्से	आसाथे	आध्वे
उत्तम पु०	आसे	आस्वहे	आस्महे

लोट्

प्रथम पु०	आस्ताम्	आसाताम्	आसताम्
मध्यम पु०	आस्स्व	आसाथाम्	आध्वम्
उत्तम पु०	आसै	आसावहै	आसामहै

लङ्

प्रथम पु०	आस्त	असाताम्	आसत
मध्यम पु०	आस्थाः	आसाथाम्	आध्वम्
उत्तम पु०	आसि	आस्वहि	आस्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	आसीत	आसीयाताम्	आसीरन्
मध्यम पु०	आसीथाः	आसीयाथाम्	आसीध्वम्
उत्तम पु०	आसीय	आसीवहि	आसीमहि

लृट्

प्रथम पु०	आसिष्यते	आसिष्येते	आसिष्यन्ते
मध्यम पु०	आसिष्यसे	आसिष्येथे	आसिष्यध्वे
उत्तम पु०	आसिष्ये	आसिष्यावहे	आसिष्यामहे

कृदन्त—क्त-आसितः, क्तवत्-आसितवान्, क्त्वा-आसित्वा, तुम्-आसितुम्, आन-आसीनः, तव्य-आसितव्यम्, अनीय-आसनीयम्।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) आसयति-ते। भाववाच्य-आस्यते।

शी (सोना)

लट्

प्रथम पु०	शेते	शयाते	शेरते
मध्यम पु०	शेषे	शयाथे	शेध्वे

उत्तम पु०	शये	शेवहे	शेमहे

लोट्

प्रथम पु०	शेताम्	शयाताम्	शेरताम्
मध्यम पु०	शेष्व	शयाथाम्	शेध्वम्
उत्तम पु०	शयै	शयावहै	शयामहै

लङ्

प्रथम पु०	अशेत	अशयाताम्	अशेरत
मध्यम पु०	अशेथाः	अशयाथाम	अशेध्वम्
उत्तम पु०	अशयि	अशेवहि	अशेमहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	शयीत	शयीयाताम्	शयीरन्
मध्यम पु०	शयीथाः	शयीयाथाम्	शयीध्वम्
उत्तम पु०	शयीय	शयीवहि	शयीमहि

लृट्

प्रथम पु०	शयिष्यते	शयिष्येते	शयिष्यन्ते
मध्यम पु०	शयिष्यसे	शयिष्येथे	शयिष्यध्वे
उत्तम पु०	शयिष्ये	शयिष्यावहे	शयिष्यामहे

कृदन्त—क्त-शयितः, क्तवत्-शयितवान् (शयितवती स्त्री०), क्त्वा-शयित्वा, तुम्-शयितुम्, आन-शयानः, तव्य-शयितव्यम्, अनीय-शयनीयम्।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) शाययति-ते। भाववाच्य-शय्यते।

अधि+इ (पढ़ना)

लट्

प्रथम पु०	अधीते	अधीयाते	अधीयते
मध्यम पु०	अधीषे	अधीयाथे	अधीध्वे
उत्तम पु०	अधीये	अधीवहे	अधीमहे

लोट्

प्रथम पु०	अधीताम्	अधीयाताम्	अधीयताम्
मध्यम पु०	अधीष्व	अधीयाथाम्	अधीध्वम्

उत्तम पु०	अध्ययै	अध्ययावहै	अध्ययामहै

लङ्

प्रथम पु०	अध्यैत	अध्यैयाताम्	अध्यैयत
मध्यम पु०	अध्यैथाः	अध्यैयाथाम्	अध्यैध्वम्
उत्तम पु०	अध्यैयि	अध्यैवहि	अध्यैमहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	अधीयीत	अधीयीयाताम्	अधीयीरन्
मध्यम पु०	अधीयीथाः	अधीयीयाथाम्	अधीयीध्वम्
उत्तम पु०	अधीयीय	अधीयीवहि	अधीयीमहि

लृट्

प्रथम पु०	अध्येष्यते	अध्येष्येते	अध्येष्यन्ते
मध्यम पु०	अध्येष्यते	अध्येष्येथे	अध्येष्यध्वे
उत्तम पु०	अध्येष्ये	अध्येष्यावहे	अध्येष्यामहे

कृदन्त—क्त-अधीतः, क्तवत्-अधीतवान् (अधीतवती स्त्री०), क्त्वा-अधीत्य, तुम्-अध्येतुम्, आन-अधीयानः, तव्य-अध्येतव्यः, अनीय-अध्ययनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) अध्यापयति। कर्मवाच्य-अधीयते।

उभयपद

ब्रू (बोलना) लट्

प्रथम पु०	ब्रवीति-आह	ब्रूतः-आहतुः	ब्रुवन्ति-आहुः
मध्यम पु०	ब्रवीषि-आत्थ	ब्रूथः-आहथुः	ब्रूथ
उत्तम पु०	ब्रवीमि	ब्रूवः	ब्रूमः

लोट्

प्रथम पु०	ब्रवीतु	ब्रूताम्	ब्रुवन्तु
मध्यम पु०	ब्रूहि	ब्रूतम्	ब्रूत
उत्तम पु०	ब्रवाणि	ब्रवाव	ब्रवाम

लङ्

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	अब्रवीत्	अब्रूताम्	अब्रुवन्

मध्यम पु०	अब्रवीः	अब्रूतम्	अब्रूत
उत्तम पु०	अब्रवम्	अब्रूव	अब्रूम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ब्रूयात्	ब्रूयाताम्	ब्रूयुः
मध्यम पु०	ब्रूयाः	ब्रूयातम्	ब्रूयात
उत्तम पु०	ब्रूयाम्	ब्रूयाव	ब्रूयाम

कृदन्त—क्त-उक्तः, क्तवत्-उक्तवान्, क्त्वा-उक्त्वा, तुम्-वक्तुम्, शतृ-ब्रुवत् (ब्रुवती स्त्री०) आन-ब्रुवाणः, तव्य-वक्तव्यः, अनीय-वचनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) वाचयति-ते । कर्मवाच्य-उच्यते ।

स्तु (स्तुति करना)

लट्

प्रथम पु०	स्तौति-स्तवीति	स्तुतः-स्तुवीतः	स्तुवन्ति
मध्यम पु०	स्तौषि-स्तवीषि	स्तुथः-स्तुवीथः	स्तुथ-स्तुवीथ
उत्तम पु०	स्तौमि-स्तवीमि	स्तुवः-स्तुवीवः	स्तुमः-स्तुवीमः

लोट्

प्रथम पु०	स्तौतु-स्तवीतु	स्तुताम्-स्तुवीताम्	स्तुवन्तु
मध्यम पु०	स्तुहि-स्तुवीहि	स्तुतम्-स्तुवीतम्	स्तुत-स्तुवीत
उत्तम पु०	स्तवानि	स्तवाव	स्तवाम

लङ्

प्रथम पु०	अस्तौत्- अस्तवीत्	अस्तुताम्- अस्तुवीताम्	अस्तुवन्
मध्यम पु०	अस्तौः- अस्तवीः	अस्तुतम्- अस्तुवीतम्	अस्तुत- अस्तुवीत
उत्तम पु०	अस्तवम्	अस्तुव- अस्तुवीव	अस्तुम- अस्तुवीम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	स्तुयात् स्तुवीयीत्	स्तुयाताम् स्तुवीयाताम्	स्तुयुः स्तुवीयुः

मध्यम पु०	स्तुयाः	स्तुयातम्	स्तुयात
	स्तुवीयाः	स्तुवीयातम्	स्तुवीयात
उत्तम पु०	स्तुयाम्	स्तुयाव	स्तुयाम
	स्तुवीयाम्	स्तुवीयाव	स्तुवीयाम

लृट्

प्रथम पु०	स्तोष्यति	स्तोष्यतः	स्तोष्यन्ति
मध्यम पु०	स्तोष्यसि	स्तोष्यथः	स्तोष्यथ
उत्तम पु०	स्तोष्यामि	स्तोष्यावः	स्तोष्यामः

कृदन्त—क्त-स्तुतः, क्तवत्-स्तुतवान (स्तुतवती स्त्री०), क्त्वा-स्तुत्वा, तुम्-स्तोतुम्, शतृ-स्तुवन् (स्तुवती स्त्री०) शान-स्तुवानः, तव्य-स्तोतव्यः, अनीय-स्तवनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) स्तावयति-ते। कर्मवाच्य-स्तूयते।

दुह् (दोहना)

लट्

प्रथम पु०	दोग्धि	दुग्धः	दुहन्ति
मध्यम पु०	धोक्षि	,,	दुग्ध
उत्तम पु०	दोह्मि	दुह्वः	दुह्मः

लोट्

प्रथम पु०	दोग्धु	दुग्धाम्	दुहन्तु
मध्यम पु०	दुग्धि	दुग्धम्	दुग्ध
उत्तम पु०	दोहानि	दोहाव	दोहाम

लङ्

प्रथम पु०	अधोक्-ग्	अदुग्धाम्	अदुहन्
मध्यम पु०	,,	अदुग्धम्	अदुग्ध
उत्तम पु०	अदोहम्	अदुह्व	अदुह्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	दुह्यात्	दुह्याताम्	दुह्युः
मध्यम पु०	दुह्याः	दुह्यातम्	दुह्यात

उत्तम पु०	दुह्याम्	दुह्याव	दुह्याम

लृट्

प्रथम पु०	धोक्ष्यति	धोक्ष्यतः	धोक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	धोक्ष्यसि	धोक्ष्यथः	धोक्ष्यथ
उत्तम पु०	धोक्ष्यामि	धोक्ष्यावः	धोक्ष्यामः

कृदन्त-क्त-दुग्धः, क्तवत्-दुग्धवान्, क्त्वा-दुग्ध्वा, तुम्-दोग्धुम्, शतृ-दुहन् (दुहती स्त्री०) आन-दुहानः, तव्य-दोग्धव्यः, अनीय-दोहनीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) दोहयति-ते। कर्मवाच्य-दुह्यते।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करोः—

जिस सांइस (पदार्थविज्ञान शास्त्र) की शक्तिसे मनुष्यके अनेक प्रकारके (विविध) उपकार हो रहे हैं, उसके प्रयोगसे आजकल मनुष्य मनुष्यको मार रहा है।

इस तबेलेके बाहर एक कुत्ता सोया रहता है, जब कोई अनजान (अपरिचित) मनुष्य आता है तो वह भौंकने (बुक्क्) लगता है और लोग जाग पड़ते हैं।

आप अपना हाल तो कहते नहीं मेरा ही पूछते जाते हैं।

आज कल क्या क्या पढ़ते हो?

मोहन, देखो तो इनमेंसे कौन कौन जागता है और कौन कौन सो रहा है!

यह बालक ज़ोरसे रो रहा है, न जाने इसकी माता कब आयगी और इसे गोद (अङ्क) में लेगी।

यह ग्वाला (गोपाल) हर रोज़ दूध दोहता है, फिर उसे गडुवेमें डालकर उसमें पानी मिला देता है।

वसुदेव कंसका बहनोई (आवुत्त) था और कृष्ण उसका भानजा (भागिनेय) था। फिर भी वह दुष्ट कृष्णसे वैर करता रहा और कृष्णने उसे मार डाला।

अखरोट (अक्षोट) की गिरी (सार) बहुत मिठी होती है। इसे और खाओ।

धन तो आता जाता रहता है, पर जो आचार बिगड़ जाता है फिर वह कभी नहीं सुधरता।

आज नवरात्र का आरंभ है, इस दिनसे दुर्गाका पूजन शुरू होता है।

पहिले मन्दिरका पुजारी दुर्गाकी

स्तुति करेगा उसके पीछे सब लोग जो कुछ वह कहेगा वही कहेंगे। इस हड्डीके साथ मांसका लेश भी नहीं तोभी यह कुत्ता इसे चाट रहा है, क्यों कि हड्डी चाटना कुत्तोंका स्वभाव है।

अनुशीलनी—२२

१—भ्वादि-आदि गणोंके लिए पीछे बताई हुई परस्मैपद और आत्मनेपदकी विभक्तियोंमें और अदादि-आदि गणोंके धातुओंकी परस्मैपदी और आत्मनेपदी विभतिबों में क्या भेद है ?

२—इनमें रिक्त स्थानों को पूर्ण करो:—अयोध्यायाः पुरा दशरथो नाम राजा—। गोपालः गां पयः—। समरे भटाः परस्परं हेतिभिः—। भूयः भूयः किम् आयाम्रि——। ईश्वर, को नाम तव गरिमाणं——। नारायणः क्षीराब्धौ सुखं——। अस्मिन् विद्यालये शतादप्यधिकाः छात्रा व्याकरणम्——। रावणाद् भीताः सर्वे सुराः हरिं प्राप्य तम्——(स्तु)।

३—इनके स्थानपर संस्कृत-पद बताओ—सोयेंगे (हम), मारो, शासन करते हो (तुम दो), कहेंगे, पढ़ो, जाग रहे थे (वे), खाओ, था।

४—इनमें से अशुद्धियों को निकालो:—किं भवान् मां तदेव वचनं पुनः वक्ष्यसि? पुरा रामः रावणं हन्ति। श्वोऽहं स्वपुरं प्रति यास्ये। अयत्रे त्वं किमध्येषि ?

५—इन्हीं अर्थोंके कुछ दूसरे धातुओंको, यदि जानते हो तो बताओ—ब्रू, अधि+इ, इ, हन्, अस्, या, स्तु।

६—इनका परिचय दो—

स्वः, अशेरत, अघ्नन्, शाधि, अब्रवन्, अध्यैषि, घोक्षि, वेत्थ, अद्धि।

७—ये रूप बताओ:—विद्का लोट्में मध्यमपुरुष-द्विवचन और हन् का प्रथमपुरुष-बहुवचन, ब्रू का लृट्में प्रथमपुरुष-एकवचन, अधि इ का लट्में उत्तम पुरुष-बहुवचन, स्वप् का लट्में उत्तमपुरुष-द्विवचन, जागृका लङ्में मध्यमपुरुष-एकवचन।

जुहोत्यादि गण

१३२—जुहोत्यादि गणके धातुओंके आगे कोई *विकरण नहीं* आता।

१३३—विभक्ति लगानेसे पूर्व धातुके पहले व्यञ्जनको और उसके साथके स्वरको *द्वित्व* हो जाता है। द्वित्वके पहले भाग को *अभ्यास* कहते हैं।

१३४—अभ्यास में यदि किसी वर्गका *दूसरा वर्ण* हो तो उसे *पहला* और यदि *चौथा वर्ण* हो तो उसे *तीसरा* वर्ण होजाता है।

जैसे—भी=भी+भी=बीभी। धा=धाधा=दाधा।

१३५—(क) अभ्यासका दीर्घ *स्वर* *ह्रस्व* हो जाता है।

जैसे—बीभी=बिभी, दाधा=दधा।

(ख) अभ्यासके ह् को ज् हो जाता है। जैसे-हा+हा=हहा=जहा।

(ग) *मा, भृ* और *पृ* धातुके अभ्यासके स्वरको *इ* हो जाता है।

जैसे—मा+मा=मिमा। भृ+भृ=बिभृ। पृ+पृ=पिपृ।

(जुहोत्यादि गणमें अन्ति और अन्तु की जगह अति और अतु और अन् की जगह उस् हो जाता है)।

१३६—उस् से पूर्व आकारान्त धातुओंके *आ* का *लोप* हो जाता है और *ह्रस्व* वा *दीर्घ* इ, उ ऋ को *गुण* हो जाता है।

जैसे—ददा+उस्=अददा+उस्=उददुः। जहा+उस्=अजहुः, बिभृ+उस्=अबिभर्+उस्=अबिभरुः। अपिपर्+उस्=अपिपरुः।

परस्मैपद

हु (हवन करना)

लट्

प्रथम पु०	जुहोति	जुहुतः	जुह्वति

मध्यम पु०	जुहोषि	जुहुथः	जुहुथ
उत्तम पु०	जुहोमि	जुहुवः	जुहुमः

लोट्

प्रथम पु०	जुहोतु	जुहुताम्	जुह्वतु
मध्यम पु०	जुहुधि	जुहुतम्	जुहुत
उत्तम पु०	जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम

लङ्

प्रथम पु०	अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवुः
मध्यम पु०	अजुहोः	अजुहुतम्	अजुहुत
उत्तम पु०	अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः
मध्यम पु०	जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात
उत्तम पु०	जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम

लृट्

प्रथम पु०	होष्यति	होष्यतः	होष्यन्ति
मध्यम पु०	होष्यसि	होष्यथः	होष्यथ
उत्तम पु०	होष्यामि	होष्यावः	होष्यामः

कृदन्त—क्त-हुतः, क्तवत्-हुतवान् (हुतवती स्त्री०), क्त्वा-हुत्वा, तुम्-होतुम्, अत-जुह्वत् (जुह्वती स्त्री०), तव्य-होतव्यः, अनीय-हवनीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) हावयति-ते । कर्मवाच्य-हूयते ।

भी (डरना)

लट्

प्रथम पु०	बिभेति	बिभीतः-बिभितः	बिभ्यति
मध्यम पु०	बिभेषि	बिभीथः-बिभिथः	बिभीथ-बिभिथ
उत्तम पु०	बिभेमि	बिभीवः-बिभिवः	बिभीमः-बिभिमः

लोट्

प्रथम पु०	बिभेतु	बिभीताम्-बिभिताम्	बिभ्यतु

मध्यम पु०	बिभीहि-बिभिहि	बिभीतम्-बिभितम्	बिभीत-बिभित
उत्तम पु०	बिभयानि	बिभयाव	बिभयाम

लङ्

प्रथम पु०	अबिभेत्	अबिभीताम्-अबिभिताम्	अबिभयुः
मध्यम पु०	अबिभेः	अबिभीतम्-अबिभितम्	अबिभीत-अबिभित
उत्तम पु०	अबिभयम्	अबिभीव-अबिभिव	अबिभीम-अबिभिम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	बिभीयात्-बिभियात्	बिभीयाताम्-बिभियाताम्	बिभीयुः-बिभियुः
मध्यम पु०	बिभीयाः-बिभियाः	बिभीयातम्-बिभियातम्	बिभीयात-बिभियात
उत्तम पु०	बिभीयाम्-बिभियाम्	बिभीयाव-बिभियाव	बिभीयाम-बिभियाम

लृट्

प्रथम पु०	भेष्यति	भेष्यतः	भेष्यन्ति
मध्यम पु०	भेष्यसि	भेष्यथः	भेष्यथ
उत्तम पु०	भेष्यामि	भेष्यावः	भेष्यामः

कृदन्त—क्त-भीतः, क्तवत्-भीतवान् (भीतवती स्त्री०), क्त्वा-भीत्वा, तुम्-भेतुम्, शतृ-बिभ्यत् (बिभ्यती स्त्री०), तव्य-भेतव्यम् अनीय-भयनीयम्।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) भाययति-ते, भीषयते। भाववाच्य-भीयते।

भृ (पालना पोसना)

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	बिभर्ति	बिभृतः	बिभ्रति
मध्यम पु०	बिभर्षि	बिभृथः	बिभृथ
उत्तम पु०	बिभर्मि	बिभृवः	बिभृमः

लोट्

प्रथम पु०	बिभर्तु	बिभृताम्	बिभ्रतु

मध्यम पु०	बिभृहि	बिभृतम्	बिभृत
उत्तम पु०	बिभराणि	बिभराव	बिभराम

लङ्

प्रथम पु०	अबिभः	अबिभृताम्	अबिभरुः
मध्यम पु०	,,	अबिभृतम्	अबिभृत
उत्तम पु०	अबिभरम्	अबिभृव	अबिभृम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	बिभृयात्	बिभृयाताम्	बिभृयुः
मध्यम पु०	बिभृयाः	बिभृयातम्	बिभृयात
उत्तम पु०	बिभृयाम्	बिभृयाव	बिभृयाम

लृट्

प्रथम पु०	भरिष्यति	भरिष्यतः	भरिष्यन्ति
मध्यम पु०	भरिष्यसि	भरिष्यथः	भरिष्यथ
उत्तम पु०	भरिष्यामि	भरिष्यावः	भरिष्यामः

कृदन्त—क्त-भृतः, क्तवत्-भृतवान् (भृतवती स्त्री०), क्त्वा-भृत्वा, तुम्-भर्तुम्, शतृ-बिभ्रत् (बिभ्रती स्त्री०), तव्य-भर्तव्यः, अनीय-भरणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) भारयति-ते। कर्मवाच्य-भ्रियते।

उभयपद

दा (देना)

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	ददाति	दत्तः	ददति
मध्यम पु०	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पु०	ददामि	दद्वः	दद्मः

लोट्

प्रथम पु०	ददातु	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पु०	देहि	दत्तम्	दत्त
उत्तम पु०	ददानि	ददाव	ददाम

लङ्

प्रथम पु०	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पु०	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पु०	अददाम्	अदद्व	अदद्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पु०	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पु०	दद्याम	दद्याव	दद्याम

लृट्

प्रथम पु०	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पु०	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पु०	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	दत्ते	ददाते	ददते
मध्यम पु०	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
उत्तम पु०	ददे	दद्वहे	दद्महे

लोट्

प्रथम पु०	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
मध्यम पु०	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
उत्तम पु०	ददै	ददावहै	ददामहै

लङ्

प्रथम पु०	अदत्त	अददाताम्	अददत
मध्यम पु०	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
उत्तम पु०	अददि	अदद्वहि	अदद्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
मध्यम पु०	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
उत्तम पु०	ददीय	ददीवहि	ददीमहि

लृट्

प्रथम पु०	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
मध्यम पु०	दास्यसे	दास्येथे	दास्यध्वे
उत्तम पु०	दास्ये	दास्यावहे	दास्यामहे

कृदन्त—क्त-दत्तः, क्तवत्-दत्तवान् (दत्तवती स्त्री०), क्त्वा-दत्त्वा, तुम्-दातुम्, शतृ-ददत् (ददती स्त्री०), आन-ददानः, तव्य-दातव्यः अनीय-दानीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त), दापयति-ते। कर्मवाच्य-दीयते।

उपसर्गसहित—आदा (लेना), प्रतिदा (बदलना)।

स्वादिगण

१३६—स्वादिगण का विकरण नु है। जैसे-सु+नु+ति=सुनोति। विभक्ति के व्, या म् से पूर्व नु के उ का विकल्पसे लोप होकर न् रह जाता है (पक्ष में नु ही रहता है) यदि धातुके अन्त में स्वर हो। शृ+नु+वः=शृ+णु+वः= शृण्वः-शृणुवः। सु+नु+मः=सुन्मः-सुनुमः। आप् का केवल आप्नुवः रहेगा क्योंकि इसके अन्तमें व्यंजन है, स्वर नहीं।

१३८—अजादि अविकारक विभक्तिसे पूर्व नु को नुव् हो जाता है, यदि धातुके अन्तमें हल् हो। जैसे—आप्+नु+अन्ति= आप्+ नुव्+ अन्ति=आप्नुवन्ति। आप्नुवन्, आप्नुवन्तु। सु का सुन्वन्ति होता है, क्योंकि धातु अजन्त है।

१३९—स्वादिगण के अजन्त धातुओं से परे हि का लोप हो जाता है। जैसे—सु+नु+हि=सुनु। आप् का आप्नुहि बनेगा।

श्रु (शृ) सुनना

लट्

प्रथम पु०	शृणोति	शृणुतः	शृण्वन्ति
मध्यम पु०	शृणोषि	शृणुथः	शृणुथ
उत्तम पु०	शृणोमि	शृणुवः-शृण्वः	शृणुमः-शृण्मः

लङ्

प्रथम पु०	अशृणोत्	अशृणुताम्	अशृण्वन्
मध्यम पु०	अशृणोः	अशृणुतम्	अशृणुत
उत्तम पु०	अशृणवम्	अशृणुव-अशृण्व	अशृणुम-अशृण्म

लोट्

प्रथम पु०	शृणोतु	शृणुताम्	शृण्वन्तु
मध्यम पु०	शृणु	शृणुतम्	शृणुत
उत्तम पु०	शृणवानि	शृणवाव	शृणवाम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	शृणुयात्	शृणुयाताम्	शृणुयुः
मध्यम पु०	शृणुयाः	शृणुयातम्	शृणुयात
उत्तम पु०	शृणुयाम	शृणुयाव	शृणुयाम

लृट्

प्रथम पु०	श्रोष्यति	श्रोष्यतः	श्रोष्यन्ति
मध्यम पु०	श्रोष्यसि	श्रोष्यथः	श्रोष्यथ
उत्तम पु०	श्रोष्यामि	श्रोष्यावः	श्रोष्यामः

कृदन्त—क्त-श्रुतः, क्तवतु-श्रुतवान् (श्रुतवती स्त्री०), क्त्वा-श्रुत्वा, तुमुन्-श्रोतुम्, शतृ-शृण्वन् (शृण्वती स्त्री०), तव्य-श्रोतव्यः अनीय-श्रवणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) श्रावयति-ते। कर्मवाच्य-श्रूयते।

आप् (पाना)

लट्

प्रथम पु०	आप्नोति	आप्नुतः	आप्नुवन्ति
मध्यम पु०	आप्नोषि	आप्नुथः	आप्नुथ
उत्तम पु०	आप्नोमि	आप्नुवः	आप्नुमः

लोट्

प्रथम पु०	आप्नोतु	आप्नुताम्	आप्नुवन्तु
मध्यम पु०	आप्नुहि	आप्नुतम्	आप्नुत
उत्तम पु०	आप्नवानि	आप्नवाव	आप्नवाम

लङ्

प्रथम पु०	आप्नोत्	आप्नुताम्	आप्नुवन्
मध्यम पु०	आप्नोः	आप्नुतम्	आप्नुत
उत्तम पु०	आप्नवम्	आप्नुव	आप्नुम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	आप्नुयात	आप्नुयाताम्	आप्नुयुः
मध्यम पु०	आप्नुयाः	आप्नुयातम्	आप्नुयात
उत्तम पु०	आप्नुयाम्	आप्नुयाव	आप्नुयाम

लृट्

प्रथम पु०	आप्स्यति	आप्स्यतः	आप्स्यन्ति
मध्यम पु०	आप्स्यसि	आप्स्यथः	आप्स्यथ
उत्तम पु०	आप्स्यामि	आप्स्यावः	आप्स्यामः

कृदन्त—क्त-आप्तः, क्तवत्-आप्तवान्, क्त्वा-आप्त्वा, तुम्-आप्तुम्, शतृ-आप्नुवन् (आप्नुवती स्त्री०), तव्य-आप्तव्यः, अनीय-आपनीयः।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त) आपयति-ते। कर्मवाच्य-आप्यते।

उपसर्गसहित—अव-आप् (अवाप्, पाना), सम्-आप् (समाप्, समाप्त करना) प्र-आप् (प्राप्-पहुँचना)।

शक् (सकना)

लट्

प्रथम पु०	शक्नोति	शक्नुतः	शक्नुवन्ति
मध्यम पु०	शक्नोषि	शक्नुथः	शक्नुथ
उत्तम पु०	शक्नोमि	शक्नुवः	शक्नुम

लोट्

प्रथम पु०	शक्नोतु	शक्नुताम्	शक्नुवन्तु
मध्यम पु०	शक्नुहि	शक्नुतम्	शक्नुत
उत्तम पु०	शक्नवानि	शक्नवाव	शक्नवाम

लङ्

प्रथम पु०	अशक्नोत्	अशक्नुताम्	अशक्नुवन्
मध्यम पु०	अशक्नोः	अशक्नुतम्	अशक्नुत
उत्तम पु०	अशक्नवम्	अशक्नुव	अशक्नुम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	शक्नुयात्	शक्नुयाताम्	शक्नुयुः
मध्यम पु०	शक्नुयाः	शक्नुयातम्	शक्नुयात
उत्तम पु०	शक्नुयाम्	शक्नुयाव	शक्नुयाम

लृट्

प्रथम पु०	शक्ष्यति	शक्ष्यतः	शक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	शक्ष्यसि	शक्ष्यथः	शक्ष्यथ
उत्तम पु०	शक्ष्यामि	शक्ष्यावः	शक्ष्यामः

कृदन्त—क्त-शक्तः, क्तवत्-शक्तवान्, क्त्वा-शक्त्वा, तुम्-शक्तुम्, शतृ-शक्नुवन् (शक्नुवती स्त्री०), तव्य-शक्तव्यः, अनीय-शकनीयः ।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त) शाकयति-ते । कर्मवाच्य-शक्यते ।

उभयपद

सु (यथार्थ स्नान करना, रस निचोड़ना, शराब बनाना)

लट्

प्रथम पु०	सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति

मध्यम पु०	सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ
उत्तम पु०	सुनोमि	सुनुवः-सुन्वः	सुनुमः-सुन्मः

लोट्

प्रथम पु०	सुनोतु	सुनुताम्	सुन्वन्तु
मध्यम पु०	सुनु	सुनुतम्	सुनुत
उत्तम पु०	सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम

लङ्

प्रथम पु०	असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्
मध्यम पु०	असुनोः	असुनुतम्	असुनुत
उत्तम पु०	असुनवम्	असुनुव-असुन्व	असुनुम-असुन्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः
मध्यम पु०	सुनुयाः	सुनुयातम्	सुनुयात
उत्तम पु०	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम

लृट्

प्रथम पु०	सोष्यति	सोष्यतः	सोष्यन्ति
मध्यम पु०	सोष्यसि	सोष्यथः	सोष्यथ
उत्तम पु०	सोष्यामि	सोष्यावः	सोष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते
मध्यम पु०	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे
उत्तम पु०	सुन्वे	सुनुवहे-सुन्वहे	सुनुमहे-सुन्महे

लोट्

प्रथम पु०	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्
मध्यम पु०	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्
उत्तम पु०	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै

लङ्

प्रथम पु०	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत
मध्यम पु०	असुनुथाः	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्
उत्तम पु०	असुन्वि	असुनुवहि-न्वहि	असुनुमहि-न्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्
मध्यम पु०	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथाम्	सुन्वीध्वम्
उत्तम पु०	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि

लृट्

प्रथम पु०	सोष्यते	सोष्येते	सोष्यन्ते
मध्यम पु०	सोष्यसे	सोष्येथे	सोष्यध्वे
उत्तम पु०	सोष्ये	सोष्यावहे	सोष्यामहे

कृदन्त—क्त-सुतः, क्तवत-सुतवान्, क्त्वा-सुत्वा, तुम्-सोतुम्, शतृ-सुन्वन् (सुन्वती स्त्री०), आन-सुन्वानः, तव्य-सोतव्यः, अनीय-सवनीयः ।

प्रेरणार्थक—(णिजन्त) सावयति-ते । कर्मवाच्य-सूयते ।

धु (काँपना)

धु के रूप दोनों पदोंमें सर्वथा सु की तरह ही होंगे ।

रुधादि-गण

१४०—रुधादि गणका विकरण न है ।

विशेष-दूसरे गण-विकरणोंकी तरह न धातुके अन्तमें नहीं आता, वह धातुके अन्तिम व्यञ्जनसे पूर्व जोड़ा जाता है । रुध् +ति=रुनध् +ति ।

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	रुणद्धि	रुन्द्धः	रुन्धन्ति
मध्यम पु०	रुणत्सि	,,	रुन्द्ध
उत्तम पु०	रुणध्मि	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः

लोट्

प्रथम पु०	रुणद्धु	रुन्द्धाम्	रुन्धन्तु
मध्यम पु०	रुन्द्धि	रुन्द्धम्	रुन्द्ध
उत्तम पु०	रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम

लङ्

प्रथम पु०	अरुणत्-द्	अरुन्द्धाम्	अरुन्धन्
मध्यम पु०	,,	अरुन्द्धम्	अरुन्द्ध
उत्तम पु०	अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः
मध्यम पु०	रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात
उत्तम पु०	रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम

लृट्

प्रथम पु०	रोत्स्यति	रोत्स्यतः	रोत्स्यन्ति
मध्यम पु०	रोत्स्यसि	रोत्स्यथः	रोत्स्यथ
उत्तम पु०	रोत्स्यामि	रोत्स्यावः	रोत्स्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	रुन्द्धे	रुन्धाते	रुन्धते
मध्यम पु०	रुन्त्से	रुन्धाथे	रुन्द्ध्वे
उत्तम पु०	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे

लोट्

प्रथम पु०	रुन्द्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
मध्यम पु०	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्द्ध्वम्
उत्तम पु०	रुणधै	रुणधावहै	रुणधामहै

लङ्

प्रथम पु०	अरुन्द्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
मध्यम पु०	अरुन्द्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्द्ध्वम्

उत्तम पु०	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
मध्यम पु०	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
उत्तम पु०	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि

लृट्

प्रथम पु०	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
मध्यम पु०	रोत्स्यसे	रोत्स्येथे	रोत्स्यध्वे
उत्तम पु०	रोत्स्ये	रोत्स्यावहे	रोत्स्यामहे

कृदन्त—क्त-रुद्धः, क्तवत्-रुद्धवान्, क्त्वा-रुद्ध्वा, तुम्-रोद्धुम्, शतृ-रुन्धन् (रुन्धती स्त्री०) आन-रुन्धानः, तव्य-रोद्धव्यः, अनीय-रोधनीयः

प्रेरणार्थक (णिजन्त) रोधयति-ते । कर्मवाच्य-रुध्यते ।

उपसर्गसहित- अवरुध् (गाड़ना), विरुध् (झगड़ना) ।

युज् (जोड़ना)

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	युनक्ति	युङ्क्तः	युञ्जन्ति
मध्यम पु०	युनक्षि	युङ्क्थः	युङ्क्थ
उत्तम पु०	युनज्मि	युञ्ज्वः	युञ्ज्मः

लोट्

प्रथम पु०	युनक्तु	युङ्क्ताम्	युञ्जन्तु
मध्यम पु०	युङ्ग्धि	युङ्क्तम्	युङ्क्त
उत्तम पु०	युनजानि	युनजाव	युनजाम

लङ्

प्रथम पु०	अयुनक्-ग्	अयुङ्क्ताम्	अयुञ्जन्
मध्यम पु०	अयुनक्	अयुङ्क्तम्	अयुङ्क्त
उत्तम पु०	अयुनजम्	अयुञ्ज्व	अयुञ्ज्म

वि० लिङ्

प्रथम पु०	युञ्ज्यात्	युञ्ज्याताम्	युञ्ज्युः
मध्यम पु०	युञ्ज्याः	युञ्ज्यातम्	युञ्ज्यात
उत्तम पु०	युञ्ज्याम्	युञ्ज्याव	युञ्ज्याव

लृट्

प्रथम पु०	योक्ष्यति	योक्ष्यतः	योक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	योक्ष्यसि	योक्ष्यथः	योक्ष्यथ
उत्तम पु०	योक्ष्यामि	योक्ष्यावः	योक्ष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	युङ्क्ते	युञ्जाते	युञ्जते
मध्यम पु०	युङ्क्षे	युञ्जाथे	युङ्ग्ध्वे
उत्तम पु०	युञ्जे	युञ्ज्वहे	युञ्ज्महे

लोट्

प्रथम पु०	युङ्क्ताम्	युञ्जाताम्	युञ्जताम्
मध्यम पु०	युङ्क्ष्व	युञ्जाथाम्	युङ्ग्ध्वम्
उत्तम पु०	युनजै	युनजावहै	युनजामहै

लङ्

प्रथम पु०	अयुङ्क्त	अयुञ्जाताम्	अयुञ्जत
मध्यम पु०	अयुङ्क्थाः	अयुञ्जाथाम्	अयुङ्ग्ध्वम्
उत्तम पु०	अयुञ्जि	अयुञ्ज्वहि	अयुञ्ज्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	युञ्जीत	युञ्जीयाताम्	युञ्जीरन्
मध्यम पु०	युञ्जीथाः	युञ्जीयाथाम्	युञ्जीध्वम्
उत्तम पु०	युञ्जीय	युञ्जीवहि	युञ्जीमहि

लृट्

प्रथम पु०	योक्ष्यते	योक्ष्येते	योक्ष्यन्ते
मध्यम पु०	योक्ष्यसे	योक्ष्येथे	योक्ष्यध्वे

उत्तम पु०	योक्ष्ये	योक्ष्यावहे	योक्ष्यामहे

कृदन्त—क्त-युक्तः, क्तवत-युक्तवान्, क्त्वा-युक्त्वा, तुम्-योक्तुम्, शतृ-युञ्जन् (युञ्जती स्त्री०), आन-युञ्जानः, तव्य-योक्तव्यः, अनीय-योजनीयः।

उपसर्गसहित—उद्युज् (यत्न करना), उपयुज् (काममें लाना), नियुज् (आज्ञा देना), प्रयुज् (काममें लाना), वियुज् (अलग होना)।

भुज्

भुज् धातु उभयपदी है, किंतु परस्मैपद में इसका अर्थ पालन करना, राज्य करना, शासन करना है. और आत्मनेपद में खाना है।

दोनों पदोंमें इसके रूप सब लकारोंमें युज् की तरह ही होंगे।

भुज् (शासन करना)

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	भुनक्ति	भुङ्क्तः	भुञ्जन्ति
मध्यम पु०	भुनक्षि	भुङ्क्थः	भुङ्क्थ
उत्तम पु०	भुनज्मि	भुञ्ज्वः	भुञ्ज्मः

लोट्

प्रथम पु०	भुनक्तु	भुङ्क्ताम्	भुञ्जन्तु
मध्यम पु०	भुङ्ग्धि	भुङ्क्तम्	भुङ्क्त
उत्तम पु०	भुनजानि	भुनजाव	भुनजाम

लङ्

प्रथम पु०	अभुनक्	अभुङ्क्ताम्	अभुञ्जन्
मध्यम पु०	,,	अभुङ्क्तम्	अभुङ्क्त
उत्तम पु०	अभुनजम्	अभुञ्ज्व	अभुञ्ज्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	भुञ्ज्यात्	भुञ्ज्याताम्	भुञ्ज्युः
मध्यम पु०	भुञ्ज्याः	भुञ्ज्यातम्	भुञ्ज्यात
उत्तम पु०	भुञ्ज्याम्	भुञ्ज्याव	भुञ्ज्याम

लृट्

प्रथम पु०	भोक्ष्यति	भोक्ष्यतः	भोक्ष्यन्ति
मध्यम पु०	भोक्ष्यसि	भोक्ष्यथः	भोक्ष्यथ
उत्तम पु०	भोक्ष्यामि	भोक्ष्यावः	भोक्ष्यामः

भुज् (खाना) आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	भुङ्क्ते	भुञ्जाते	भुञ्जते
मध्यम पु०	भुङ्क्षे	भुञ्जाथे	भुङ्ग्ध्वे
उत्तम पु०	भुञ्जे	भुञ्ज्वहे	भुञ्ज्महे

लोट्

प्रथम पु०	भुङ्क्ताम	भुञ्जाताम	भुञ्जताम्
मध्यम पु०	भुङ्क्ष्व	भुञ्जाथाम्	भुङ्ग्ध्वम
उत्तम पु०	भुनजै	भुनजावहै	भुनजामहै

लङ्

प्रथम पु०	अभुङ्क्त	अभुञ्जाताम्	अभुञ्जत
मध्यम पु०	अभुङ्क्थाः	अभुञ्जाताम्	अभुङ्ग्ध्वम
उत्तम पु०	अभुञ्जि	अभुञ्ज्वहि	अभुञ्ज्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	भुञ्जीत	भुञ्जीयाताम्	भुञ्जीरन्
मध्यम पु०	भुञ्जीथाः	भुञ्जीयाथाम	भुञ्जीध्वम्
उत्तम पु०	भुञ्जीय	भुञ्जीवहि	भुञ्जीमहि

लृट्

प्रथम पु०	भोक्ष्यते	भोक्ष्यते	भोक्ष्यन्ते
मध्यम पु०	भोक्ष्यसे	भोक्ष्येथे	भोक्ष्यध्वे
उत्तम पु०	भोक्ष्ये	भोक्ष्यावहे	भोक्ष्यामहे

कृदन्त-क्त-भुक्तः, क्तवत्-भुक्तवान्, क्त्वा-भुक्त्वा, तुम्-भोक्तुम्, शतृ-भुञ्जन् (भुञ्जती स्त्री०) शान-भुञ्जानः, तव्य-भोक्तव्यः, अनीय-भोजनीयः, प्रेरणार्थक (णिजन्त) भोजयति-ते। कर्मवाच्य-भुज्यते।

तनादि-गण

तनादि-गणका विकरण उ है।

तनादि-गणके धातुओंके रूप स्वादि-गणके धातुओंकी तरह होते हैं। उ विकरण से परे हि का सदा लोप हो जाता है। जैसे—तन् + उ + हि = तनु।

तन् (फैलाना, तनना) उभयपदी

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	तनोति	तनुतः	तन्वन्ति
मध्यम पु०	तनोषि	तनुथः	तनुथ
उत्तम पु०	तनोमि	तनुवः-तन्वः	तनुमः-तन्मः

लोट्

प्रथम पु०	तनोतु	तनुताम्	तन्वन्तु
मध्यम पु०	तनु	तनुतम्	तनुत
उत्तम पु०	तनवानि	तनवाव	तनवाम

लङ्

प्रथम पु०	अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्
मध्यम पु०	अतनोः	अतनुतम्	अतनुत
उत्तम पु०	अतनवम्	अतनुव-अतन्व	अतनुम-अतन्म

विधि लिङ्

प्रथम पु०	तनुयात्	तनुयाताम्	तनुयुः
मध्यम पु०	तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात
उत्तम पु०	तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम

लृट्

प्रथम पु०	तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति

मध्यम पु०	तनिष्यसि	तनिष्यथः	तनिष्यथ
उत्तम पु०	तनिष्यामि	तनिष्यावः	तनिष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	तनुते	तन्वाते	तन्वते
मध्यम पु०	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
उत्तम पु०	तन्वे	तनुवहे-तन्वहे	तनुमहे-तन्महे

लोट्

प्रथम पु०	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम
मध्यम पु०	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम
उत्तम पु०	तनवै	तनवावहै	तनवामहै

लङ्

प्रथम पु०	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
मध्यम पु०	अतनुथाः	अतन्वाथाम्	अतनुध्वम्
उत्तम पु०	अतन्वि	अतनुवहि-अतन्वहि	अतनुमहि-अतन्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	तन्वीत	तन्वीयाताम्	तन्वीरन्
मध्यम पु०	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
उत्तम पु०	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

लृट्

प्रथम पु०	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते
मध्यम पु०	तनिष्यसे	तनिष्येथे	तनिष्यध्वे
उत्तम पु०	तनिष्ये	तनिष्यावहे	तनिष्यामहे

कृदन्त—क्त-ततः, क्तवत्-ततवान्, क्त्वा-तत्वा-तनित्वा, तुम्-तनितुम्, शतृ-तन्वन् (तन्वती स्त्री०) आन-तन्वानः, तव्य-तनितव्यः, अनीय-तननीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) तानयति-ते। कर्मवाच्य-तन्यते।

मन् (सोचना) केवल आत्मनेपदी है। इसके रूप सर्वथा तन् के

आत्मनेपदी रूपों के समान हैं।

कृ (करना) उभयपदी

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पु०	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पु०	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लोट्

प्रथम पु०	करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पु०	कुरु	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पु०	करवाणि	करवाव	करवाम

लङ्

प्रथम पु०	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पु०	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पु०	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पु०	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पु०	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

लृट्

प्रथम पु०	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पु०	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पु०	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
मध्यम पु०	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उत्तम पु०	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लोट्

प्रथम पु०	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
मध्यम पु०	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उत्तम पु०	करवै	करवावहै	करवामहै

लङ्

प्रथम पु०	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
मध्यम पु०	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उत्तम पु०	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
मध्यम पु०	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उत्तम पु०	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

लृट्

प्रथम पु०	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
मध्यम पु०	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उत्तम पु०	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

कृदन्त—क्त-कृतः, क्तवत्-कृतवान्, क्त्वा-कृत्वा, तुम्-कर्तुम्, शतृ-कुर्वन् (कुर्वती स्त्री०) आन-कुर्वाणः, तव्य-कर्तव्यः, अनीय-करणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) कारयति-ते। कर्मवाच्य-क्रियते।

उपसर्गसहित—अधिकृ (अधिकार करना), अनुकृ (नकल करना) अपकृ (बुराई करना), अ ा आ (अपा) कृ (दूर करना). आविस् कृ-(आविष्कृ, प्रकट करना), उपकृ (भलाई करना), तिरस्कृ (अनादर करना), पुरस्कृ (सामने रखना), विकृ (बदलना), विआ (व्या) कृ (कहना, वर्णन करना)।

क्र्यादि-गण

१४२—*क्र्यादिगण* का विकरण *ना* है।

हलादि अविकारक विभक्तियोंसे पूर्व **ना** को **नी** हो जाता है और स्वरादि अविकारक विभक्तियों से पूर्व **ना** को **न्** हो जाता है । **जैसे—क्री + ना+तः=क्रीनी+तः**=क्रीणीतः । **क्री + ना+अन्ति=क्रीन् + अन्ति =** क्रीणन्ति ।

क्र्यादिगणके हलन्त धातुओंसे परे हि और विकरण दोनोंको **आन** हो जाता है । **जैसे—गृह् + ना+हि=गृह् +आन**=गृहाण । मुष् =मुषाण ।

क्री (खरीदना) उभयपद ।

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पु०	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पु०	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लोट्

प्रथम पु०	क्रीणातु	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पु०	क्रीणीहि	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पु०	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम

लङ्

प्रथम पु०	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पु०	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पु०	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	क्रणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पु०	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पु०	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रणीयाम

लृट्

प्रथम पु०	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति
मध्यम पु०	क्रेष्यसि	क्रेष्यथः	क्रेष्यथ
उत्तम पु०	क्रेष्यामि	क्रेष्यावः	क्रेष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पु०	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पु०	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लोट्

प्रथम पु०	क्रीणीताम्	क्रीणताम	क्रीणताम
मध्यम पु०	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम	क्रीणीध्वम
उत्तम पु०	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

लङ्

प्रथम पु०	अक्रीणीत	अक्रीणाताम	अक्रीणत
मध्यम पु०	अक्रीणीथा:	अक्रीणाथाम	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पु०	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पु०	क्रीणीथा:	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम
उत्तम पु०	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

लृट्

प्रथम पु०	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते
मध्यम पु०	क्रेष्येसे	क्रेष्येथे	क्रेष्यध्वे
उत्तम पु०	क्रेष्ये	क्रेष्यावहे	क्रेष्यामहे

कृदन्त—क्त-क्रीत:, क्तवत्-क्रीतवान् , क्त्वा-क्रीत्वा, तुम्-क्रेतुम् , शतृ-क्रीणन् (क्रीणती स्त्री०) आन-क्रीणान:, तव्य-क्रेतव्य:, अनीय-क्रयणीय: ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) क्रापयति-ते । कर्मवाच्य-क्रीयते ।

उपसर्गसहित—निस् क्री (निष्क्री, मुक्त करना), परिक्री (खरीदना), विक्री (बेचना) ।

ग्रह् [पकड़ना] उभयपदी

ग्रह् को गृह् हो जाता है । जैसे-गृह् + ना + ति=गृह्णाति । गृह् +ना+

हि=गृह्+आन=गृहाण । गृह्+ना+ऐ=गृह्णे ।
लृट् में ग्रह् का इ दीर्घ हो जाता है । ग्रह्+इ+स्यति=ग्रहिष्यति=ग्रहीष्यति ।

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति
मध्यम पु०	गृह्णासि	गृह्णीथः	गृह्णीथ
उत्तम पु०	गृह्णामि	गृह्णीवः	गृह्णीमः

लोट्

प्रथम पु०	गृह्णातु	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु
मध्यम पु०	गृहाण	गृह्णीतम्	गृह्णीत
उत्तम पु०	गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाव

लङ्

प्रथम पु०	अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	अगृह्णन्
मध्यम पु०	अगृह्णाः	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत
उत्तम पु०	अगृह्णाम	अगृह्णीव	अगृह्णीम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	गृह्णीयात्	गृह्णीयाताम्	गृह्णीयुः
मध्यम पु०	गृह्णीयाः	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात
उत्तम पु०	गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम

लृट्

प्रथम पु०	ग्रहीष्यति	ग्रहीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति
मध्यम पु०	ग्रहीष्यसि	ग्रहीष्यथः	ग्रहीष्यथ
उत्तम पु०	ग्रहीष्यामि	ग्रहीष्यावः	ग्रहीष्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	गृह्णीते	गृह्णाते	गृह्णते
मध्यम पु०	गृह्णीषे	गृह्णाथे	गृह्णीध्वे
उत्तम पु०	गृह्णे	गृह्णीवहे	गृह्णीमहे

लोट्

प्रथम पु०	गृह्णीताम्	गृह्णाताम्	गृह्णताम्
मध्यम पु०	गृह्णीष्व	गृह्णाथाम्	गृह्णीध्वम्
उत्तम पु०	गृह्णै	गृह्णावहै	गृह्णामहै

लङ्

प्रथम पु०	अगृह्णीत	अगृह्णाताम	अगृह्णत
मध्यम पु०	अगृह्णीथाः	अगृह्णाथाम	अगृह्णीध्वम्
उत्तम पु०	अगृह्णि	अगृह्णीवहि	अगृह्णीमहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	गृह्णीत	गृह्णीयाताम्	गृह्णीरन्
मध्यम पु०	गृह्णीथाः	गृह्णीयाथाम्	गृह्णीध्वम्
उत्तम पु०	गृह्णीय	गृह्णीवहि	गृह्णीमहि

लृट्

प्रथम पु०	ग्रहीष्यते	ग्रहीष्येते	ग्रहीष्यन्ते
मध्यम पु०	ग्रहीष्यसे	ग्रहीष्येथे	ग्रहीष्यध्वे
उत्तम पु०	ग्रहीष्ये	ग्रहीष्यावहे	ग्रहीष्यामहे

कृदन्त—क्त-गृहीतः, क्तवत्-गृहीतवान, क्त्वा-गृहीत्वा, तुम्-ग्रहीतुम्, शतृ-गृह्णन् (गृह्णती स्त्री०) आन-गृह्णानः, तव्य-ग्रहीतव्य, अनीय-ग्रहणीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) ग्राहयति-ते। कर्मवाच्य-गृह्यते।

उपसर्गसहित—अनुग्रह् (कृपा करना), अवग्रह् (रोकना), आग्रह् (हठ करना), उद्गृह् (ऊपर उठाना), निग्रह् (दबाना), प्रतिग्रह् (पकड़ना, स्वीकार करना), विग्रह् (लड़ना), समग्रह् (जमा करना)

ज्ञा (जानना) उभयपदी

ज्ञा को जा होजाता है।

परस्मैपद

लट्

प्रथम पु०	जानाति	जानीतः	जानन्ति
मध्यम पु०	जानासि	जानीथः	जानीथ

उत्तम पु०	जानामि	जानीवः	जानीमः

लोट्

प्रथम पु०	जानातु	जानीताम्	जानन्तु
मध्यम पु०	जानीहि	जानीतम्	जीनीत
उत्तम पु०	जानानि	जानाव	जानाम

लङ्

प्रथम पु०	अजानात्	अजानीताम्	अजानन्
मध्यम पु०	अजानाः	अजानीतम्	अजानीत
उत्तम पु०	अजानाम्	अजानीव	अजानीम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	जानीयात्	जानीयाताम्	जानीयुः
मध्यम पु०	जानीयाः	जानीयातम्	जानीयात
उत्तम पु०	जानीयाम्	जानीयाव	जानीयाम

लृट्.

प्रथम पु०	ज्ञास्यति	ज्ञास्यतः	ज्ञास्यन्ति
मध्यम पु०	ज्ञास्यसि	ज्ञास्यथः	ज्ञास्यथ
उत्तम पु०	ज्ञास्यामि	ज्ञास्यावः	ज्ञास्यामः

आत्मनेपद

लट्

प्रथम पु०	जानीते	जानाते	जानते
मध्यम पु०	जानीषे	जानाथे	जानीध्वे
उत्तम पु०	जाने	जानीवहे	जानीमहे

लोट्

प्रथम पु०	जानीताम्	जानाताम	जानताम्
मध्यम पु०	जानीष्व	जानाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पु०	जानै	जानावहै	जानामहै

लङ्

प्रथम पु०	अजानीत	अजानाताम्	अजानत

मध्यम पु०	अजानीथाः	अजानाथाम्	अजानीध्वम्
उत्तम पु०	अजानि	अजानीवहि	अजानीमहि

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	जानीत	जानीयाताम्	जानीरन्
मध्यम पु०	जानीथाः	जानीयाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पु०	जानीय	जानीवहि	जानीमहि

लृट्

प्रथम पु०	ज्ञास्यते	ज्ञास्येते	ज्ञास्यन्ते
मध्यम पु०	ज्ञास्यसे	ज्ञास्येथे	ज्ञास्यध्वे
उत्तम पु०	ज्ञास्ये	ज्ञास्यावहे	ज्ञास्यामहे

कृदन्त—क्त-ज्ञातः, क्तवत्-ज्ञातवान्, क्त्वा-ज्ञात्वा, तुम्-ज्ञातुम्, शतृ-जानन् (जानती स्त्री०) शान-जानानः, तव्य-ज्ञातव्यः, अनीय-ज्ञानीयः।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) ज्ञापयति-ते। कर्मवाच्य-ज्ञायते।

उपसर्गसहित—अनुज्ञा (इजाजत देना), अपज्ञा (छुपाना), अभिज्ञा (समझना), अवज्ञा (अपमान करना), आज्ञा (आदेश देना), प्रज्ञा (भली प्रकार जानना), प्रतिज्ञा (प्रण करना), प्रति अभि (प्रत्यभि) ज्ञा (पहचानना),

मुष् (चुराना) परस्मैपद।

लट्

प्रथम पु०	मुष्णाति	मुष्णीतः	मुष्णन्ति
मध्यम पु०	मुष्णासि	मुष्णीथः	मुष्णीथ
उत्तम पु०	मुष्णामि	मुष्णीवः	मुष्णीमः

लोट्

प्रथम पु०	मुष्णातु	मुष्णीताम्	मुष्णन्तु
मध्यम पु०	मुषाण	मुष्णीतम्	मुष्णीत
उत्तम पु०	मुष्णानि	मुष्णाव	मुष्णाम

लङ्

प्रथम पु०	अमुष्णात्	अमुष्णीताम्	अमुष्णन्
मध्यम पु०	अमुष्णाः	अमुष्णीतम्	अमुष्णीत

उत्तम पु०	अमुष्णाम्	अमुष्णीव	अमुष्णीव

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	मुष्णीयात्	मुष्णीयाताम्	मुष्णीयुः
मध्यम पु०	मुष्णीयाः	मुष्णीयातम्	मुष्णीयात
उत्तम पु०	मुष्णीयाम्	मुष्णीयाव	मुष्णीयाम

लृट्

प्रथम पु०	मोषिष्यति	मोषिष्यतः	मोषिष्यन्ति
मध्यम पु०	मोषिष्यसि	मोषिष्यथः	मोषिष्यथ
उत्तम पु०	मोषिष्यामि	मोषिष्यावः	मोषिष्यामः

कृदन्त—क्त-मुषितः, क्तवत्-मुषितवान्, क्त्वा-मुषित्वा, तुम्-मोषितुम्, शतृ-मुष्णन् (मुष्णती स्त्री०), तव्य-मोषितव्यः अनीय-मोषणीयः ।

प्रेरणार्थक (णिजन्त) मोषयति-ते, कर्मवाच्य-मुष्यते ।

बन्ध् (बांधना) परस्मैपदी

लट्

प्रथम पु०	बध्नाति	बध्नीतः	बध्नन्ति
मध्यम पु०	बध्नासि	बध्नीथः	बध्नीथ
उत्तम पु०	बध्नामि	बध्नीवः	बध्नीमः

लोट्

प्रथम पु०	बध्नातु	बध्नीताम्	बध्नन्तु
मध्यम पु०	बधान	बध्नीतम्	बध्नीत
उत्तम पु०	बध्नानि	बध्नाव	बध्नाम

लङ्

प्रथम पु०	अबध्नात्	अबध्नीताम्	अबध्नन्
मध्यम पु०	अबध्नाः	अबध्नीतम्	अबध्नीत
उत्तम पु०	अबध्नाम्	अबध्नीव	अबध्नीम

विधि-लिङ्

प्रथम पु०	बध्नीयात्	बध्नीयाताम्	बध्नीयुः
मध्यम पु०	बध्नीयाः	बध्नीयातम्	बध्नीयात

उत्तम पुं०	बध्नीयाम्	बध्नीयाव	बध्नीयाम

लृट्

प्रथम पु०	भन्त्स्यति	भन्त्स्यत:	भन्त्स्यन्ति
मध्यम पु०	भन्त्स्यसि	भन्त्स्यथ:	भन्त्स्यथ
उत्तम पु०	भन्त्स्यामि	भन्त्स्याव:	भन्त्स्याम:

कृदन्त—क्त-बद्ध:, क्तवत्-बद्धवान्, क्त्वा-बद्ध्वा, तुम्-बन्द्धुम्, शत्-बध्नन् (बध्नती स्त्री०), तव्य-बद्धव्य:, अनीय-बन्धनीय:,

प्रेरणार्थक (णिजन्त) बन्धयति-ते। कर्मवाच्य-बध्यते।

उपसर्गसहित—अनुबन्ध् (जोड़ना, अनुकरण करना), आबन्ध् (बनाना), निर्बन्ध् (हठ करना), सम्बन्ध् (साथ बांधना)।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

महर्षि विश्वामित्र जब कभी हवन करता था, उसी समय राक्षस लोग आते और मांस आदि अपवित्र चीज़ें फेंक कर विघ्न कर देते थे।

चौदह (चतुर्दश) वर्षों तक राम और लक्ष्मण सीताके साथ जंगलोंमें घूमते रहे। चौदहवें सालके अन्तमें उन्होंने रावण को मारा।

जब वे अयोध्यामें आये तो प्रजाके लोग बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद कई सालों तक उन्होंने धर्मपूर्वक राज्य भोगा।

जब महाभारतका युद्ध हो रहा था तो कई बार अर्जुन कर्णके हाथ से बच गया और कई बार कर्ण अर्जुनके तीरोंका निशाना होते होते बच गया।

जो लोग महंगी (महार्घ) चीज़ खरीदते हैं वे दाम तो अधिक देते हैं परन्तु कभी घाटे (हानि) में नहीं रहते।

दूसरों की जूठन (उच्छिष्ट, फेला) खानेसे मनुष्यको कई रोग लग जाते हैं, क्योंकि मनुष्योंके कई ऐसे रोग लगे होते हैं जो नज़र तो नहीं आते परन्तु जान तक ले लेते हैं।

इस रस्सीको नापो कि यह कितने हाथ लम्बी है, यह मेरे काम आयगी कि नहीं।

जो लोग विवाहके अवसर पर अपनी लड़कियोंको दहेज़ (यौतुक) देंगे या लेंगे, दोनों समाजके साथ अन्याय करेंगे।

इस आरी (क्रकच) से इस लड़की के दो टुकड़े करदो और फिर उन्हें जोड़ दो।

दुर्योधनकी सारी सेवा (वाहनी, दल) में भीष्मके पल्लेका एकभी योद्धा न थे, इसलिए उसने उन्हें ही सेनाके अधिकारमें लगा दिया (नियुज्)।

जीना उसीका सफल है जिसके जीनेसे बहुतोंका भला हो, नहीं तो अपना पेट कौन नहीं भरता।

इस समय हमारे कालिजका नतोजा बहुत अच्छा रहा है, जिस किसीने सुना है, प्रसन्न हुआ है।

उपस्थित क्षत्रियोंमें से जो भी तीरसे मछलीकी आंखको वेध सकेगा वही द्रौपदीको बिवाहेगा।

कौन जानता है कि मनुष्य प्रतिक्षण पांवके नीचे कितने (कति) कीड़े (कीट, कृमि) मारता है।

अनुशीलनी—२३

१—इनके धातु और विभक्तियोंका अलग अलग दिखाओ—

मुषाण, भुनजे, परिधत्स्व, अजहुः, अबिभः, अक्रीणि, अरुणत, कुर्वः, युनजानि, अपिपरुः।

२—इनके रूप लिखो—

दा के लङ् में, भीके लोट् में, रुध् के लृट् में, दा के विधिलिङ् में, शक् के लङ् में।

३—इनके लिए संस्कृत पद दो—

खाओ, भोगेगा, मार दिया, डरूँ, जानते हो (तुम), पकड़ो, भर रहे थे, मारते हैं।

४—इन अशुद्ध रूपोंके शुद्ध रूप बताओ—

गृह्णाहि, जुह्वन्ति, अरुन्धन्त, भुङ्क्षि, दधाहि।

णिजन्त (प्रेरणार्थक) क्रिया

कर्ता दो प्रकारका होता है—एक कारक कर्ता और दूसरा प्रेरक कर्ता। कारक कर्ता वह होता है जो क्रियाद्वारा बताये हुए कामको करता है और प्रेरक कर्ता वह होता है जो कारक कर्ता द्वारा काम करवाता है। 'रामः भोजनं

भुङ्क्ते।' (राम भोजन खाता है।) इसमें भोजन खानेवाला राम है—अर्थात् खाना क्रिया द्वारा बताये हुए कामको करने वाला राम है। अतः भुङ्क्ते क्रिया का कर्ता राम है। परन्तु राम यदि वह भोजन किसीकी प्रेरणासे खाये, तो भोजन खिलानेवाला जो होगा वह प्रेरक कर्ता होगा। जैसे—'पिता रामं अन्नं भोजयति' (पिता रामको भोजन खिलाता है।)' इसमें भोजन खाने वाला तो राम है, परन्तु खिलाने वाला पिता है।

काम करवाने वाला प्रेरक कर्ता होता है, और प्रेरककी क्रियाको प्रेरणार्थक क्रिया कहते हैं।

प्रेरणार्थक क्रियाका कर्ता (कर्तृवाच्यमें) प्रथमान्त रहता है और कारक कर्ता—अर्थात् वास्तवमें जो काम करने वाला होता है, वह बहुधा तृतीयामें और कभी कभी द्वितीयामें रहता है। जैसे—भृत्यः भारं नयति।=स्वामी भृत्येन भारं नाययति। पहले वाक्यमें भृत्यः कर्ता और नयति क्रिया है और दूसरेमें स्वामी (प्रयोजक, प्रेरक) कर्ता है, नयति का कर्ता भृत्य तृतीयामें बदल गया है। दोनों वाक्योंमें भार लेजाने वाला नौकर ही है। इसी तरह—देवः व्याकरणं पठति=आचार्यः देवं व्याकरणं पाठयति। इस वाक्यमें पठति का कर्ता देवः (प्रथमान्त) देवं द्वितीयान्तमें बदल गया है।

अद् खाद् और भक्ष् धातुका कर्ता तृतीयान्तमें ही बदलता है। जैसे—माता पुत्रेण ओदनं खादयति (आदयति भक्षयति)।

१४३—(क) जैसे ऊपर बताया गया है अणिजन्त क्रिया का कर्ता बहुधा तृतीयान्त रहता है। जैसे—गृहिणी सूदेन अन्नं पाचयति। रामः वानरैः रावणं घातयति। नृपः चाण्डालैः अपराधिनः मारयति।

(ख) जिन धातुओंका अर्थ गति (जाना, चलना, फिरना), बुद्धि (जानना, समझना), भक्षण (खाना), या बढ़ना हो और जो धातु अकर्मक हों उनके साथ कारक कर्ता तृतीयान्त नहीं, *द्वितीयान्त* में बदलता है। जैसे—माता मोहनं विद्यालयं गमयति।

कैकेयी रामम् अरण्यम् अगमयत्। आचार्यः छात्रं शास्त्रस्य तत्त्वं वेदयति। अजापालकः अजान् तृणानि भोजयति। गुरुः शिष्यान् पाठं पाठयति। परन्तु पिता बालकेन अन्नं खादयति, आदयति, भक्षयति।

अकर्मक क्रिया यदि प्रेरणामें प्रयुक्त हो तो वह सकर्मक हो जाती है। अर्थात् उसका कर्ता प्रेरणार्थक क्रिया का कर्म बन जाता है। जैसे—शिशुः शेते (अकर्मक)। माता शिशुं शाययति। (सकर्मक)। वृक्षः वर्धते। (अकर्मक)। मालाकारः वृक्षं वर्धयति। (सकर्मक)।

(हिन्दीमें कई धातुओंके दो प्रेरणार्थक रूप होते हैं—जैसे—दौड़ना का दौड़ाना—दुड़वाना, देखना का दिखाना—दिखलवाना, पढ़ना का पढ़ाना—पढ़वाना, नाचना का नचाना—नचवाना आदि। परन्तु संस्कृतमें इन दोनों अर्थोंमें एक ही प्रेरणार्थक क्रिया प्रयुक्त की जाती है। जैसे—पढ़ाता है और पढ़वाता है— इन दोनोंके लिए पाठयति। दिखाता है और दिखलवाता है— इन दोनोंके लिए दर्शयति एक ही क्रिया आती है। जहाँ दूसरा अर्थ (दिखलवाना, पढ़वाना आदि) इष्ट हो वहाँ जिसके द्वारा दिखलवाना या पढ़वाना आदि क्रिया हो उसमें तृतीया विभक्ति प्रयुक्त होती है। जैसे—जननी शिशुं चन्द्रं दर्शयति (माँ बच्चेको चांद दिखाती है), जननी दास्या शिशुं चन्द्रं दर्शयति। (माँ नौकरानीसे बच्चेको चांद दिखलवाती है।) पिता पुत्रं पाठयति। (पिता पुत्रको पढ़ाता है।) पिता गुरुणा पुत्रं पाठयति। (पिता गुरुसे पुत्रको पढ़वाता है।)

१४४—किसी धातु की प्रेरणार्थक क्रिया बनानेके लिए धातुसे आगे णिच् लगाया जाता है। (णिच् लगनेसे इस क्रियाको णिजन्त कहते हैं।) णिच् के ण् और च् का लोप हो जाता है। शेष इ रह जाता है। इसके बाद अ (भ्वादि गण का विकरण) रखा जाता है। फिर इ को गुण (ए) और पुनः ए को अय् होता है। अय् के साथ अ जोड़नेसे 'अय' बन जाता है। इस अय का वैसा ही रूप है जो चुरादिगणके अय का है। अतः जिस धातुका णिजन्त रूप बनाना हो उसके आगे अय

जोड़ कर उसके रूप सब लकारोंमें चुरादिगणके धातुओंकी तरह बना लेने चाहिएँ।

विशेष नियम

१४५—*आकारान्त* धातुओंके अन्तमें अय से पूर्व प् जोड़ा जाता है। जैसे—दा+प् +अय+ति=दापयति। स्था—स्थापयति। मा—मापयति। धा—धापयति। या—यापयति।

अपवाद—पा (पीना) के बाद य् और पा (पालना) के बाद ल् जोड़ा जाता है। जैसे—पा+य् + अय + ति=पाययति (पिलाता है)। पालयति (पलवाता है)।

१४६—*ऐकारान्त* धातुओंके ऐ को आ हो जाता है।

जैसे—गै = गा + प् + अय + ति = गापयति।

ग्ले, म्लै और स्ना धातुओं में अन्तिम आ विकल्प से ह्रस्व हो जाता है। जैसे—ग्लै=ग्ला+प् + अय+ति = ग्लापयति-ग्लपयति, म्लापयति-म्लपयति। स्नापयति-स्नपयति।

१४७—रुह् के ह् को विकल्पसे प् हो जाता है।

जैसे—रोहयति-रोपयति।

रभ् और लभ् की उपधा में म् लग जाता है। जैसे—रम्भयति, लम्भयति।

१४८—*जि*, क्री और *अधि+इ* के अन्तिम स्वरको *आ* हो

गुह्—गूहयति, चम्—चामयति, कम्—कामयति, मृज्—मार्जयति, दंश्—दंशयति, रञ्ज्—रञ्जयति, ध्मा—ध्मापयति, कम्—कामयते, कृत्—कर्तयति, मुच्—मोचयति, लिप्—लेपयति, लुप्—लोपयति, सिच्—सेचयति, मृग्—मृगयति, गण्—गमयति, रच्—रचयति, अन—आनयति, ईश्—ईशयति, वच्—वाचयति, सू—सावयति, या—यापयति, लिह्—लेहयति, ह्री—ह्रेपयति, धा—धापयति, पृ—पारयति, मा—मापयति, ह्रा—ह्रापयति, धु—धावयति, सु—सावयति, हिंस्—हिंसयति, मन्—मानयति, बन्ध्—बन्धयति, बुध्—बोधयति, यज्—याजयति, राज्—राजयति, राध्—राधयति, पद्—पादयति, ह्वे—ह्वापयति, मन्थ्—मन्थयति। गूह—गूहयति।

जाता है। जैसे—जि=जा=प् + अय+ति=जापयति। क्री=क्रा+प्+अय+ति क्रापयति। अधि+इ=अध्या+प्+अयति=अध्यापयति।
हन् का घातयति, प्री का प्रीणयति, वि+स्मि का विस्माययति-विस्मापयते, सिध् का साधयति, रूप बनेंगे। (भीषयते का प्रयोग तब होगा, जब इसका अर्थ होगा 'डराता है'।) णिजन्त में धातु प्रायः उभयपदी होते हैं, परन्तु कुछ धातु ऐसे हैं जो णिच् आने से परस्मैपदी या आत्मनेपदी हो जाते हैं। इनके रूप सब लकारों में चुर् की तरह होते हैं।

धातुओंके णिजन्त रूप

याच्	याचयति	वृध्	वर्धयति	अस् (होना)	भावयति
शास्	शासयति	स्पृश्	स्पर्शयति	स्वप्	स्वापयति
आस्	आसयति	सेव्	सेवयति	नश्	नाशयति
आप्	आपयति	स्था	स्थापयति	व्यध्	व्याधयति
वद्	वादयति	दा	दापयति	भ्रम्	भ्रमयति
दिव्	देवयति	ज्ञा	ज्ञापयति-	शक्	शाकयति
इष्	एषयति		ज्ञपयति	तन्	तानयति
चिन्त्	चिन्तयति	पा (पीना)	पाययति	ग्रह्	ग्राहयति
ईक्ष्	ईक्षयति	पा (पालना)	पालयति	प्रच्छ्	प्रच्छयति
मुद्	मोदयति	जि	जापयति	तड्	ताडयति
रुद्	रोदयति	इ	गमयति	कथ्	कथयति
दुह्	दोहयति	हस्	हासयति	भक्ष्	भक्षयति
तुद्	तोदयति	पठ्	पाठयति	नम्	नामयति-
रुध्	रोधयति	पच्	पाचयति		नमयति,
युज्	योजयति	सद्	सादयति	प्र+नम्	प्रणामयति
मुष्	मोषयति	रक्ष्	रक्षयति	गम्	गमयति
चुर्	चोरयति	लभ्	लम्भयति	शम्	शमयति-
दृश्	दर्शयति	सह्	साहयति		शामयति
वृत्	वर्तयति	अद्	आदयति	जन्	जनयति

हन	घातयति	स्तु	स्तावयति	ह	हारयति
अधि+इ	अध्यापयति	हु	हावयति	जागृ	जागरयति
नी	नाययति	सु	सावयति	भृ	भारयति
शी	शाययति	श्रु	श्रावयति	मृ	मारयति
भी	भाययति-भीषयते	ब्रू	वाचयाति	कृ	कारयति
क्री	क्रापयति	स्मृ	स्मारयति		

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो :—

गुरुने रामदेवकी इन्सपेक्टर (निरीक्षक) से इतनी प्रशंसा करवाई कि वह खुशीसे फूल उठा (प्रफुल्ल)।

जिस तरह सुग्रीवने अपने भाई बालिको रामसे मरवाया था, उसी तरह विभीषणने रामके द्वारा अपने सारे कुलका नाश करवा दिया।

देवको अभी यहां दो घंटे लग जायेंगे, अतः इसकी माताके पास तुरंत (स्वत्वरम) संदेश भिजवादो, नहीं तो (अन्यथा) वह बेचारी चिन्ता करेगी।

पिताने मोहनको एक योग्य गुरुसे पढ़वाया था, इसीलिए वह आजकल जज (न्यायाधिपति) बन गया है।

कुएंसे पानी निकलवा कर उस स्त्रीका घड़ा भरवादो, और उसके सिर पर रखवाकर घर भेज दो।

पिताजी, गोपाल मुझे खुद (स्वयम्) तो डराता रहता है, अब अब दूसरोंसे भी डरवाता है।

यह कुत्ता है जोसे मरा है, इसे कहीं (कुत्रचित्) दूर फिंकवा दो, नहीं तो बीमारी फैल जायगी।

देखो, इतना छोटा आदमी उस आदमीको पेड़पर चढ़ा रहा है। यह उससे लकड़ियां तुड़वायेगा।

इन सब भिखारियोंको एक पंक्तिमें बैठा दो। इनमें कुछको मैं खाना खिलाऊंगा, और कुछमें तुम भात (ओदन) बांटना।

वह स्त्री अपनी नौकरानीसे पहले रसोईघर (महानस) साफ करवाती है, फिर उसे गोबरसे (गोमय) से पुतवाती है (लिप्) और बादमें भोजन भी बनवाती है।

अनुशीलनी–२४

१—इनके सम्बन्धी नियम बताकर उदाहरण दो—

णिच् से पूर्व—(क) अ को दीर्घ, इ, उ, ऋ को गुण, इ, उ, ऋ को वृद्धि।

(ख) धातु के अन्त में प् जोड़ना।

२—इन धातुओंके णिजन्त रूप बताओ—

धू, पठ्, स्मृ, अधि+इ, इ, विद्, ज्ञा, पा, स्था, गुह्, सिध्।

३—इन रूपोंको नियमोंसे सिद्ध करो—

पालयति, अगापयत्, मापयिष्यति, पातयेत्, जापयति, अकामयत, मोहयति, योजयति।

४—इन वाक्योंमें कोई प्रेरक कर्ता लगा कर क्रियाको णिजन्तमें बदलो—

शिशुः शेते। छात्राः पाठं पठन्ति। गावो गोष्टं गच्छन्ति। चौराः धनं हरन्ति। अर्जुनः शत्रूनजयत्। बालकश्चन्द्रं पश्यति। रामोऽयोध्यामत्यजत्। दास्यवस्करं क्षिपति। वृक्षः पतति। श्वा बिभेति।

५—णिजन्त क्रियाके साथ कर्ता तृतीयामें कब बदलता है और द्वितीयामें कब बदलता है? उदाहरणोंसे स्पष्ट करो।

६—इनमें रिक्त स्थानोंको भरो!—अयं बालः—पन्थानं दर्शयति। गुरुः छात्रान्——पाठयति। कृष्णः——दुर्योधनम् अघातयत्। क एन तृषितं—पाययिष्यति। रामः लक्ष्मणेन सीताम् वने—। अयं वृद्धः देहं——। त्वां श्वः विद्यालये——दण्डयिष्यामि। दासेन——कीलकेन बन्धय। रामेण मह्यं—ज्ञापय।

७—इन वाक्यों को शुद्ध या सिद्ध (justify) करो—

स्वामी भृत्यं भारं नाययति। सारथिः अश्वान् रथं वाहयति। यजमानः विप्रैः भोजनं भक्षयति। जननी दासी पुत्रं पोषयति। मया जलं पायय।

क्रियाके वाच्य (Voices)

वाच्य का अर्थ है बताया जाने वाला। क्रियावाच्यका अर्थ है जो क्रिया से बताया जाने वाला है, अर्थात् क्रिया जिसे बताये। गच्छति कहने पर, यह प्रश्न उठता है—को गच्छति? इसका उत्तर होगा—रामः। यहाँ गच्छति 'रामः' को बताता है। रामः गच्छति का कर्ता है—गच्छति

कर्तृवाच्य क्रिया है ।

पठ्यते (पढ़ा जाता है) कहने पर प्रश्न उठता है 'किं पठ्यते' ? इसका उत्तर होगा—'पुस्तकम्' । यहाँ पठ्यते पुस्तक को बताता है । पुस्तकं पठ्यते का कर्म है । इसलिए पठ्यते कर्म-वाच्य क्रिया है ।

१४९—क्रियाके मुख्य वाच्य दो हैं—*कर्ता* और *कर्म* । जिस क्रियाका वाच्य कर्ता हो, उसे *कर्तृवाच्य* और जिसका कर्म हो उसे *कर्म-वाच्य* क्रिया कहते हैं ।

कर्तृवाच्य (Active voice)

क्रिया के जो रूप पीछे आ चुके हैं, वे सब कर्तृवाच्य रूप हैं ।

१५०—कर्तृवाच्य क्रियाका *कर्ता प्रथमान्त*, *कर्म द्वितीयान्त* होता है और क्रियाका सम्बन्ध कर्ता से होता है । अर्थात् क्रिया के पुरुष और वचन कर्ताके अनुसार होते हैं । जैसे—रामो रावणं हन्ति । इस वाक्यमें 'रामः' प्रथम पुरुष और एकवचनमें है, इसलिए 'हन्ति' भी प्रथम पुरुष और एक ही वचनमें है । जो धातु अकर्मक होते हैं उनके साथ कर्म नहीं होता । बालः शेते । वृक्षो वर्धते ।

लोकाः माधवस्य व्याख्यानं शृण्वन्ति । महान्तो महान्ति कर्माणि कुर्वन्ति । अस्य नाम पृच्छ । पुस्तकं कुत आनयानि ! इनके अतिरिक्त जो भी वाक्य पीछे आ चुके हैं वे सबके सब कर्तृवाच्य क्रियाके उदाहरण हैं ।

कर्मवाच्य (Passive voice)

१५१—कर्मवाच्य क्रियाका *कर्ता तृतीयान्त* और *कर्म प्रथमान्त* होता है । क्रिया कर्मके अनुसार होती है । अतः जो पुरुष और वचन कर्मके हैं क्रियाके भी वे ही पुरुष और वचन होंगे । जैसे—मोहनेनान्नं खाद्यते । (मोहनसे अन्न खाया जाता है ।) इसमें अन्नं कर्म है । इसका पुरुष प्रथम है और वचन एक है, इस लिए खाद्यते का भी पुरुष प्रथम और वचन एक है । गुरुणा त्वमाहूयसे । (गुरुसे तू बुलाया जाता

है ।) इसमें त्वं (कर्म) मध्यम पुरुष और एकवचनमें है, अतः क्रिया भी उसी पुरुष और वचनमें है। इस बात का ध्यान रक्खें कि क्रियाका वाच्य सदा प्रथमान्त रहता है, कर्तृवाच्यमें कर्ता और कर्मवाच्यमें कर्म प्रथमान्त रहते हैं ।

१५२—क्रिया के दो प्रकार हैं—*सकर्मक* (Transitive और *अकर्मक* (Intransitve) । *सकर्मक* क्रिया वह है जिसे किसी कर्मकी अपेक्षा नहीं होती । देवदत्तोऽत्ति । (देवदत्त खाता है ।) इस वाक्यमें 'खाता है' क्रिया तब तक अपूर्ण मालूम होती है जब तक यह न बताया जाय कि 'क्या खाता है ।' जब यह कहा जाता है कि अन्नमत्ति । (अन्न खाता है) तब वाक्य पूर्ण हो जाता है । इस लिए 'अत्ति' क्रिया सकर्मक है ।

शिशुः शेते । (बच्चा सोता है) इस वाक्यमें 'शेते' क्रिया अपूर्ण नहीं, अर्थात इस की पूर्ति के लिए और कुछ जाननेकी आकांक्षा नहीं रहती, इस लिए 'शेते' क्रिया अकर्मक है ।

सकर्मक और अकर्मक दोनों क्रियाएँ कर्तृवाच्य हैं क्योंकि दोनोंको कर्ता की आकांक्षा रहती है । परन्तु कर्मवाच्यमें किसी कर्मका रहना आवश्यक है। संस्कृतमें अकर्मक क्रियाओंको भी कर्मवाच्यका सा रूप दे देते हैं—अर्थात उसका कर्ता तृतीयान्त और उसकी बनावट (य और आत्मनेपदके प्रत्यय आदि लगानेसे) कर्मवाच्य क्रियाओंसी हो जा जाती है । परन्तु उन क्रियाओं के रूप सब लकारोंमें केवल प्रथमपुरुषके एकवचनमें ही ही प्रयुक्त होते हैं, क्योंकि कर्तृवाच्य न होनेसे उनका सम्बन्ध कर्तासे नहीं रहता और अकर्मक होने से उनका कर्म कोई नहीं होता । (ऐसी क्रियाओंको भाववाच्य क्रियाएँ कहते हैं ।) इस प्रकार क्रियाके वाच्य तीन हुए—कर्ता, कर्म और भाव (क्रिया पदार्थका गुण या धर्म) अतः वाच्यके विचारसे क्रिया तीन प्रकार की हुई— कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाववाच्य ।

(हिन्दीमें भाववाच्यका प्रयोग प्रायः नहीं होता । हिन्दीमें बोलनेका मुहावरा यही है—कि मैं जाता हूं, मैं सोता हूं, मैं जागता हूं, । यह कभी नहीं कहा

जाता मुझसे गया जाता है । मझसे सोया जाता है इत्यादि । कभी कभी 'मुझसे आज प्रातः उठा न जायगा । मुझसे आज ठीक गाना न गाया जायगा ।' इत्यादि वाक्य भी प्रयुक्त होते हैं, परन्तु बहुत कम । हिन्दी में क्रियाके साथ कर्तामें ने लगाया जाता है । जैसे—मैंने फल खाया । मैंने उत्सव देखा । प्राचीन लोग 'वह फल खाता भया' इत्यादि वाक्योंमें क्रियाका कर्तृवाच्य प्रयोग भी करते थे, परन्तु ऐसी भाषा अब प्रचलित नहीं है । अकर्मक क्रियाओंका तो भूतकालमें भी कर्तृवाच्य ही प्रयोग होता है । मैं सोया । यही कहा जाता है । मैंने सोया । नहीं कहते ।

रूपसिद्धि

१५३—क्रियाके कर्मवाच्य और भाववाच्य रूपमें धातु और सार्वधातुक विभक्तिके मध्यमें (गण विकरणके स्थानमें) य लगाया जाता है ।

१५४—धातुके बाद केवल *आत्मनेपद विभक्तियां* ही आती हैं (धातु चाहे परस्मैपदी हो या आत्मनेपदी) । जैसे पठ्+ते= पठ्+य+ते=पठ्यते, पठ्+य+ताम्=पठ्यताम्. अपठ्यत, पठ्येत ।

आर्धधातुक लकारोंमें केवल आत्मनेपदके प्रत्यय ही लगते हैं, 'य' नहीं जोड़ा जाता । । पठ् + स्यते = पठ् +इ+स्यते=पठिष्यते । दा-दास्यते । णिजन्त क्रियाके कर्मवाच्य रूप अय (णिच्-प्रत्यय) के स्थानमें य कर देने से बनते हैं, परन्तु अय के कारण जो विकार धातुमें होते हैं वे ज्यों के त्यों बने रहते हैं । जैसे—पाठयति का यदि कर्मवाच्य रूप बनाना हो तो पाठ् के आगे य लगाकर बनेगा । पाठ् + य+ते=पाठ्यते, पाठ्यताम् , अपाठ्यत, पाठ्येत । स्मारयति-स्मार्यते, दापयति-दाप्यते, घातयति-घात्यते ।

विशेष नियम

१५५—ऋ-अन्त धातुओंके अन्तिम ऋ को रि हो जायगा ।

जैसे—कृ+य+ते=कृ+रि+यते=क्रियते । मृ-म्रियते । वृ-व्रियते । भृ-भ्रियते ।

अपवाद—(क) ऋ से पूर्व यदि संयुक्त व्यंजन हो तो ऋ को अर् होगा ।

जैसे—स्मृ—स्मर् +य+ते=स्मर्यते।

(ख) जागृ के ऋ को भी अर् होगा। जागर्यते।

१५६—वच्, वप्, वह्, वस्, ह्वे, वद्, स्वप् के व् को उ, यज् और व्यध् के य को इ और प्रच्छ् और ग्रह् के र् को ऋ हो जाता है।

(इस विकारको सम्प्रसारण कहते हैं।)

इ, उ वा ऋ के परे कोई स्वर हो तो उसका लोप हो जाता है। (ये ही विकार क्त, क्तवत् और क्त्वा के पूर्व भी होते हैं।) वच्-उच्यते। वप्-उप्यताम्। वह्=अउह्+त=ओढ़न। वस्+य+इत=उष्येत। यज्-इज्यते। व्यध्-विध्यते। प्रच्छ्-पृच्छ्यते। वह्—उह्यते।

१५७—धातुका अन्तिम इ और उ दीर्घ हो जाता है।

जैसे—जि-जीयते। चि-चीयते। श्रु-श्रूयते। दु-दूयते। ह्वे+य+ते=ह्+उ+ए+यते=हु+य+ते=हूयते।

१५८—ॠ-अन्त धातुओंके ॠ को ईर् और यदि ॠ से पूर्व पवर्ग हो तो उसे ऊर् हो जाता है। जैसे—स्तॄ+य+ते=स्त्+ईर्+य+ते=स्तीर्यते। पॄ-पूर्यते।

१५९—धातुकी उपधामे यदि कोई अनुनासिक हो तो उसका लोप हो जाता है। जैसे—बन्ध्=बध्+य+ते=बध्यते। मन्थ्-मथ्यते। रञ्ज्-रज्यते। ग्रन्थ्-ग्रथ्यते।

१६०—आ-अन्त धातुओंके आ को ई हो जाता है।

जैसे—दा-दीयते। स्था-स्थीयते। मा-मीयते। हा-हीयते।

गै का गीयते, शी का शय्यते, ब्रू का उच्यते और अस् (होना) का भूयते रूप बनेंगे।

वाच्य परिवर्तन

पीछे कहा जा चुका है कि (१) कर्तृवाच्य क्रियाके साथ कर्ता प्रथमान्त और कर्म द्वितीयान्त रहता है। (२) कर्मवाच्य क्रियाके साथ कर्ता तृतीयान्त

और कर्म प्रथमान्त रहता है। (३) भाववाच्यमें कर्ता तृतीयान्त और क्रिया सदा प्रथमपुरुषमें एकवचनान्त रहती है और क्रियाके अकर्मक होनेके कारण उसके साथ कर्म नहीं आता।

जिस क्रियाका जो वाच्य हो उसके पुरुष और वचन अपने वाच्यके अनुसार होते हैं।

कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्य

कर्तृवाच्य क्रियाको कर्मवाच्यमें बदलते समय कर्ता (प्रथमान्त) को तृतीयान्त और कर्म (द्वितीयान्त) को प्रथमान्त में बदल कर क्रियाका संबन्ध कर्तासे हटाकर कर्मके साथ कर देना चाहिए। जैसे—रामः पुस्तकं पठति=रामेण पुस्तकं पठ्यते। अहं त्वाम् आह्वयामि।=मया त्वम् आहूयसे। शिशुः पयः पिबतु। =शिशुना पयः पीयताम्। गौः तृणानि अभक्षयत्।=गवा तृणानि अभक्ष्यन्त। यूयं घटान् पूरयन्त।=युष्माभिः घटाः पूर्यन्ताम्। धनिकः भिक्षुकान् भोजनम् अभोजयत्। =धनिकेन भिक्षुकाः भोजनम् अभोज्यन्त।

कर्मवाच्यसे कर्तृवाच्य

इसी प्रकार कर्मवाच्य क्रियाको कर्तृवाच्यमें बदलते समय कर्ता (तृतीयान्त) को प्रथमान्तमें, कर्म (प्रथमान्त को) द्वितीयान्तमें बदलकर क्रियाका सम्बन्ध कर्मसे तोड़ कर कर्तासे कर देना चाहिए। जैसे—भवद्भिः तद् दृश्यं दृश्यताम्। =भवन्तः तद् दृश्यं पश्यन्तु। नारीभिः भूषणानि धार्यन्ते। नार्यः भूषणानि धारयन्ति। गायकैः गीतयः अगीयन्त।=गायकाः गीतीः अगायन्। राज्ञा अश्वमेधः, आरभ्यत।=राजा अश्वमेधम् आरभत। त्वया अस्त्राणि संह्रियन्ताम्। =त्वम् अस्त्राणि संहर। जनैः रत्नम् अन्विष्यते। =जनाः रत्नम् अन्विष्यन्ति।

कर्तृवाच्यसे भाववाच्य

अकर्मक कर्तृवाच्य क्रियाएँ कर्तृवाच्यमें भाववाच्यमें बदलती हैं।

भाववाच्य क्रियाका कर्ता तृतीयान्त होता है परन्तु क्रिया सदा प्रथमपुरुषमें एकवचनान्त रहती है। शिशुः शेते =शिशुना शय्यते। शिशू शयाते।=शिशुभ्यां शय्यते। शिशवः शेरते।=शिशुभिः शय्यते। अहं तिष्ठामि।=मया स्थीयते। ईश्वरः अस्ति।=ईश्वरेण भूयते। वृक्षाः वर्धन्ताम्। वृक्षैः वृध्यताम्।

यदि किसी णिजन्त क्रियाको कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्यमें बदलना हो तो वही कर्म (द्वितीयान्त) प्रथमान्त होगा जो अणिजन्त क्रियाका कर्ता हो । जैसे—माता पुत्रं चन्द्रं दर्शयति । मात्रा पुत्रः चन्द्रं दर्श्यते । होगा

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

पूजा वही जाता है जो सबका भला (हित) करता है ।

आज रातको इतनी गर्मी (ताप) थी कि एक क्षण भी नहीं सोया गया, शरीरसे पसीना (स्वेद) लगातार (निरन्तरम्) बहता रहा ।

देखा जायगा आज पहले कौन उठेगा (उद् स्था) ।

निर्धनोंसे धनवान् इस लिए आदर किये जाते हैं कि उनसे कुछ मिलनेकी आशा रहती है ।

इस बेचारेके पास जो कुछ भी था, चोरोंसे चुराया गया है ।

मूर्खोंसे जो काम भी शुरू किया जाता है उसमें उन्हें सफलता नहीं मिलती ।

यदि यह वृक्ष न काटा गया तो सड़क टेढ़ी (वक्र) ही रहेगी ।

जब कभी मैं बुलाया गया तो मैंने तुरंत उत्तर दिया ।

अनुशीलनी—२५

१—क्रियाके वाच्य कितने और कौन कौन हैं ?

२—कर्मवाच्यमें क्रियाका सम्बन्ध किसके साथ रहता है ? कर्मवाच्य क्रियाका कर्ता और कर्म किस किस विभक्ति में होते हैं ? उदाहरण दो ।

३—कर्तृवाच्य और कर्मवाच्यका भेद उदाहरणोंसे स्पष्ट करो ।

४—क्रियाके कर्मवाच्य रूप किन किन साधारण नियमोंसे बनते हैं ?

५—हन्, ब्रू, शो, स्मृ, दा, इनके लट् में, हन, (णिजन्त), ग्रह्, भृ, शास्, जागृ, इनके लङ् में, जि, पा, गम्, अधि + इ, भा इनके लोट् में, स्था, युध्, युज्, व्यध्, भु, इनके लृट् में कर्मवाच्य रूप दो ।

६—अदीयत, उच्यताम्, सुप्यन्ताम्, ताड्यन्ते, पीयेत, ध्यायते-इनको वाक्यों में प्रयुक्त करो ।

७—इनके वाच्य बदलो—इयतो कि विलम्बेन भवता ? अत्र स्थास्यामः, रामायणकथां च श्रोष्यामः । स्वभावं नैव मुञ्चन्ति सन्तः संसर्गतोऽसताम् । अद्य यात्रावाबाभ्याम् भूतले एव स्वप्स्यते । यद् दानं काले दीयेत, तत् सफलं भवति ।

अहं पत्रं लिखामि। कवयो नृपाणां गुणान् वर्णयन्ति। त्रिजगतां महाराजः सपरिवारः। गुरुः छात्रान् अपाठयत्। वृद्धानां समहे स्त्रीभिः लज्ज्यते। दत्तेऽपि वारिणि कैश्चित् सर्वैः शुष्यते, अन्यैः विनापि वारि तृप्यते।

कृदन्त-प्रकरण

पीछे नामोंके आगे सुप्-प्रत्यय (सात विभक्तियोंके रूपमें) और धातुओं के आगे तिङ्-प्रत्यय (लकार विभक्तियोंके रूपमें) आ चुके हैं। इनके अतिरिक्त नामों और धातुओंके बाद और प्रत्यय भी आते हैं, उन्हें क्रमशः तद्धित और कृत् प्रत्यय कहते हैं। तद्धित-प्रत्ययान्त शब्दों को तद्धितान्त और कृत्प्रत्ययान्त शब्दों को कृदन्त कहते हैं।

नामों (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण) के साथ तद्धित प्रत्यय लगाने से संज्ञाशब्दोंसे संज्ञाशब्द, संज्ञाशब्दोंसे विशेषण, विशेषणोंसे संज्ञाशब्द, विशेषणोंसे विशेषण, सर्वनामोंसे विशेषण आदि बनते हैं।

संज्ञासे संज्ञा—पण्डा (बुद्धि) से पण्डित (विद्वान्), पर्वत से पार्वती, चोर से चौर्य, मनुष्य से मनुष्यत्व।

संज्ञा से विशेषण—धन से धनवत्, मेधा से मेधाविन्, धर्म से धार्मिक, वर्ष से वार्षिक।

विशेषणसे संज्ञा—मृदु से मार्दव (कोमलता), लघु से लाघव, युवन् से यौवन।

विशेषणसे विशेषण—धूसर से धूसरित, मृदु से मृदुतर।

सर्वनामसे विशेषण—अस्मद् से अस्मदीय, त्वद् से त्वदीय, अस्मद् से आस्माकीन, (हमारा), मामकीन (मेरा)।

२—धातुओंके साथ कृत्-प्रत्यय लगानेसे संज्ञा, विशेषण, अव्यय और क्रियारूप बनते हैं।

धातुसे संज्ञा—नी से (अक) नायक, कृ से (तृ) कर्ता, भू से (अन) भवन, कृ से (ति) कृति।

धातुसे अव्यय—गम् से (तुम्) गन्तुम्, जिसे (त्वा) जित्वा।

धातुसे क्रिया—जि से (त) जित, भू से (तवत्) भूतवत्, गम् से (तव्य) गन्तव्य ।

अव्ययोंको छोड़ कर शेष कृदन्त शब्दोंकी रूपावली नामोंकी तरह अन्यान्य लिंगोंमें होती है) ।

मुख्य कृत्-प्रत्यय ये हैं—

शतृ (अत्), शानच् (आन, मान), क्त (त), क्तवतु (तवत्), क्त्वा (त्वा), तुमुन् (तुम्), तव्य, अनीय, यत् (य) ।

क्त (Past Passive Participle)

१६१—क्त किसी भी धातु के साथ जोड़ा जा सकता है । क्त के क् का लोप होकर शेष त रह जाता है । जैसे—भू+क्त=भूत, श्रु+क्त=श्रुत, स्मृ+क्त=स्मृत, भी+क्त=भीत ।

१६२—(क) जिन प्रत्ययोंमें क् का लोप होता है (क्त=त, क्त्वा=त्वा, क्तवतु=तवत्) उनके पूर्व धातुमें गुण नहीं होता ।

जैसे—श्रुत, स्मृत, नीत, भूत में गुण नहीं हुआ ।

(ख) जो धातु सेट् हैं, उनके साथ इ लगनेपर फिर त लगता है । जैसे—पत् + इ + त=पतित, पठ्—पठित, भाष्—भाषित, मुद्—मुदित ।

अनिट्					
			भू	(होना)	भूत
ज्ञा	(जानना)	ज्ञात	अधि+इ	(पढ़ना)	अधीत
इ	(जाना)	इत	क्षि	(दुर्बल होना)	क्षित,क्षीण
नी	(ले जाना)	नीत	जि	(जीतना)	जित
भी	(डरना)	भीत	कृ	(करना)	कृत
श्रु	(सुनना)	श्रुत	मृ	(मरना)	मृत
सु	(रस निकालना)	सुत	भृ	(पालना)	भृत
स्तु	(स्तुति करना)	स्तुत	स्मृ	(याद करना)	स्मृत
हु	(हवन करना)	हुत	हृ	(हरना)	हृत

भू	(होना)	भूत	ईक्ष्	(देखना)	ईक्षित
अस्	फेंकना	अस्त	पत्	(गिरना)	पतित
आप	(पाना)	आप्त	भक्ष्	(खाना)	भक्षित
क्षिप्	फेंकना	क्षिप्त	भाष्	(बोलना)	भाषित
वृत्	(होना)	वृत्त	मुद्	(खुश होना)	मुदित
नृत्	(नाचना)	नृत्त	मुष्	(चुराना)	मुषित
विद्	(पाना, होना)	वित्त	जागृ	(जागना)	जागरित
शक	(समर्थ होना)	शक्त	याच्	(मांगना)	याचित
	सेट्		रक्ष्	(बचाना)	रक्षित
तड्	(पीटना)	ताडित	रुद्	(रोना)	रुदित
कथ्	(कहना)	कथित	विद्	(जानना)	विदित
कम्प्	(कांपना)	कम्पित	शी	(सोना)	शयित
कुप्	(गुस्से होना)	कुपित	शिक्ष्	(सीखना)	शिक्षित
पठ्	(पढ़ना)	पठित	श्लाघ्	(प्रशंसा करना)	श्लाघित
चुर्	(चुराना)	चोरित	शङ्क्	(शंका करना)	शङ्कित
चिन्त	(सोचना)	चिन्तित	सेव्	(सेवा करना)	सेवित
आस्	(बैठना)	आसित	हस्	(हंसना)	हसित

विशेष-रूप

१६३—(क) द्-अन्त धातुओंके द् को न् और त वा तवतु के त को भी न हो जाता है, त्वा के त् को न् नहीं होता।

छिद् (काटना) छिन्न। भिद् (काटना) भिन्न।
तुद् (तंग करना) तुन्न। खिद् (तंग होना) खिन्न।

परन्तु अद् का जग्ध बनता है।

(ख) न्-अन्त वा म्-अन्त धातुओंके न् और म् का लोप हो जाता है, त, तवत् वा त्वा परे रहते।

मन् (मानना) मत । गम् (जाना) गत ।
हन् (मारना) हत । नम् (झुकना) नत ।
तन् (फैलना) तत । रम् (खेलना) रत ।

परन्तु जम् का जात और श्रम् आदि कुछ धातुओंके-ये रूप बनते हैं-

श्रम् (थकना) श्रान्त । शम् (शांत होना) शान्त ।
भ्रम् (भूलना) भ्रान्त । क्षम् (क्षमा करना) क्षान्त ।

(ग) च्-अन्त और ज्-अन्त धातुओंके च् वा ज् को क् हो जाता है ।

मुच् (छोड़ना) मुक्त । त्यज् (त्यागना) त्यक्त ।
सिच् (सींचना) सिक्त । भज् (सेवा करना) भक्त ।
ब्रू (वच्-बोलना) उक्त । युज् (जोड़ना) युक्त ।
रिच् (खाली करना) रिक्त । भुज् (खाना) भुक्त ।

परन्तु पच् का पक्क और सृज् का सृष्ट बनते हैं ।

(घ) कुछ श्-अन्त धातुओंके श् को ष् और परले त को ट् हो जाता है ।

नश् (लुप्त होना) नष्ट । पुष् (पुष्ट होना) पुष्ट ।
स्पृश् (स्पर्श करना) स्पृष्ट । दुष् (दुष्ट होना) दुष्ट ।
दृश् (देखना) दृष्ट । इष् (इच्छा करना) इष्ट ।

परन्तु शुष् का शुष्क बनता है ।

(ङ) यदि किसी धातुके अन्तमें किसी वर्गका *चौथा* वर्ण हो, तो उसे उस वर्गका *तीसरा* वर्ण और परले त को ध हो जाता है ।

जैसे—बुध् +त=बुद्+ध=बुद्ध । लभ् +त=लब् +ध=लब्ध ।

युध् (लड़ना) युद्ध । रुध् (रोकना) रुद्ध ।
बुध् (जानना) बुद्ध । वृध् (बढ़ना) वृद्ध ।
क्रुध् (गुस्से होना) क्रुद्ध । रभ् (शुरू करना) रब्ध ।

बन्ध् (बाँधना) बद्ध। लभ् (पाना) लब्ध।

(च) कुछ धातुओं के व को उ, य को इ और र को ऋ हो जाता है, त तवत् और त्वा परे रहते।

वच् +त=उच् + त=उक्त, वद् +त=उद् +इ+त=उदित, वस् +त=उस् +इ+त=उषित, ग्रह् +त=गृह् +त=गृह् +ई+त=गृहीत (ग्रह् में इ दीर्घ हो जाता है।) प्रच्छ् +त+पृच्छ् +त+पृष्ट। यज् +त = इज् +त=इष् + त=इष्ट। (यज् के ज् और प्रच्छ् के च्छ् को ष् हो जाता है।)

वच् (बोलना)	उक्त	व्यध् (बेंधना)	विद्ध
ब्रू (वच्) ,,	,,	यज् (यज्ञ करना)	इष्ट
वप् (बीज बोना)	उप्त		
स्वप् (सोना)	सुप्त	ग्रह् (पकड़ना)	गृहीत
वह् (बोझ उठाना)	ऊढ	प्रच्छ् (पूछना)	पृष्ट
वद् (बोलना)	उदित		
वस् (रहना)	उषित		

नीचे लिखे धातुओंमें कुछ कार्य होकर ये रूप बन जाते हैं।

पा (पीना)	पीत	दा (देना)	दत्त
सह् (सहना)	सोढ	स्था (ठहरना)	स्थित
शास् (शासन करना)	शिष्ट	दिव् (चमकना)	

द्यूत:-तम् (जुआ)

द्यूनम् (लग्न स्थानसे सातवीं राशि)

ग्रह् से परे त, तवत्, त्वा, तुम्, तव्य, स्यति रहते इ दीर्घ हो जाता है। जैसे—गृहीत, गृहीतवत् इत्यादि।

क्तान्त शब्दोंके रूप अकारान्त शब्दोंके तरह तीनों लिङ्गोंमें होते हैं।

पुं०			स्त्री०			नपुं०		
कृत:	कृतौ	कृता:	कृता	कृते	कृता:	कृतम्	कृते	कृतानि
कृतम्	,,	कृतान्	कृताम्	,,	,,	,,	,,	,,
राम की तरह			लता की तरह			फल की तरह		

शेष क्तान्त शब्दोंके रूप भी इसी तरह होंगे।

प्रयोग

क्तान्त शब्दोंका प्रयोग तीन प्रकार का हो सकता है—

१. क्रियाकी तरह, २. विशेषणकी तरह, ३. संज्ञाकी तरह,

क्तान्त क्रियाका काल भूत होता है। जब क्तान्त क्रिया किसी सकर्मक धातु से बनी हो, तो उसका कर्त्ता तृतीयान्त, कर्म प्रथमान्त और क्रियाके पुरुष और वचन कर्म (प्रथमान्त) के अनुसार होंगे (कर्मके अनुसार होने से इसे कर्मवाच्य क्रिया कहते हैं।) जैसे—

रामेण रावणः हतः। (रामसे रावण मारा गया)।

इसमें रावण. (कर्म) प्रथमा के एकवचनमें होनेसे हत. (क्तान्त) क्रिया भी उसी तरह प्रथमा-एकवचन में है। दोनों का पुरुष भी प्रथम ही है।

इसी तरह गोपालेन त्वम् आहूतः। (गोपालसे तू बुलाया गया।) मया फले खादिते। (मुझसे दो फल खाये गये) इस वाक्यमें फले (कर्म) और खादिते (कृदन्त क्रिया) दोनों के पुरुष, विभक्ति और वचन समान हैं। अग्निना गृहं दग्धम्। (आग से घर जलाया गया)। सैनिकैः असयः गृहीताः (सिपाहियों से तलवारें पकड़ी गईं)। मारुतिना सेना हता। (हनुमानसे सेना मारी गई)।

जब क्तान्त क्रिया अकर्मक धातुकी बनी हो तो कर्ता तृतीयान्त और क्रिया क्तान्त सदा नपुंसकलिंगमें प्रथमा-एकवचनान्त रहती है। धातुके अकर्मक होनेसे कर्म कोई नहीं होता। शिशुना शयितम्। (बच्चेसे सोया गया)। मूषिकेण जीवितम्। (चूहे से जिया गया)। बालिकाभिः क्रीडितम्। (लड़कियोंसे खेला गया)। कुछ अकर्मक धातुओंसे बने क्तान्त रूप कर्तृवाच्यकी तरह भी प्रयुक्त होते हैं।—देवः गतः। वृक्षः पतितः।

जब क्तान्त रूप विशेषणकी तरह प्रयुक्त होता है तो इनके लिंग और वचन विशेष्यकी तरह होते हैं। दग्धं (जला हुआ) गृहम्। शान्ता तृषा (बुझी हुई प्यास)। सोढानि कष्टानि (सहे हुए कष्ट)। गतैः नरैः (गये हुए मनुष्यों के साथ)।

मृतं (मरे हुए) श्वानं न स्पृश। आरब्धं (आरम्भ किए हुए) कार्यं कोऽपि जनः न त्यजति। वृद्धस्य (बढ़े हुए) वृक्षस्य पतनं न वरम्। सहृत्

संक्रान्त (कहे हुए) वचनस्य पालनं नारीणां धर्मः । गोमयेन लिप्तायां (पुती हुई) भूमौ तिष्ठति सा नारी । नृपेण आदिष्टेन (बताये हुए) मार्गेण चलति प्रजाजनः ।

जब क्तान्त रूप संज्ञाकी तरह प्रयुक्त होता है, तब वह सदा नपुंसक-लिंगमें होता है।

हसितम् (हँसना), रुदितम् (रोना), गतम् (चाल), जागरितम् (जागना) इत्यादि ।

अस्मिन् अवसरे देवदत्तस्य हसितम् अशोभनम् । तस्य वराकस्य रुदितेन हृदयं करुणार्द्रम् अभवत् । तस्याः नार्याः गतं मृग्याः इव ।

कुछ क्तान्त रूप

दृष्टमेकं फलं तेन, जलं पीतं मयाधुना ।
धेनुर्दुग्धा हि गोपेन, क्षालितं वसनं तया ।
मया क्रीतं गृहं तत्र, विक्रीतं तेन सत्वरम् ।
घ्रातं पुष्पं मयारामे, स्पृष्टं तेन करेण च ।
दैत्याः सर्वे हता युद्धे, तथा नष्टाश्च राक्षसाः ।
गृहं प्रविष्टास्तत् चौराश्चोरितं च धनं हि तैः ।
कण्ठीकृतो मया पाठः, तेन सर्वं हि विस्मृतम् ।
चौरः पलायितः शीघ्रम्, छिन्नं निगडबन्धनम् ।
स्नातं मया कुरुक्षेत्रे, गङ्गायां मम बान्धवैः,
अपयातानि पापानि, पुण्यान्याप्तानि तेन हि ।
कष्टे धैर्यं धृतं तेन, मया धैर्यं विनाशितम्,
तेनावाप्तं सुखं तेन, मम सौख्यं विनिर्गतम् ।
प्रेषितं हि मया पत्रम्, रामेणाधिगतं हि तत्,
ज्ञातः उदन्तः सर्वश्च, तेन जाता प्रसन्नता ।

कोऽन्धः ? योऽकार्यरतः । को बधिरः ? यः शृणोति नान्योक्तम् ।
विद्या विनयोपेता हरति न चित्तं हि कस्य मनुजस्य ?
तातेन कथितं पुत्र, लेखमेकं लिखाधुना,
नतेन लिखितो लेखः पितुराज्ञा न लङ्घिता ।

एकोना विंशतिः स्त्रीणां, स्नानाय सरयूं गता।
विंशतिः पुनरायाता एका व्याघ्रेण भक्षिता॥
दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सुधापि मधुरैव।
तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनः यत्र संलग्नम्॥

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो:—

सीता और राम लक्ष्मणके साथ वनको चले।

जालंधर शहरमें हरिवल्लभके मेलेपर भारतभरके प्रसिद्ध प्रसिद्ध गायकोंने चुने चुने गीतोंसे श्रोताओं को मुग्ध कर दिया।

जो अतिथि बाहरसे आये हुए हैं, क्या उन्होंने खाना खा लिया है?

हाँ (एवम्), सबसे पहले स्नान किया है, फिर खाना खाया है, अब सोने को तैयार (प्रस्तुत) हैं।

ख़ज़ांची (कोषाध्यक्ष) ने रुपये गिन लिए हैं, अब स्कूलके अध्यापकोंको उनकी मासिक तनख़ाह (वेतन) बांट रहा है।

जिन्हें सौ रुपये देने थे, उन्हें नोट (अर्थविनिमयपत्र) ही दे दिये। इससे गिननेका झंझट मिट जाता है।

महाभारतके युद्ध में अर्जुनके द्वारा कौरवोंके हज़ारों योधा बात की बातमें ही मारे गये।

मेरा कपड़ा यहांसे फट गया है, इसे सुई (सूचि) से जल्दी सी डालो।

वह बहुत बेशर्म (निर्लज्ज) है। उसका अपराध मुझसे क्षमा न किया जा सका।

ईश्वरने इस जगत्को रचा।

जो फल वृक्षसे गिरते थे, वे या तो तोतों (कीर, हारीत) से या मैना (सारिका) और दूसरे पक्षियोंसे खाये जाते थे।

उस बूढ़ी स्त्रीका जो मालमत्ता (वस्तुजात) चुराया गया था, वह मिल गया है।

माघ संक्रान्तिके उत्सवपर हज़ारों-लाखों नर-नारियोंने गंगा-यमुना संगममें स्नान किया।

क्या आपने मेरा इशारा (संकेत) समझ लिया है?

उसने वह बात एक विश्वास वाले (विश्वसनीय) पुरुषको कही है, वह उसे किसीको न कहेगा।

जब वर्षा हुई तो सब पक्षी अपने अपने घोंसलों (नीड, कुलाय) में घुस गये और सो गये।

क्त्वान्त (Indeclinable Past Participles)

धातुओंके क्त्वान्त रूप उन्हीं नियमों के अनुसार बनते हैं जिनसे क्तान्त रूप बनते हैं। जिस प्रकार क्त के क् का लोप होकर शेष त रह जाता है, इसी तरह क्त्वाके क् का लोप होकर शेष त्वा रह जाता है। शेष कार्य भी वेही होते हैं जो क्त से पूर्व होते हैं। जैसे जि+त्वा=जित्वा, भी+त्वा=भीत्वा, पठ्+त्वा=पठ्+इ+त्वा=पठित्वा, वच्+त्वा=उक्त्वा।

जिस धातुका जो त (क्त)-अन्त रूप बनता है, यदि उसमें त की जगह त्वा करदें, तो उसका त्वा (क्त्वा)-अन्त रूप बन जायगा। जैसे—भू-भूत (क्तान्त), भूत्वा, (क्त्वान्त)। इष्-इष्ट (क्तान्त), इष्ट्वा (क्त्वान्त)। लभ्-लब्ध (क्तान्त), लब्ध्वा (क्त्वान्त)। पठ्-पठित (क्तान्त), पठित्वा (क्त्वान्त)। वद्-उदित (क्तान्त), उदित्वा (क्त्वान्त)। दुह्-दुग्ध (क्तान्त), दुग्ध्वा (क्त्वान्त)।

(कहीं कहीं पर क्तान्त और क्त्वान्त रूपोंमें भेद भी होता है। जैसे—जन-जात (क्तान्त), जनित्वा (क्त्वान्त), भिद्-भिन्न (क्तान्त), भित्त्वा (क्त्वान्त)।)

चुरादिगणी धातुओंके परे अय (विकरण) भी आता है। कथ्+अय+इ+त्वा=कथयित्वा।

अनिट्		कृ	कृत्वा	तुद्	तुत्त्वा
ज्ञा	ज्ञात्वा	भू	भूत्वा	वृत	वर्तित्वा-वृत्त्वा
इ	इत्वा	मृ	मृत्वा	शक्	शक्त्वा
क्षि	क्षित्वा	भृ	भृत्वा	विद् (प्र.गा)	विदित्वा
जि	जित्वा	स्मृ	स्मृत्वा	सेट्	
क्री	क्रीत्वा	हृ	हृत्वा	नृत्	नर्तित्वा
भी	भीत्वा	अस् (फेंकना)	असित्वा,	आस्	आसित्वा
नी	नीत्वा		अस्त्वा	ईक्ष्	ईक्षित्वा
श्रु	श्रुत्वा	अस् (होना)	भूत्वा	यत्	यतित्वा
सु	सुत्वा	आप्	आप्त्वा	कम्प्	कम्पित्वा
हु	हुत्वा	क्षिप्	क्षिप्त्वा	कुप्	कुपित्वा

कथ्	कथयित्वा	पठ्	पठित्वा	रुद्	रुदित्वा
चुर्	चोरयित्वा	पत्	पतित्वा	विद् (जानना)	विदित्वा
तुल्	तोलयित्वा	भाष्	भाषित्वा	शी	शयित्वा
चिन्त्	चिन्तयित्वा	शुभ्	शुभित्वा-शोभित्वा	शिक्ष्	शिक्षित्वा
भक्ष्	भक्षयित्वा	मुद्	मुदित्वा-मोदित्वा	श्लाघ्	श्लाघित्वा
तड्	ताडयित्वा	शुच्	शुचित्वा-शोचित्वा	शङ्क्	शङ्कित्वा
भक्ष्	भक्षयित्वा	मुष्	मुषित्वा	सेव्	सेवित्वा
त्रस्	त्रसित्वा	याच्	याचित्वा	हस्	हसित्वा
जागृ	जागरित्वा	रक्ष्	रक्षित्वा		
जन्	जनित्वा	रुच्	रुचित्वा		

विशेष रूप

छिद्	छित्त्वा	भिद्	भित्त्वा
तुद्	तुत्त्वा	खिद्	खित्त्वा
सद्	सत्त्वा		

मन्	मत्वा	गम्	गत्वा
हन्	हत्वा	नम्	नत्वा
तन	तत्वा—तनित्वा	रम्	रत्वा
श्रम्	श्रमित्वा—श्रान्त्वा	शम्	शमित्वा—शान्त्वा
भ्रम्	भ्रमित्वा—भ्रान्त्वा	क्षम्	क्षमित्वा—क्षान्त्वा

मुच्	मुक्त्वा	त्यज्	त्यक्त्वा
सिच्	सिक्त्वा	भज्	भक्त्वा
ब्रू	उक्त्वा	युज्	युक्त्वा
रिच्	रिक्त्वा	भुज्	भुक्त्वा

सृज्	सृष्ट्वा	पुष्	पुष्ट्वा
नश्	नष्ट्वा, नंष्ट्वा, नशित्वा	दुष्	दुष्ट्वा

दृश्	दृष्ट्वा	हृष्	हृष्ट्वा
स्पृश्	स्पृष्ट्वा	शुष्	शुष्ट्वा

युध्	युद्ध्वा	रुध्	रुद्ध्वा
बन्ध्	बद्ध्वा	बुध्	बुद्ध्वा
क्रुध्	क्रुद्ध्वा	वृध्	वृद्ध्वा-वर्धित्वा

रभ्	रब्ध्वा	लभ्	लब्ध्वा

वच्	उक्त्वा	व्यध्	विद्ध्वा
वप्	उप्त्वा	यज्	इष्ट्वा
वह्	ऊढ्वा	ग्रह्	गृहीत्वा
वद्	उदित्वा	प्रच्छ्	पृष्ट्वा
वस्	उषित्वा	स्वप्	सुप्त्वा

पा	पीत्वा	स्था	स्थित्वा
सह्	सहित्वा, सोढ्वा	दिव्	देवित्वा-द्यूत्वा
शास्	शासित्वा, शिष्ट्वा	अद्	जग्ध्वा
दा	दत्त्वा	दुह्	दुग्ध्वा
		अस्	(होना) भूत्वा

त्य, य

१७८—जिन धातुओंके पूर्व कोई उपसर्ग जुड़ा हो और अन्तमें कोई ह्रस्व स्वर हो, उनके परे त्वा नहीं आता, त्य आता है। जैसे—वि+जि+त्य=विजित्य, प्र+हृ+त्य=प्रहृत्य, अनु+कृ+त्य=अनुकृत्य, वि+स्मृ+त्य=विस्मृत्य, अधि+इ+त्य=आधीत्य।

१७९—यदि अन्तमें ह्रस्व स्वर न हो किन्तु कोई वर्ण (दीर्घ स्वर वा व्यञ्जन हो) तो य आता है। जैसे—अनु+भू+य=अनुभूय, वि+नी+य=विनीय, वि+

क्री+य=विक्रीय, सम्+भाष्+य=संभाष्य, प्र+यत्+य=प्रयत्य, वि+गृह् +य=विगृह्य ।

उपसर्ग पूर्व होने पर कुछ म्-अन्त (गम्, रम्, नम्) और न्-अन्त् (हन्, मन्, तन्) धातुओंके म् वा न् का विकल्पसे लोप हो जाता है। अतः म् वा न् का लोप होने पर अन्तमें स्वर हो जानेसे त्य आयेगा। जैसे—प्र+नम्+य=प्रणम्य, प्रणत्य । वि+हन्+य=विहन्य, विहत्य । वि+रम्+य=विरम्य, विरत्य । अनु+मन्+य=अनुमन्य, अनुमत्य । अधि+गम्+य =अधिगम्य, अधिगत्य ।

प्रयोग

जब किसी कर्तामें एकसे अधिक क्रियायें की हों, तो अन्तिम क्रियाको छोड़ कर अन्य क्रियाओंको क्त्वान्त रूपसे बनाया जा सकता है। इसलिए इसे पूर्वकालिक क्रिया भी कहते हैं। जैसे—मोहनने घर पहुँचनेसे पूर्व कई काम किये। वह दफ्तरसे चला, भाईसे मिला, मार्गमें कई चीज़ें खरीदीं और फिर घर पहुंचा। इस आशयको हम हिन्दीमें इस प्रकार प्रकट करते हैं। मोहन दफ्तरसे चलकर, भाईसे मिलकर और मार्गमें कुछ वस्तुएँ खरीद कर घर पहुँचा। संस्कृत में यह वाक्य बनेगा—

मोहनः कार्यालयात् चलित्वा, भ्रातरं मिलित्वा, मार्गे च कतिपयानि वस्तूनि क्रीत्वा गृहं प्राप्तः ।

(हिन्दीके 'कर' को त्वा (य, त्य) से प्रकट करते हैं)। जैसे—पीकर (पीत्वा), मारकर (हत्वा), पकड़ कर (गृहीत्वा)

कुछ क्त्वान्त शब्दोंके प्रयोग

अनेन वटुना वेदमधीत्य तदङ्गान्यधीतानि । प्रातः संध्यामुपास्यायेषु गृहकार्येष्वासक्तः भव । प्रातरुत्थाय हरिं स्मर । युक्तकराभ्यां गुरुं प्रणम्य तदन्तिके उपविश । यत् कार्यं कर्तुमेतेऽशक्ताः तत् सर्वे मिलित्वा कर्तुं शक्ताः । राजपुरुषाश्चौरं दृष्ट्वा, तं च धृत्वा, बद्ध्वा च न्यायालयमनयन् । वत्स, त्वम् इतश्चलित्वा, पितुरन्तिकमुपगम्य, मत्सन्देशं कथयित्वा पुनः निवर्तस्व ।

शयित्वा शुभ्रशय्यायां निद्रां प्राप्य च तत्क्षणम् ,
उत्थाय प्रातः पान्थोऽसौ पुरमुद्दिश्य निर्गतः ।
छित्त्वा वृक्षस्य तां शाखां तया दण्डं विरच्य च,
तं संयोज्य कुठारेण काष्ठकारः समागतः ।
राघवो रावणं हत्वा छित्त्वा तद्भ्रातृशीर्षकम् ,
शरैराविध्य पौलस्त्यं सीतामादाय चागतः ।
स्नात्वा गङ्गाजले पुण्ये अर्चयित्वा महेश्वरम् ,
हृष्ट्वा स्वमानसे सीता कुटीं स्वां प्रति गच्छति ।
भरद्वाजमुनिं प्राप्य तं नत्वा तेन सत्कृतः,
राघवः तस्य निर्देशात् चित्रकूटेऽवसत् सुखम् ।
तदाकर्ण्य खरः क्रुद्ध्वा राघवस्य वधोद्यतः,
दूषणं चात्मनादाय राघवान्तिकमागतः ।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

काम करके विश्राम करनेसे सुख मिलता है ।

सैरसे लौट कर न्हाओ, फिर कुछ जल पान कर और अपनी पुस्तकें लेकर पाठशाला जाओ ।

रावण और उसके हज़ारों नाती पोतोंको मार कर राम अपने भाई लक्ष्मण, सती भार्या सीता और हनुमान और सुग्रीव आदि भक्तोंको साथ लेकर अयोध्या लौट रहा है ।

आसाढ़ (आषाढ़) की धूपसे संतप्त होकर उस थके हुए यात्रीने अपना कंबल (कम्बल) उतार कर रख दिया ।

प्रतिदिन छटांक (षट्टङ्क) भर मक्खन खा खा कर वह तपदिक (राजयक्ष्मन्) का बीमार तन्दुरुस्त हो गया ।

उस ज्योतिषी (ज्योतिर्विद् , दैवज्ञ) ने ग्रहोंकी गतिको देख कर और उनका फल विचार कर कहा कि इस मंगलवारको वर्षा होगी ।

पाव (पाद) भर सरसोंका तेल लेकर उसमें कुछ खांड (शर्करा) या गुड़ मिला कर इस दुबली घोड़ीको दो ।

कर्णने पैने (खर) तीर चला कर और उनसे अर्जुनके घोड़ोंको मार

कर उसे भी व्याकुल कर दिया।

कई दिनोंकी यात्रासे यह थका तो था ही, अतः उस नरम (मृदुल) बिस्तरेपर पड़ते ही सो गया।

उस मुकद्दमे पर विजय पाकर मोहनको अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

अब व्यर्थ यहां पड़े रह कर समय खोनेसे क्या लाभ हो सकता है।

इन चहचहाते पक्षियोंके मधुर आवाजोंको सुन कर किसका मन प्रसन्न नहीं होगा ?

तुमुन्नन्त

१६५—किसी धातुके परे *तुमुन्* लगानेसे *तुमुन्नन्त* रूप बनते हैं। तुमुन् के उन् का लोप होकर शेष तुम् रह जाता है।

१६६—*तुम्* से पूर्व—

(क) धातुके अन्तिम स्वर (ह्रस्व या दीर्घ) को *गुण* हो जाता है। जैसे—चि+तुम्=चेतुम्, नी+तुम्=नेतुम्, श्रु+तुम्=श्रोतुम्, कृ+तुम्=कर्तुम्।

(ख) धातुकी उपधाके ह्रस्व स्वरको (दीर्घको नहीं) *गुण* हो जाता है। जैसे—छिद्+तुम्=छेतुम्, मुच्+तुम्=मोक्तुम्। भूष् के उपधास्वर के दीर्घ होनेसे गुण नहीं होता। भूषयितुम्।

(ग) सेट् धातुओंके अन्तमें इ आता है। जैसे—पत्+इ+तुम्=पतितुम्, भाष्+इ+तुम्=भाषितुम्।

(घ) दृश्, सृज् और स्पृश् के उपधा-ऋको र हो जाता है। जैसे—दृश्+तुम्=द्रश्+तुम्=द्रष्टुम्, सृज्—स्रष्टुम्, स्पृश्—स्प्रष्टुम्।

(ङ) चुरादिगणके धातुओंके अन्तमें *अय* विकरण आता है। चुर्+अय+इ+तुम्=चोरयितुम्।

अनिट्

आप्	आप्तुम्
दा	दातुम्
धा	धातुम्
पा	पातुम्
स्था	स्थातुम्
शक्	शक्तुम्
स्वप्	स्वप्तुम्
वस्	वस्तुम्
हन्	हन्तुम्
गम्	गन्तुम्
नम्	नन्तुम्
क्षि	क्षेतुम्
जि	जेतुम्
इ	एतुम्
अधि+इ	अध्येतुम्
नी	नेतुम्
भी	भेतुम्
क्री	क्रेतुम्
श्रु	श्रोतुम्
हु	होतुम्
स्तु	स्तोतुम्
स्मृ	स्मर्तुम्
मृ	मर्तुम्
भृ	भर्तुम्
कृ	कर्तुम्
हृ	हर्तुम्

ब्रू	वक्तुम्
क्षिप्	क्षेप्तुम्
त्यज्	त्यक्तुम्
पच्	पक्तुम्
सिच्	सेक्तुम्
भिद्	भेत्तुम्
व्यध्	व्यद्धुम्
बन्ध्	बन्द्धुम्
युध्	योद्धुम्
बुध्	बोद्धुम्
क्रुध्	क्रोद्धुम्
रुध्	रोद्धुम्
मुच्	मोक्तुम्
युज्	योक्तुम्
भुज्	भोक्तुम्
शुष्	शोष्टुम्
तुष्	तोष्टुम्
पुष्	पोष्टुम्
प्रच्छ्	प्रष्टुम्
दृश्	द्रष्टुम्
सृज्	स्रष्टुम्
स्पृश्	स्प्रष्टुम्-स्पर्ष्टुम्
दुह्	दोग्धुम्
रभ्	रब्धुम्
लभ्	लब्धुम्
सद्	सत्तुम्
अद्	अत्तुम्

भिद्	भेत्तुम्
तुद्	तोत्तुम्
नश्	नंष्टुम्-नशितुम्
विद्	वेत्तुम् (पाने का) वेदितुम्
सह्	सहितुम्-सोढुम्
इष्	एषितुम्-एष्टुम्

सेट्

भू	भवितुम्
अस् (होना)	भवितुम्
पत्	पतितुम्
यत्	यतितुम्
पठ्	पठितुम्
रक्ष्	रक्षितुम्
ईक्ष्	ईक्षितुम्
वद्	वदितुम्
अस् (फेंकना)	असितुम्
तन्	तनितुम्
जन्	जनितुम्
भ्रम्	भ्रमितुम्
शम्	शमितुम्
वन्द्	वन्दितुम्
श्लाघ्	श्लाघितुम्
भाष्	भाषितुम्
आस्	आसितुम्
याच्	याचितुम्
शास्	शासितुम्

शिक्ष्	शिक्षितुम्	मुष्	मोषितुम्	दण्ड्	दण्डयितुम
कम्प्	कम्पितुम्	नृत्	नर्तितुम्	भक्ष्	भक्षयितुम
शङ्क्	शङ्कितुम्	वृत्	वर्तितुम्	तड्	ताडयितुम
दिव्	देवितुम	वृध्	वर्धितुम	चुर्	चोरयितुम्
सेव्	सेवितुम	शी	शयितुम्	तुल्	तोलयितुम
मुद्	मोदितुम्	जागृ	जागरितुम	भूष्	भूषयितुम
शुभ्	शोभितुम्	हस्	हसितुम्	चिन्त	चिन्तयितुम
रुच	रोचितुम्	ग्रह्	ग्रहीतुम्	कथ्	कथयितुम

प्रयोग

जहां एक क्रियाके लिए दूसरी क्रिया की जाय तो वहाँ दूसरी क्रियाको प्रधान क्रियाके रूपमें रखकर पहली क्रियाको तुमुन्नन्त रखा जाता है। जैसे-हिन्दीमें हम कहते हैं-राम खेलनेको जाता है। यहां जाना (क्रिया) खेलनेके निमित्त की गई है। संस्कृतमें इस वाक्यका यह रूप होगा-रामः क्रीडितुं गच्छति। इसमें क्रीडितुम् क्रीड् (धातुका) तुमुन्नन्त रूप है। इस लिए तुमुन्नन्त क्रियाको क्रियार्थ क्रिया भी कहते हैं।

यदि तुमुन्नन्त क्रिया सकर्मक धातुकी बनी हो तो उसके पूर्व द्वितीयान्त कर्म अवश्य आता है और यदि वह अकर्मक धातुकी बनी हो तो कर्म नहीं आता। जैसे-नृपः चौरं दण्डयितुम आदिशत्। इस वाक्य में दण्ड् धातु सकर्मक है, अतः इसके पूर्व चौरं का होना आवश्यक है। परन्तु शिशुः शयितुम् ईहते। इस में शयितुम् अकर्मक (शी) धातु का तुमुन्नन्त रूप है, अतः इसके पूर्व कर्म नहीं है।

कुछ तुमुन्-अन्त शब्दों के प्रयोग

स्नातुं जल समानेतुं यान्ति नार्यः पयस्वतीम्,
घटानादाय शार्पैश्च गृहाण्यागन्तुमुद्यताः।
वक्ता यत्रास्थितो वक्तुं श्रोतारः श्रोतुमागताः।
विक्रेतुं पण्यवीथ्यां ते विक्रेतारः पृथक् पृथक्,
क्रय्यान् पदार्थानादाय प्रसारयितुमुत्सुकाः।

उत्तमः क्लेशविक्षोभं क्षमः सोढुं नहीतरः।
आरूढः स्यन्दनं कर्णः प्राप्तुं सद्यो रणाङ्गणम्।
दुर्जनसङ्गं सुजनास्त्यक्तुं वांछन्ति दुर्जना न पुनः,
कम्बलमिषाद् गृहीतं भल्लूकं यथाध्वगो न चासौ तम्।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो—

आज हमारे स्कूलके हैडमास्टर (मुख्याध्यक्षः) परीक्षा लेनेको हमारी जमातमें आये थे।

कण्वने शकुन्तलाको दुष्यन्तके पास भेजनेको अपने शिष्योंको बुलाया।

मोहन अपने पितासे पैसा (पण) मांगनेको देखो खड़ा है।

अनार खरीदनेके लिए पहले एक रुपया दो फिर इन्हें हाथ लगाना।

किसान (कृषीवल, कृषक) खेतमें बीज डालने (वप्) के लिए हल चला रहा है।

ये दोनों पहलवान युद्धके लिए तैयार होकर एक दूसरेको ललकार रहे हैं।

एक शिकारी अपने साथ एक बाज़ (श्येन), कुछ कुत्ते और धनुष बाण लिए शिकारको जा रहा है।

हम प्रातः ही उठ कर घूमनेको जाते हैं, फिर लौट कर न्हानेके लिए जल लाते हैं।

देखो, ग्वाला दूध दोहनेके लिए आ रहा है, तुम अभी मटकी लेकर जाओ।

दुहे हुए दूधको लाकर गरम करनेके लिए कड़ाही (कटाह) में डालो।

मैं आपसे वही सुन्दर कहानी सुनना चाहता हूं जो तीन साल पहले सुनी थी।

देखो, ये छात्र पंक्तिमें अपना अपना पाठ पढ़नेको खड़े हैं।

यह बनिया अधिक दाम पर चीज़ों को बेचकर धनी होना चाहता है।

जो लोग केवल यश पाना चाहते हैं, वे घोरसे घोर कुकर्म करनेसे भी नहीं बाज़ आते।

आज कल तो जिसके पास खानेको अन्न और पहननेको वस्त्र-मात्र ही हो, उसे भाग्यवान समझना चाहिए।

मेरी गाड़ीमें घोड़ेको जोड़ने (युज्) के लिए कोचवान (सारथि) को बुलाओ।

अनुशीलनी—२६

१—इन रूपोंको नियमोंके द्वारा सिद्ध करो—

सृष्ट्वा, उप्त, त्यक्त, स्रष्टुम्, विजित्य, दोग्धुम्, भिन्न, पठित्वा, क्रोद्धुम्, दत्त, पात्वा, शुष्क, पक्व।

२—इनमें प्रकृति (धातु) और प्रत्ययको अलग अलग करो—

दुष्ट, सोढ, अधीत्य, जग्ध, मेत्तुम्, विस्मृत्य, उक्त, उषित्वा, द्यून, पीत्वा, ऊढ, सुप्त्वा।

३—इनके क्तान्त और तुमुन्नन्त रूप लिखो—

स्था, अद्, अस्, (होना), व्यध्, प्रच्छ्, भाष्, शुभ्, ग्रह्, यज्, वद्, भुज्, श्रम्, गम्, जन्, हृष्, शुष्, क्षि, या, शास्।

४—इन पदोंको वाक्योंमें प्रयुक्त करो—

(क) भोक्तुम्, उपगम्य, प्रस्थाय, जित, भीत, रोद्धुम्, क्रीत्वा, पतित, सोढ, अनुभूय, तीर्त्वा, कृत।

(ख) इन क्तान्त रूपोंका प्रयोग विशेषणोंकी तरह करो—

कृत, दुग्ध, श्रान्त, अनुभूत, स्थित, मुक्त, जात, गृहीत, शिष्ट, दत्त।

५—इनको संस्कृतमें उल्था करो—

खेलनेके लिए, चला गया, देखे गए, पीकर, उठनेको, मारे गए, (दो) सो गए, चुरा कर, बेच कर, बैठ कर, सुना गया, रोनेके लिए, देख कर, सूखनेके लिए, प्रसन्न होकर, शुरू करनेके लिए, हो गया, छोड़ कर, छुआ गआ, तोड़ा गया।

६—इनमें रिक्त स्थानोंको पूर्ण को।

मोहनस्य वित्तं...। चौरः तस्य गृहं...। पित्रे पत्रं तेन...।...आत्मना...... अपराधे......नोचितम्।... राज्यं......रामस्य पादुके सिंहासने......। आकाशे यदा चन्द्रः......तदा तारकाणि...। शिशुः दुग्धं...सुप्तः। ...अनुचितं कृतम्। ......कर्मणः किं फलं...। सदा...फलानि भक्षय न अपक्वानि। ......कूपात् वारि.........। शिशरे वृक्षाणां पर्णानि......। पत्रम्...कुत्र गच्छसि? गुरु ......पाठः तेन......। सफलतां......नरः प्रसीदति। रावणं......रामः अयोध्यां......। विद्यालयं ......उद्यतः छात्रः। अद्याहं...उद्यानं गमिष्यामि। दाचयं......राघवस्यानीकं...।

कृदन्त-प्रकरण—२

शतृ, शानच् (वर्तमान कालके कृत् प्रत्यय)

(Present Participles)

१६७—शतृ के श् और ऋ का लोप होकर *अत्* रह जाता है और शानच् के श् और च् का लोप होकर *आन* रह जाता है।

अत् परस्मैपदी धातुओंसे आता है और आन आत्मनेपदी धातुओंसे। उभयपदी धातुओंसे अत् और आन दोनों आते हैं।

१६८—*अत्* से पूर्व धातुके अन्तमें उस धातुका *विकरण* जोड़ा जाता है। फिर धातु और विकरणमें वे सबके सब कार्य होते हैं जो अजादि अविकारक विभक्ति (अन्ति, अन्तु, अन् आदि) के पूर्व होते हैं।

जैसे—भू + अत् = भू + अ + अत् = भवत्। अस् + अत् = सत्। हन् + अत् = घ्नत्। ब्रू + अत् = ब्र् + उव् + अत् = ब्रुवत्। आप् + नु + अत् = आप् + नुव् + अत् = आप्नुवत्। बिभे + अत् = बिभ्यत्। नश् + य + अत् = नश्यत्। रुन्ध् + अत् = रुन्धत्। तन् + उ + अत् = तन्वत्। कृ + उ + अत् = कुर् + उ + अत् = कुर्वत्। क्री + ना + अत् = क्री + ण् + अत् = क्रीणत्। चुर् + अय + अत् = चोरयत्।

(किसी परस्मैपदी धातुके लट् के प्रथमपुरुषके बहुवचनका रूप लेकर उसकी विभक्तिको हटाकर उसके स्थान में अत् कर देनेसे शत्रन्त रूप बन जाता है। जैसे—गम् के गच्छन्ति का अन्ति हटा कर अत् लगानेसे गच्छत् रूप बन जाता है। दीव्यन्ति-दीव्यत्। बिभ्रति-बिभ्रत्। ददति-ददत्।

१६९—*आन आत्मनेपदी* धातुओंसे आता है। आन से पूर्व भी धातुके अन्तमें गण-विकरण जोड़ा जाता है। भ्वादि, दिवादि, तुदादि और चुरादि गणोंके धातुओंमें आन से पूर्व म् जुड़ कर मान बन जाता है। जैसे—मुद् + अ + आन = मोद् + अ + म् + आन = मोदमान। वृत् + अ + मान = वर्तमान। वृध् + अ + मान =

वर्धमान । भाष्-भाषमाण । युध् + य + मान = युध्यमान । जन् + य+ मान= जायमान । सिच् =सिञ्च् + अ + मान + सिञ्चमान । चुर् + अय+ मान = चोरयमाण ।

२७२—अदादि, जुहोत्यादि, स्वादि, रुधादि, तनादि और क्र्यादि गणी धातुओं से आन हो आता है और आनसे पूर्व धातु और विकरणमें वे सब कार्य्य होते हैं जो अजादि-अविकारक विभक्तियोंसे पूर्व होते हैं । ब्रु+आन=ब्रुव् +आन=ब्रुवाण । दा + आन=दद् +आन=ददान । धा-दधान । सु+नु+आन=सुन्वान । रुध् + आन = रुन्ध् + आन = रुन्धान । भुज् = भुञ्जान । कृ + आन = कुर् + उ+आन=कुर्वाण । तन्-तन्वान । क्री+ना+आन=क्रीणान । ग्रह् -गृह्णान ।

(भ्वादि, दिवादि, तुदादि और चुरादि गणके किसी आत्मनेपदी धातुके लट के प्रथम-पुरुष एकवचनका रूप लेकर ते के स्थानमें **मान** कर देनेसे और अन्य धातुओंके लट् के बहुवचन का रूप लेकर विभक्ति (अते) के स्थानमें आन कर देनेसे मान-अन्त या आन-अन्त रूप बन जाते हैं । जैसे—(मान) रोचते रोचमाण । विद्यते-विद्यमान । म्रियते-म्रियमाण । भूषयते-भूषयमाण । (आन) हिन्वते-हिन्वान । भुञ्जते-भुञ्जान । कुर्वते-कुर्वाण । क्रीणते=क्रीणान ।

कुछ धातुओंके शत्रन्त रूप

भू	भवत्	दृश्	पश्यत्	मृज्	मार्जयमान,
पत्	पतत्	रक्ष्	रक्षत्		मार्जमान
पठ्	पठत्	वद्	वदत्	सद्	सीदत्
दा	यच्छत्	नम्	नमत्	दंश्	दशत्
पा	पिबत्	स्था	तिष्ठत्	हृ	हरत्
गम्	गच्छत्	पच्	पचत्	रञ्ज्	रञ्जत्,
शुच्	शोचत्	गुह्	गुहत्,		रञ्जमान
क्षि	क्षयत्		गुहमान	बुध्	बोधत्, बोधमान
जि	जयत्	चम्	चमत्	ध्मा	धमत्
स्मृ	स्मरत्	कम्	कामत्, काम्यत्,	घ्रा	जिघ्रत्
	त्यजत्		कममाण		

दिवादि—

भ्रम्	भ्राम्यत्
व्यध्	विध्यत्
नश्	नश्यत्
क्रुध्	क्रुध्यत्
शुष्	शुष्यत्
तुष्	तुष्यत्
अस्	अस्यत्
नृत्	नृत्यत्
पुष्	पुष्यत्
दिव्	दीव्यत्

तुदादि—

कृत्	कृन्तत्
मुच्	मुञ्चत्, मुञ्चमान
लिप्	लिम्पत्, लिम्पमान
लुप्	लुम्पत्, लुम्पमान
विद्	विन्दत्, विन्दमान
सिच्	सिञ्चत्, सिञ्चमान
इष्	इच्छत्
प्रच्छ्	पृच्छत्
क्षिप्	क्षिपत्
सृज्	सृजत्
स्पृश्	स्पृशत्

चुरादि—

कथ्	कथयत्, कथयमान
मार्ग्	मार्गयत्, मार्गयमाण
गण्	गणयत्, गणयमान
चुर्	चोरयत्, चोरयमाण
तड्	ताडयत्, ताडयमान
भूष्	भूषयत्, भूषयमाण
भक्ष्	भक्षयत्, भक्षयमाण
दण्ड्	दण्डयत्, दण्डयमान
तुल्	तोलयत्, तोलयमान
स्पृह्	स्पृहयत्, स्पृहयमाण

अदादि—

अद्	अदत्
अस्	सत्
इ	यत्
अन्	अनत्
ब्रू	ब्रुवत्, ब्रुवाण
शास्	शासत्
हन्	घ्नत्
जागृ	जाग्रत्
दुह्	दुहत्, दुहान
लिह्	लिहत्, लिहान
विद्	विदत्
रुद्	रुदत्
पा	पात्
स्वप्	स्वपत्

जुहोत्यादि—

भी	बिभ्यत्
दा	ददत्, ददान
धा	दधत्, दधान
हा	जहत्
भृ	बिभ्रत्
पृ	पिप्रत्
ह्री	जिह्रियत्
हु	जुह्वत्
स्तु	स्तुवत्, स्तुवान

स्वादि—

शक्	शक्नुवत्
आप्	आप्नुवत्
हि	हिन्वत्
श्रु	शृण्वत्
सु	सुन्वत्
धु	धुन्वत्

रुधादि—

रुध्	रुन्धत्, रुन्धान
भुज्	भुञ्जत्, भुञ्जान
युज्	युञ्जत्, युञ्जान
भिद्	भिन्दत्, भिन्दान
हिंस्	हिंसत्

तनादि—

तन्	तन्वत्
	तन्वान
कृ	कुर्वत्
	कुर्वाण

क्र्यादि—

बन्ध	बध्नत्
मुष्	मुष्णत्
गृह्	गृह्णत्
	गृह्णान
ज्ञा	जानत्
	जानान
क्री	क्रीणत्
	क्रीणान

कुछ धातुओंके शानच् अन्त रूप

मान-अन्त

भ्वादि—

शिक्ष्	शिक्षमाण
ईक्ष्	ईक्षमाण
वन्द्	वन्दमान
यत्	यतमान
शङ्क्	शङ्कमान
वृत्	वर्तमान
वृध्	वर्धमान
श्लाघ्	श्लाघमान
कम्प्	कम्पमान
सह्	सहमान
मुद्	मोदमान
शुभ्	शोभमान
रुध्	रोधमान
भाष्	भाषमाण
सेव्	सेवमान
रभ्	रभमाण
लभ्	लभमान
मृग्	मृगयमाण
कम्	कामयमान

दिवादि—

जन्	जायमान
युध्	युध्यमान
विद्	विद्यमान

तुदादि—

मृ	म्रियमाण

आन-अन्त

ईश्	ईशान
शी	शयान
सु	सुन्वान
अधि+इ	अधीयान
आस्	आसीन

अत्-अन्त शब्दोंके रूप तीनों लिङ्गोंमें गच्छत् की तरह होंगे।

मान तथा आन—अन्त शब्दोंके रूप पुंलिङ्गमें रामकी तरह, स्त्रीलिङ्गमें लताकी तरह और नपुंसकलिङ्गमें फलकी तरह होंगे।

पुंलिङ्ग	वर्तमानः	वर्तमानौ	वर्तमानाः
स्त्रीलिङ्ग	वर्तमाना	वर्तमाने	वर्तमानाः
नपुंसकलिङ्ग	वर्तमानम्	वर्तमाने	वर्तमानानि

प्रयोग

अत्-अन्त और आन-अन्त पदोंके प्रयोग दो प्रकारसे होते हैं। वर्त-

मान कृदन्त (Present Participle) की तरह और विशेषणकी तरह।

१७०—(क) जहाँ दो क्रियाएँ एक ही साथ हो रही हों तो जो क्रिया पहले हो रही हो वहाँ उसका (अत्-अन्त या आन-अन्त का) प्रयोग वर्तमान-कृदन्त की तरह होता है। जैसे—स चलन् पठति। सीता रामम् अनुगच्छन्ती तम् अब्रवीत्। मोहनः मे पृष्ठतः आगच्छन् आस्ते। कृष्णां सान्त्वयमानः कृष्णः अवदत्। किं कुर्वाणाः तिष्ठन्ति ते? सर्वे जनाः त्वां प्रतीक्षमाणाः वर्तन्ते। तत्र बहवः नरा आसीना अवर्तन्त।

क्रिया यदि भूत या भविष्यत् कालकी हो तो भी वर्तमान (Present Participle) अर्थमें इसीका ही प्रयोग होगा।

जैसे—मृगः धावन् अलुप्यत्। सोऽन्नम् अदन् पठिष्यति।

ऐसी अवस्था में अत् और आन-अन्त पदोंकी समता वाक्यके कर्ता से होगी। देखो ऊपर दिये हुए उदाहरण।

(ख) जब इनका प्रयोग विशेषणकी तरह हो तो इनकी समता अपने विशेष्यसे होगी। जैसे—एवं चिन्तयतः तस्य कृत्स्ना रात्रिः व्यतीता। घटं वहन्तीं तां नारीं माधवः अपश्यत्। याचमानाय अस्मै भिक्षवे किंचिद् भोजनं यच्छ। जीर्यतः नरस्य दन्ता जीर्यन्ति। य शयानं शार्दूलं शरेण अविध्यत्।

क्तवत्-अन्त

१७१—क्तवत् के क् का लोप होकर तवत् रह जाता है।

तवत् से पूर्व धातुमें वे ही विकार होते हैं, जो त [क्त] से पूर्व होते हैं।

किसी धातुके क्तान्त रूपके साथ यदि वत् लगा दें तो वह उसका क्तवत्-अन्त रूप बन जायगा। जैसे—भू-भूत (क्तान्त), भूतवत् (क्तवत्-अन्त)। गम्-गत, गतवत्। दा-दत्त, दत्तवत्। वच्-उक्त, उक्तवत्। दृश्-दृष्ट, दृष्टवत्। गुह्-गूढ, गूढवत्। चम्-चान्त, चान्तवत्। क्रम्-क्रान्त, क्रान्तवत्। सद्-सन्न, सन्नवत्। मृज्-मृष्ट—मार्जित, मृष्टवत्—

मार्जितवत् । दंश्—दष्ट, दष्टवत् । रञ्ज्—रक्त, रक्तवत् । ध्मा—ध्मात, ध्मातवत् । घ्रा—घ्रात, घ्रातवत् । कम्—कान्त, कान्तवत् । कृत्—कृत्त, कृत्तवत् । लुप्—लुप्त, लुप्तवत् । ईश्—ईष्ट, ईष्टवत् । सू—सूत, सूतवत् । या—यात, यातवत् । लिह्—लीढ, लीढवत् । पृ—पूर्त, पूर्तवत् । मा—मित, मितवत् । हा—हीन, हीनवत् । धु—धुत, धुतवत् । हिंस्—हिंसित, हिंसितवत् ।

तवत्-अन्त शब्दोंके रूप तीनों लिंगोंमें गुणवत् की तरह होंगे ।

पुं०	कृतवान्	कृतवन्तौ	कृतवन्तः
स्त्री०	कृतवती	कृतवत्यौ	कृतवत्यः
नपुं०	कृतवत्	कृतवती	कृतवन्ति

तवत्-अन्त कृदन्तों का प्रयोगः—

(क) क्रियाकी तरह और

(ख) विशेषणकी तरह होता है ।

(क) जब यह क्रियाकी तरह हो तो इसका प्रयोग कर्तृवाचक भूतकालमें होता है । उस समय इसके लिंग, विभक्ति (प्रथमा) और वचन कर्ताकी तरह होंगे । जैसे—रामः राजा भूतवान् । वृक्षात् फलानि पतितवन्ति । प्रमदाः तडागात् जलं नीतवत्यः । प्रातः एव तस्य वृद्धस्य प्राणाः निर्गतवन्तः । रघुः अनाथेभ्यः सर्वस्वं दत्तवान् । सर्वे एव तस्य व्याख्यानम् अवधानेन श्रुतवन्तः । कमला विमला च उभे सत्वरं ग्रामात् प्रत्यागतवत्यौ ।

(ख) जब यह विशेषणकी तरह प्रयुक्त होता है तो इसके लिङ्ग और वचन विशेष्यकी तरह होंगे । उस समय इसका अर्थ वर्तमान कृदन्त की तरह होता है । जैसे—गच्छतः नरस्य (जाते हुए आदमी का) के स्थान में 'गतवतः नरस्य' का प्रयोग भी हो सकता है । जैसे—गृहं प्रति गतवते रामाय मे सन्देशं देहि । वने गतवन्तं नरं कश्चन सर्पः दष्टवान् । उत्सवम् अवलोकितवान् असौ नरः सर्वैर्विवदते ।

क्त (त) कर्मवाच्य भूतमें आता है और क्तवतु (तवत्) कर्तृवाच्य भूतमें आता है । अतः क्तान्त क्रियाका वाच्यपरिवर्तन क्तवत्वन्तमें और क्तवत्वन्त

का क्तान्तमें होता है। जैसे—मारुतिना लङ्का दग्धा । इसमें कर्मवाच्य क्तान्त क्रिया है। इसका कर्तृवाच्य में परिवर्तन, मारुतिः लङ्कां दग्धवान् । क्तवत्वन्त क्रियामें होगा।

क्तान्त	क्तवत्वन्त
सर्पेण स शिशुः दष्टः ।	सर्पः तं शिशुं दष्टवान् ।
कर्णेनानेकेऽरातयः हताः ।	कर्णः अनेकान् अरातीन् हतवान् ।
रावणकुम्भकर्णाभ्यां रामः शरेण विद्धः ।	रावणकुम्भकर्णौ रामं शरेण विद्धवन्तौ ।

क्तवत्वन्त	क्तान्त
वयम् उद्दिष्टं स्थानं प्राप्तवन्तः ।	अस्माभिः उद्दिष्टं स्थानं प्राप्तम् ।
दासी गोमयेन महानसं लिप्तवती ।	दास्या गोमयेन महानसं लिप्तम् ।
फलानि वृक्षात् पतितवन्ति ।	फलैः वृक्षात् पतितम् (भाववाच्य)

विधिकृदन्त

तव्य, अनीय, य (Potential Passive Participles)

१७२—विधि (किसी कामको करनेकी योग्यता या शक्ति) बतानेके लिए धातुओंसे *तव्य, अनीय* वा *य* लगा देते हैं। ये प्रत्यय सकर्मक धातुओंसे कर्मवाच्य प्रयोगमें और अकर्मक धातुओंसे भाववाच्य प्रयोगमें आते हैं।

जैसे—त्वया गन्तव्यम्। इसका अर्थ—तुम्हें जाना चाहिये। अथवा तुम जा सकते हो। दोनों तरह हो सकता है।

तव्य, अनीय,

१७३—*तव्य* और *अनीय* से पूर्व धातुके अन्तिम स्वर (ह्रस्व वा दीर्घ) और उपधाके ह्रस्व स्वरको *गुण* हो जाता है। जैसे—कृ+तव्य=कर्+तव्य=कर्तव्य। नी+तव्य=नेतव्य। भुज्+तव्य=भोक्+तव्य=भोक्तव्य। चि+अनीय = चे+अनीय=च्+ अय्+अनीय=चयनीय। युज्+अनीय=योजनीय।

१७४—तव्य से पूर्व सेट् धातुओंके अन्तमें इ जोड़ा जाता है, किन्तु अनीय से पूर्व नहीं जोड़ा जाता। (अनीयसे पूर्व इ कदापि नहीं आता)। जैसे—पत्+इ+तव्य=पतितव्य, पतनीय।

१७५—चुरादिगणी और णिजन्त धातुओंके साथ तव्यसे पूर्व 'अय' विकरण भी जुड़ा रहता है। जैसे—चुर्+तव्य=चोर्+अय+इ+तव्य=चोरयितव्य। कृ+अय (णिच्)+इ+तव्य=कारयितव्य।

तुम से पूर्व धातुओंमें जो भी विकार होते हैं, वे सब तव्य से पूर्व भी होते हैं। जैसे—दृश्-द्रष्टुम्, द्रष्टव्य। ब्रू-वक्तुम्, वक्तव्य। अद्-अत्तुम्, अत्तव्य। दह्-दग्धुम्, दग्धव्य। लिह्-लेढुम्, लेढव्य। युज्-योक्तुम्, योक्तव्य। क्री-क्रेतुम्, क्रेतव्य। पुष्-पोष्टुम्, पोष्टव्य। ग्रह्-ग्रहीतुम्, ग्रहीतव्य। गुह्-गूहितुम्-गोढुम्, गूहितव्य—गोढव्य।

धातुओं के तव्य और अनीय-अन्त रूप

धातु	तव्य	अनीय	धातु	तव्य	अनीय
आप्	आप्तव्य	आपनीय	सद्	सत्तव्य	सदनीय
दा	दातव्य	दानीय	वच्	वक्तव्य	वचनीय
धा	धातव्य	धानीय	त्यज्	त्यक्तव्य	त्यजनीय
या	यातव्य	यानीय	भुज्	भोक्तव्य	भोजनीय
स्था	स्थातव्य	स्थानीय	रञ्ज्	रक्तव्य	रञ्जनीय
ज्ञा	ज्ञातव्य	ज्ञानीय	सृज्	स्रष्टव्य	सर्जनीय
ध्मा	ध्मातव्य	ध्मानीय	दृश्	द्रष्टव्य	दर्शनीय
घ्रा	घ्रातव्य	घ्राणीय	प्रच्छ्	प्रष्टव्य	प्रच्छनीय
मा	मातव्य	मानीय	रभ्	रब्धव्य	रम्भणीय
हा	हातव्य	हानीय	लभ्	लब्धव्य	लम्भनीय
गम्	गन्तव्य	गमनीय	भिद्	भेत्तव्य	भेदनीय
हन्	हन्तव्य	हननीय	छिद्	छेत्तव्य	छेदनीय
अद्	अत्तव्य	अदनीय	युध्	योद्धव्य	योधनीय
			रुध्	रोद्धव्य	रोधनीय

जि	जेतव्य	जयनीय	सह्	सोढव्य, सहितव्य	सहनीय
चि	चेतव्य	चयनीय	लिह्	लेढव्य	लेहनीय
नी	नेतव्य	नयनीय	दुह्	दोग्धव्य	दोहनीय
क्री	क्रेतव्य	क्रयणीय	लुप्	लोप्तव्य	लोपनीय
भी	भेतव्य	भयनीय	लिप्	लेप्तव्य	लेपनीय
शी	शेतव्य	शयनीय	पत्	पतितव्य	पतनीय
हु	होतव्य	हवनीय	पठ्	पठितव्य	पठनीय
श्रु	श्रोतव्य	श्रवणीय	विद्	वेदितव्य	वेदनीय
कृ	कर्तव्य	करणीय	भू	भवितव्य	भवनीय
हृ	हर्तव्य	हरणीय	ग्रह्	ग्रहीतव्य	ग्रहणीय
स्मृ	स्मर्तव्य	स्मरणीय	चुर्	चोरयितव्य	चोरणीय

य (यत , क्यप् , ण्यत्)

१—य (यत)

१७६—किसी अजन्त धातु के बाद य (यत्) आता है।

१७७—य से पूर्व आ को ए और इ और उ को गुण (ए,ओ) हो जाता है। जैसे—दा-देय, स्था—स्थेय, गै=गा+य=गेय। चि—चेय, नी—नेय। श्रु का श्रव्य बनता है।

२—य (क्यप्)

१७८—इ, स्तु, शास् और वे धातु जिनकी उपधामें ऋ हो, उन के आगे य (क्यप्) आता है।

१७९—इ, उ और ऋ के बाद त् जोड़ा जाता है।

जैसे—इ-इत्य, स्तु स्तुत्य, भृत्य (दास)। शास् का शिष्य बनता है। वृत्-वृत्य। वृध्-वृध्य।

३—य (ण्यत)

१८०—ऋकारान्त और हल-अन्त धातुओंसे परे य

(ण्यत्) आता है, ण्यत् से पूर्व ऋ को वृद्धि होती है।

जैसे—स्मृ—स्मार्य, कृ—कार्य, हृ-हार्य।

हल्—अन्त धातु के उपधा-अ को दीर्घ हो जाता है। जैसे—त्यज्+य=त्याज्य, ग्रह्-ग्राह्य।

१८१—धातु की उपधाके ह्रस्व स्वरको *गुण* होता है।

युज्—योग्य। भुज् के भोज्य (खाद्य) और भोग्य (भोगने योग्य) और वच् के वाक्य (a sentence) और वाच्य (कथनीय) दो दो रूप होंगे।

कर्त्रर्थ कृदन्त

तृ, अक

१८२—कर्ता (करने वाला) के अर्थमें किसी धातुसे परे तृ या *अक* आते हैं। जैसे—दा=दातृ, कथ्-कथक।

तृ

१८३—तृ से पूर्व धातुके *अन्तिम* स्वर या उपधाके ह्रस्व स्वरको *गुण* हो जाता है। जैसे—कृ+ता=कर्ता, नी–नेता, श्रु-श्रोता। सेट् धातुओंसे परे इ जोड़ा है। जैसे—भू-भविता।

अक

१८४-अक से पूर्व धातुके *आन्तिम* स्वरको वृद्धि और *उपधाके* ह्रस्व स्वरको *गुण* हो जाता है। जैसे—नी+अक=नै+अक=न्+आय्+अक=नायक, श्रु—श्रावक, स्मृ—स्मारक। मुद्+अक=मोदक, भिद्–भेदक, नृत्—नर्तक।

उपधाका ह्रस्व अ दीर्घ हो जाता है। जैसे—पच्-पाचक, पत्–पातक।

१८५—आकारान्त धातुके अन्तमें *य* जोड़ा जाता है।

जैसे—दा+य्+अक=दायक, स्था-स्थायक।

णिच् से पूर्व धातुमें जो विकार होते हैं, वे अक से पूर्व भी होते हैं। हन् का

घातक (मारने वाला), पा-पालक, ज्ञा-ज्ञापक, स्था-स्थापक ।

भाववाचक कृदन्त

अन, अ, ति

१८६-किसी धातुकी भाववाचक संज्ञा (Abstract noun) बनानेके लिये धातुसे परे *अन*, *अ* वा *ति* प्रत्यय आते हैं ।

जैसे—गम्-गमन, मुच्-मुक्ति, त्यज्-त्याग, पत्-पात ।

अन

१८७—अन से पूर्व धातुके अन्तिम स्वर या *उपधा* के ह्रस्व स्वरको *गुण* हो जाता है । जैसे—भू-भवन, नी-नयन, युज्-योजन, बुध्-बोधन ।

अ (घञ्)

१८८—(क) *अ* से पूर्व धातुके अन्तिम स्वर को *वृद्धि* होती है । जैसे—भू-भाव ।

(ख) धातुकी *उपधा* के ह्रस्व स्वरको *गुण* हो जाता है ।

जैसे—युज्-योग, भुज्-भोग, रुज्-रोग ।

(ग) *उपधा* के अ को *दीर्घ* हो जाता है । जैसे—त्यज्-त्याग, पच्-पाक, पत्-पात ।

ति (क्ति)

१८९—ति से पूर्व धातुमें वे सब विकार होते हैं जो त (क्त) से पूर्व होते हैं । जैसे—वच्-उक्त, उक्ति । बुध्-बुद्ध, बुद्धि । परन्तु भिद् का भित्ति और कृ का कीर्ति बनेंगे ।

अ-अन्त पुंलिंगमें, ति-अन्त स्त्रीलिंगमें और अन-अन्त नपुंसकलिंग में होते हैं ।

अभ्यास

राघवेण पराजितः पौलस्त्यः चिन्तितवान् । परस्परं युध्यमानौ रामरावणौ असंख्यान् विपक्षान् रणाङ्गणे पातितवन्तौ । शिशुं चन्द्रमसं दर्शितव-

त्यसौ रमणी तं प्रसीदन्तमवलोक्य स्वयमपि प्रमुदितवती। सुगम्योऽयं पाठः, अचिरेणैवानेन स्मृतिपथः प्राप्यः। मानवेन सदा कर्तव्येषु कार्येष्वधानं दातव्यम्। व्यर्थं मे जन्म, न मया कृतं कर्तव्यं, न भुक्तं भोक्तव्यं, न श्रुतं श्रोतव्यम्। भोगानामुपभोगेन तथा न सन्तोषः यथा संयमेन। सञ्चयः कर्तव्यः परमतिसञ्चयः न कदापि कार्यः। स्फुटवक्ता न वञ्चकः।

न स्थातव्यं न गन्तव्यं क्षणमप्यधमैः सह।
विकृतिं नैव गच्छन्ति सङ्गदोषेण साधवः।
दातव्यं भोक्तव्यं धनविषये सञ्चयो न कर्तव्यः।
अपन्थानं तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुञ्चति।
अगम्यं नाम नेहास्ति धीरस्य व्यवसायिनः।
यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं नो करणीयं नाचरणीयम्।
वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति विचक्षणाः।

इसका अनुवाद संस्कृतमें करो:—

सोते हुए मनुष्यको कभी जगाना नहीं चाहिए।

तुम कल भागते भागते जा रहे थे?

इस दरवाज़ेका किवाड़ बंद रखना (अपिधा) चाहिए कि मक्खियां (मक्षिका) तंग न करें।

यदि आपने खाना खा लिया है तो अब जानेको तैयार हो जाना (सम्+नह्) चाहिए क्योंकि गाड़ीका समय होगया है।

सब लोगोंको फाटकसे प्रवेश कर अपने स्थानपर बैठ जाना चाहिए और व्याख्यान ध्यान लगाकर (सावहितम्) सुनना चाहिए।

युधिष्ठिर महाराजके राज-सूय यज्ञमें आ रहे हुए अतिथिओंके सत्कारका काम श्रीकृष्णको सौंपा गया।

धूपमें छाता (आतपत्र) लेकर घरसे निकलना चाहिए क्योंकि रास्ता लंबा है इस लिए देर तक न चल सकोगे।

मोतिया (मल्लिका) और जूही (यूथिका) की मालाएं बनाकर महाराजके गलेमें डालनी चाहिएं।

मनुष्य अपने अच्छे वा बुरे कार्योंसे इस तरह ऊपर व नीचे जाता है जैसे दीवार (भित्ति) का बनानेवाला (निर्मातृ) और कुआं खोदनेवाला

(खनक)।

कुपुत्र कुलको डुबानेवाला और सुपुत्र कुल तारनेवाला (तारक) होता है।

जो लोग थोड़ी दूर जानेमें भी गाड़ी का प्रयोग करते हैं, उनसे एक कदम भी कभी पैदल चला नहीं जा सकता ?

काम करने लायक या न करने लायक नहीं होता, मनुष्यकी योग्यता ही उसे अच्छा या बुरा बना देती है।

अनुशीलनी—२७

१—स्मृ, मा, पन्, सृज्, हन (णिजन्त), वद्, युज्, मुद्, युध्, गण्—इनके तव्यान्त, भू, नी, दृश्, अधि+इ, पा, विद्, भुज्, जि, कृ, श्रु—इनके अनीयान्त और दृश्, मुच्, अद्, भज्, भिद्, अस् (होना), पत्, सह्, त्यज्, तृ—इनके क्तवत्-अन्त रूप लिखो।

२—इनकी प्रकृति और प्रत्यय बताओ—भित्ति, वचन, कार्य, सन्दिष्टवत्, प्रसारणीय, वर्तमान, गम्यमान, नायक, स्थिति, त्याग, याग, सञ्चालक, विभाजक, गणितवत्, वर्धमान, स्नेह, द्रष्टव्य, छेत्तव्य, श्रोतृ, जनयित्री।

३—इनके स्थानमें संस्कृत-शब्द रखो—चाल, बैठना चाहिए, करने वाला, भेजना, तोड़ना चाहिए, देख रहा, बुलाना चाहिए, लिखने वाला, जल रहा।

४—इन्हें वाक्योंमें जोड़ो—डयमानैः, स्मार्यम, जग्धवताम्, भर्तव्याः, नियोज्य, नीतिः, त्यजनीयाः, कृतवतः, भोक्तुः, बोद्धव्यम्।

५—भाववाचक कृत्प्रत्यय बता कर प्रत्येकके तीन-तीन उदाहरण दो।

६—यत्, क्यप् और ण्यत्—प्रत्ययान्त शब्द बनाने के नियम बताओ।

समास-प्रकरण—१

हिन्दी में हम कहते हैं—हनुमान रामभक्त था। राम-लक्ष्मण भाई थे। गंगाजल पवित्र होता है। इस सरमें नीलकमल उगे हैं। इन वाक्यों में रामभक्त का अर्थ है—रामका भक्त, राम-लक्ष्मणका अर्थ है—राम और लक्ष्मण, नीलकमलका अर्थ है—नीला कमल, गंगाजलका अर्थ है—गंगाका जल।

संस्कृतमें भी रामभक्त, रामलक्ष्मण, नीलकमल और गंगाजल शब्दों

का इसी तरह प्रयोग होता है और इनके अर्थ संस्कृतमें हैं—

रामस्य भक्तः, रामः च लक्ष्मणः च, नीलं कमलम्, गङ्गायाः जलम्। हिन्दी और संस्कृतके अर्थोंका मिलान करके देखा जाय तो दोनोंमें से कुछ न कुछ निकालनेसे रामभक्त आदि रूप बनते हैं—जैसे—हिन्दीमें रामका भक्त में से का निकाल देनेसे रामभक्त बनता है, और संस्कृत में रामस्य भक्तः में से स्य निकाल देने से रामभक्तः बनता है,। इसी प्रकार राम और लक्ष्मणमें से और निकाल देनेसे रामलक्ष्मण और रामः च लक्ष्मणः च में से विसर्ग और च निकालनेसे रामलक्ष्मणौ बनते हैं। इसी प्रकार गंगाजलसे हिन्दी में का और संस्कृतमें याः निकाला जाता है।

हिन्दीमें का आदि विभक्तियां हैं और संस्कृतमें स्य आदि विभक्तियां हैं। साथ ही इससे यह भी सिद्ध हुआ है कि रामभक्त (विभक्ति-रहित) और रामका भक्त (विभक्त-सहित) पदोंके अर्थों में कोई भेद नहीं है।

इससे सिद्ध होता है कि सम्बन्ध रखने वाले दो शब्दोंके अन्तोंसे विभक्तियां निकाल कर उन्हें मिलाया जाता है। उनके मिलनेपर भी अर्थ पूर्ववत् बना रहता है। ऐसे मिले हुए पदोंका नाम **समास** या समस्तपद है। जब किसी समस्त पदमें सब विभक्तियां जोड़ दी जाती हैं तो समस्तपद को विग्रह कहते हैं।

जब विभक्तियों को निकालकर समास किया जाता है, तो उसके, अन्तमें केवल उचित विभक्ति लगाई जाती है। जैसे—रामभक्तके रूप नृपकी तरह रामभक्तः रामभक्तौ आदि होंगे। (समासके अन्यान्य पदोंमें सन्धि करना आवश्यक है)।

समास के छः भेद हैं—

द्वन्द्व, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि, अव्ययीभाव।

(कई लोग समास को चार प्रकारका मानते हैं। कर्मधारयको तत्पुरुषका और द्विगुको कर्मधारयका भेद मानते हैं)।

१—द्वन्द्व (Copulative Compound)

१९०—जब दो वा अधिक प्रथमान्त शब्द च (और) से जुड़े हों तो उनकी विभक्तियों और च का लोप कर उन पदोंका समास किया जाय तो इसे द्वन्द्वसमास कहते हैं।

१—द्वन्द्वके तीन प्रकार हैं—इतरेतर-द्वन्द्व, समाहार-द्वन्द्व, एकशेष-द्वन्द्व।*

१—इतरेतरद्वन्द्व

१९१—द्वन्द्वसमासमें यदि दो पद हों और दोनों प्रथमा-एकवचनान्त हों तो समासके अन्तमें द्विवचन आता है, अन्यथा बहुवचन, इसे इतरेतरद्वन्द्व कहते हैं।

जैसे—रामः च लक्ष्मणः च—रामलक्ष्मणौ। रामः च कृष्णः च—रामकृष्णौ। माता च पिता च—मातापितरौ। रामः च भरतः च शत्रुघ्नः च—रामभरत-शत्रुघ्नाः। हेमन्तः च शिशिरः च वसन्तः च—हेमन्तशिशिरवसन्ताः। काकौ च हंसाः च—काकहंसाः।

अभ्यास

विद्वत्त्व-नृपत्वे कदापि तुल्ये न भवतः। ऋषीणां सुखदुःखयोः साम्यं भवति। धीरो नरः प्रथमं देशकालौ विचारयति ततः किमप्याचरति। सुरासुराणां विवादः चिरन्तनः। चन्द्रार्कौ पृथिव्या नेत्रे। वासुदेवोऽर्जु-नम् अकथयत् पुरा स्वकीयौ लाभालाभौ विचारय, ततः शस्त्राणि त्यज। मासस्य शुक्ल-कृष्णौ पक्षौ। शीतोष्णौ ऋतू। रामकृष्णौ सर्वेषां पूज्यौ। राम-लक्ष्मणौ सीता च वनम् अगच्छन्। वने रामो रावणकुम्भकर्णौ भ्रातरौ शस्त्रास्त्रैः अविध्यत्। सर्वे कौरवा भीमार्जुनयोः साम्मुख्ये अधावन्।

२—समाहार-द्वन्द्व

१९२—समाहार का अर्थ है समष्टि, समूह (Aggregate),

---

*वास्तवमें 'एकशेष' द्वन्द्वसमास नहीं है, भट्टोजीदीक्षितके मतमें यह एक अलग वृत्ति है।

अर्थात् जिस द्वन्द्व-समासमें इतरेतर-द्वन्द्वकी तरह प्रत्येक पदकी प्रधानता नहीं होती, प्रत्युत उससे एक *सामूहिक* अर्थका बोध होता है उसे *समाहारद्वन्द्व* समास कहते हैं।

यह समास विशेष विशेष अर्थोंमें होता है। इसके अन्यान्य पद चाहे किसी लिंग वा विभक्ति के हों, समास के अन्त में नपुंसकलिंगकी किसी विभक्तिका एकवचन ही रहता है। जैसे-हिन्दीमें हम कहते हैं- इन दोनोंका वैर तो कुत्ते-बिल्ली का है। इस महात्माको गरमी-सरदी एक है। इसी प्रकारके शब्द हैं—बाजा-गाजा, ढोल-ढमक्का।

इनमें कुत्ता-बिल्ली, सरदी-गरमी, ढोल-ढमक्का आदि समस्त शब्दोंमें प्रत्येक शब्द के अर्थ की नहीं बल्कि किसी विशेष अर्थकी प्रधानता है। समाहार-द्वन्द्व प्रायः इन अर्थोंमें प्रयुक्त होता है।

१—जीवोंके अंग-पाणी च पादौ च=पाणिपादम्।
दन्ताश्च ओष्ठौ च=दन्तोष्ठम्।

२—सेनाके विभाग-रथिकाश्च अश्वारोहाश्च=रथिकाश्वारोहम्।
धन्विनश्च कौन्तिकाश्च=धन्विकौन्तिकम्।
हस्त्यारोहाश्च पादाताश्च=हस्त्यारोहपादातम्।
मार्दङ्गिकाश्च पाणविकाश्च=मार्दङ्गिकपाणविकम्।

३—क्षुद्रजन्तु-दंशाश्च मशकाश्च=दंशमशकम्। यूकाश्च लिक्षाश्च=यूकालिक्षम्।

४—वे जन्तु जिनमें सहज वैर हो-अहिश्च नकुलश्च=अहिनकुलम्। काकाश्च उलूकाश्च=काकोलूकम्। मार्जारश्च मूषिकश्च=मार्जारमूषिकम्। परन्तु देवाश्च असुराश्च=देवासुराः क्योंकि ये हमेशा शत्रु नहीं थे।

३—एकशेषद्वन्द्व

१९३—जिस द्वन्द्व समासमें एक पद *शेष* रह जाय, दूसरे पदोंका लोप हो जाय, उसे *एकशेष* द्वन्द्व कहते हैं।

१९४—जब कुछ शब्द *समान* रूपके हों, अथवा समान अर्थके (चाहे रूप भिन्न भिन्न हों) हों, तो उनमें *एकशेष* समास

होता है। घटः च घटः च=घटौ, घटः च कलशः च=घटौ, कलशौ।

पुंलिंगवाचक यदि अपने ही स्त्रीलिंगवाचक शब्दके साथ समस्त हो, तो पुंलिंग वाचक शेष रहता है। माता च पिता च=पितरौ (माता पिता)। पुत्रश्च दुहिता च=पुत्रौ (भाई बहन)। श्वश्रूश्च श्वशुरश्च=श्वशुरौ (सास ससुर)। हंसश्च हंसी च=हंसौ। स च स च=तौ।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो:—

अच्छाई और बुराई मनकी वासना पर रहती हैं।

लड़ाई झगड़ा भाइयों में फूट (वैमनस्य) पैदा करेगा।

संसारका नाम ही मेल और जुदाई (वियोग) है।

राम और रावणमें कौन जीतेगा?

रोग, शोक और दुःख अपने पापोंसे होते हैं।

कृष्ण और अर्जुनमें मित्रता थी।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये वर्ण हैं।

युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन कुन्ती के पुत्र थे और नकुल और सहदेव माद्रीके।

२—तत्पुरुष (Determinative compound)

१९५—तत्पुरुष समासोंमें दो पद होते हैं। पहला पद प्रथमाके सिवा किसी और विभक्तिमें हो सकता है और दूसरा पद प्रथमान्त रहता है। इसमें अंतिम पद प्रधान होता है।

द्वितीयासे लेकर सप्तमीपर्यन्त छः विभक्तियोंके रहनेसे तत्पुरुष समासके भी छः भेद होते हैं—द्वितीया-तत्पुरुष, तृतीया-तत्पुरुष, चतुर्थी-तत्पुरुष, पञ्चमी-तत्पुरुष, षष्ठी-तत्पुरुष, सप्तमी-तत्पुरुष। इस तत्पुरुष को विभक्ति-तत्पुरुष कहते हैं। इसके सिवा उपपद-तत्पुरुष, नञ्-तत्पुरुष और अलुक्-तत्पुरुष भी तत्पुरुष के भेद हैं।

तत्पुरुषके भेद

द्वितीया-तत्पुरुष—ग्रामं गतः=ग्रामगतः। शरणम् आपन्नः=शरणापन्नः। स्वर्गं प्राप्तः=स्वर्गप्राप्तः।

तृतीया-तत्पुरुष—असिना छिन्नः :=असिच्छिन्नः। हरिणा त्रातः=हरित्रातः। पित्रा समः=पितृसमः।

चतुर्थी-तत्पुरुष—कुण्डलाय हिरण्यम्=कुण्डलहिरण्यम्। यूपाय दारु=यूपदारु। गोभ्यः हितम्=गोहितम्। भूतेभ्यः बलिः=भूतबलिः।

पञ्चमी-तत्पुरुष—अश्वात् पतितः=अश्वपतितः। सर्पात् त्रातः=सर्पत्रातः। धर्मात् अपेतः=धर्मापेतः। पापात् भयम्=पापभयम्।

षष्ठी-तत्पुरुष–रामस्य भक्तः=रामभक्तः। देवस्य पुत्रः=देवपुत्रः। भाग्यस्य उदयः=भाग्योदयः। गङ्गायाः जलम्=गङ्गाजलम्। राज्ञः पुरुषः=राजपुरुषः।

सप्तमी-तत्पुरुष—आतपे शुष्कः=आतपशुष्कः। गृहे स्थितः=गृहस्थितः। वने जातः=वनजातः। कर्मणि कुशलः=कर्मकुशलः।

अर्थके साथ चतुर्थ्यन्त पदका समास होता है और समस्तपद विशेषण बनकर विशेष्यके लिंग, वचन आदि लेता है। जैसे—ब्राह्मणार्थः का विग्रह होगा—

ब्राह्मणाय अयम्=ब्राह्मणार्थः (ओदनः)। ब्राह्मणाय इयम् = ब्राह्मणार्था (यवागूः)। ब्राह्मणाय इदम्=ब्राह्मणार्थं (पयः)

नञ्-तत्पुरुष

१९६—नञ् निषेधार्थ अव्यय है जिसके ञ् का लोप होकर केवल 'न' रह जाता है। इस न का किसी नाम-शब्दके साथ जब तत्पुरुष समास होता है तो उसे *नञ्-तत्पुरुष* समास कहते हैं। 'न' समासका पूर्वपद होता है।

१९७—समासमें 'न' (क) '*अ*' हो जाता है यदि उसके परे कोई *व्यञ्जन* हो और (ख) *अन्* हो जाता है यदि परे *स्वर* हो।

जैसे—न सत्=असत् (अविद्यमान, अचैतन्य), न व्याघ्रः=अव्याघ्रः, न अश्वः=अनश्वः, न उक्तिः=अनुक्तिः।

उपपद-तत्पुरुष

१९८—जिस तत्पुरुष-समासमें समस्त पद पहले पदके

योगसे ही बन सके अन्यथा न बन सके, उनके समासको उपपद समास कहते हैं ।

इसके विग्रहमें द्वितीय पदका अर्थ क्रियाके द्वारा बताया जाता है । जैसे—कुम्भकार :—इस समस्त पदमें 'कार' शब्द की स्वतन्त्र सत्ता नहीं है । यह रूप तब ही बन सकता है जब इसके पूर्व कोई और शब्द हो । इसी प्रकारके स्वर्णकार, लोहकार आदि समस्त पद हैं । इनका विग्रह इस प्रकार रहेगा—कुम्भं करोति—कुम्भकार:, स्वर्णं करोति—स्वर्णकार:, भुवि चरति—भूचर:, साम गायति—सामग: (साम वेदकी ऋचाका गायन करने वाला), गां ददाति—गोद: द्वाभ्यां पिबति—द्विप:, अल्पं जानाति—अल्पज्ञ: । पूजाम् अर्हति—पूजार्ह: ।

अलुक् तत्पुरुष

ऊपर कहा गया है कि समास होनेपर विभक्ति नहीं रहती, परन्तु कुछ ऐसे समस्त पद भी देखनेमें आये हैं कि जिनमें समास हो जानेपर भी विभक्तिका लोप नहीं होता, ऐसे तत्पुरुष समासको अलुक्-तत्पुरुष कहते हैं ।

द्वितीया—तत्पुरुष अलुक् नहीं होता ।

तृतीया—जनुषान्ध: (जनुषा अन्ध:—जन्म से अन्धा) ।

चतुर्थी—परस्मैपदम्, आत्मनेपदम् ।

पञ्चमी—दूरादागत: (दूरात् आगत:) कृच्छ्रादागत: । स्तोकान्मुक्त: ।

षष्ठी—पश्यतोहर: (पश्यत: हरति—सुनारा), दिवस्पति: (इन्द्र), देवानाम् प्रिय: (मूर्ख), दास्या:पुत्र:, चौरस्यकुलम् ।

सप्तमी—गेहेशूर:, युधिष्ठिर: (युधि स्थिर:), कर्णेजप: (कर्णे जपति—सूचक), खेचर: (पक्षी), पङ्के रोहति=पङ्केरुहम् (कमल) ।

अभ्यास

जनप्रियो राम: प्रजाकामानपूरयत् ।

भरताग्रजो राम: कैकय्यनुरोधेनारण्यमगच्छत् ।

एते प्रजाजना नृपदर्शनोत्सुका वर्तन्ते ।

कोपारुण: कर्ण: अर्जुनरथध्वजम् कर्त्स्यति ।

वनतापसास्तृणशय्या व्यवहरन्ति ।

पूजार्हेषु देवेषु कृष्णस्थान सर्वोत्तमम्-इति कृष्णोपासका: कथयन्ति ।

कोसलेश्वराघवाणां राज्यम्

अपमानास्पदम् ।

मित्रविप्रयुक्तोऽयं वैदेशिको यात्री ग्रामजनान् मार्गं पृच्छति ।

वाहनस्थितो योद्धारीणां भवति भयकारणम् ।

पङ्कक्लिष्टानीमानि वस्त्राणि, एतानि कूपजलेन क्षालय ।

मत्स्यपूर्णस्य तडागस्य तटे केचित् कैवर्तास्तिष्ठन्ति ।

स्वर्गप्राप्तेन युधिष्ठिरेण यमसंवादोऽजायत ।

फलप्रेप्सुर्गोपालः फलक्रयाय नगरापणं गच्छति ।

हितोपदेश आरम्भे कटुः, परम् अन्ते हितसाधको भवति ।

बहवः कलहा अज्ञानकारणाद् एव भवन्ति ।

इनका संस्कृतमें अनुवाद करो—

धूलिसे भरी हुई (धूसरित) भूमिपर मत बैठो ।

राम भरतका भाई था ।

वृक्षसे गिरे हुए आमोंको हम खायें ।

कई लोग विपत्तिका आना भाग्य का दोष समझते हैं ।

संसारमें पुत्रका प्रेम स्वाभाविक होता है ।

सबके कल्याणकी चिन्तासे मनुष्य कल्याण पाता है ।

गोपाल पढ़नेमें मग्न है ।

इच्छा के अनुकूल सुख कौन पाता है ?

इस चील (चिल्ल) की चोंच (चञ्चु) से गिरे हुए चुड़िया के बच्चे (शावक) को यह ऋषि पालेगा ।

सिपाहियोंसे बाँधा हुआ यह पुरुष सचाई जानता है, फिर भी सत्य नहीं कह रहा ।

शिवकुमार संस्कृत भाषामें पण्डित था ।

सफरसे थका (श्रान्तः) हुआ यात्री बड़की छायामें आराम ले रहा है ।

धनके गर्वसे मनुष्य हित और अहितका विचार भूल जाता है ।

ये शहरी (नागरिक) स्त्रियां शिवके मन्दिरको जारही हैं ।

नल जुआ खेलने में निपुण था ।

मृत्युसे डरने वालोंका संग्राम भूमि में कोई काम नहीं ।

झूठ बोलनेसे बहुत दोष हो सकते हैं ।

घड़ा बनाने वाले को कुम्हार कहते हैं ।

धृतराष्ट्र जन्म से अन्धा था ।

अपना कर्तव्य पालने वाले ब्राह्मण पूजाके योग्य होते हैं ।

३—कर्मधारय-समास (Appositional Compound)

१९९—विशेषण और विशेष्यके समासको *कर्मधारय* समास कहते हैं। इस समासमें पूर्वपद विशेषण और उत्तर विशेष्य होता है और दोनों प्रथमान्त रहते हैं। जैसे—नीलम् उत्पलम् = नीलोत्पलम्, कृष्णः सर्पः=कृष्णसर्पः, मूर्खः जनः=मूर्खजनः।

२००—(क) पूर्वपद यदि स्त्रीवाचक हो तो वह *पुंवाचक* बन जाता है। स्त्रीलिंग-वाचक प्रत्यय (आ, ई, ऊ) का लोप हो जाता है। जैसे—सती भार्या—सद्भार्या, पाचकस्त्री, जीर्णा तरिः= जीर्णतरिः (पुरानी नाव)।

(ख) पूर्वपद यदि *महत्* हो तो उसे *महा* हो जाता है। जैसे—महान् देवः=महादेवः। महती सेवा=महासेवा। महद् भयम्= महाभयम्।

बहुव्रीहि समासमें भी महत् को महा हो जाता है, किंतु तत्पुरुषमें महत् महा नहीं होता। महतां सेवा—महत्सेवा।

२०१—(क) यदि पूर्वपद उपमान-वाचक हो और उत्तर-पद विशेषण हो, तो उनके समासको *उपमान-कर्मधारय* समास कहते हैं। ऐसे समासके विग्रहमें उपमान-वाचक पदके साथ इनका प्रयोग करते हैं। जैसे—घनः इव श्यामः=घनश्यामः, हिमम् इव शिशिरम्= हिमशिशिरम्।

(ख) यदि उत्तरपद उपमान-वाचक हो और पूर्वपद उपमेय-वाचक हो तो उनके समासको *उपमित-कर्मधारय* कहते हैं। इसके विग्रहमें भी उपमान-वाचक उत्तरपदके साथ इव लगाते हैं। जैसे—पुरुषः सिंहः इव=पुरुषसिंहः। मुखं चन्द्रः इव=मुखचन्द्रः, करः पल्लवः इव= करपल्लवः।

इस प्रकार कर्मधारय के तीन भेद हुए—विशेषण-विशेष्य कर्मधारय, उपमान-पूर्वपद कर्मधारय, उपमानोत्तरपद (उपमित) कर्मधारय।

वाक्य-रचना

पीतपटं धारयत्ययं शिशुः। नवयौवनेनोन्मत्ताः प्रभूताननर्थान् आचरन्ति।

मम प्रियमित्रं रामदेवः संगीतविद्यायां पटुः।

दीर्घप्रवासाद् अनन्तरं नराणां गृहागमनेच्छा तीव्रा जायते।

अस्य शिशोः अधरपल्लवः अतिमृदुः। रामस्य क्रोधानलेन रावणकुलारण्यम् अनश्यत्। मृद्वनीलानि जम्बुफलानि।

कनकावदातं तस्या मुखम्।

केचन मनुजपशवः गर्ह्यकार्यैरपि न लज्जामनुभवन्ति।

तस्याः दन्तमुकुलानि यः पश्यति, स प्रशंसति। नृपचन्द्रस्य रामस्य दर्शनात् सर्वे हृष्यन्ति।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो

गर्मीके मौसममें लोग बर्फसा ठंडा (हिमशीतल) पानी चाहते हैं, और बिजलीके पंखे (विद्युद्व्यजन) के नीचे पड़ा रहना चाहते हैं।

मेरी बलवती भुजाकी छत्रछायामें तुम्हारा कोई कुछ भी बिगाड़ न सकेगा।

उसके सफेद (श्वेत) कपड़ोंपर काली स्याहीके छींटे (बिन्दु) पड़नेसे वे पहननेके अयोग्य हो गये।

जो काम अच्छा (शुभ) दिन देख कर किया जाता है, प्रायः उसकी सफलतामें कुछ संदेह नहीं होता।

कहते हैं सोये हुए पुरुषको जगानेसे पाप लगता है।

काली रातमें काले मेघोंके गर्जन और बिजलीकी कड़कको सुन कर वह स्त्री डर गई।

इस भोले बच्चेका कमलसा मुख देख कर मुझे बड़ा आनन्द आता है।

शकुन्तलाने लतासी कोमल भुजासे इस मृगके बच्चे (शावक) को पकड़ा हुआ है और वह ज़रा भी नहीं हिलता।

यह बालाके मुखका प्रतिबिंब तालाबके निर्मल जलमें ऐसा प्रतीत होता है जैसे सरोवरमें खिला हुआ कमल।

इस ब्राह्मणके बालकके चांदसे मुखपर तिलक कैसा सुन्दर लग रहा है!

अरे धोबी, मेरे कपड़े काफूरसे सफेद करके लाना, कहीं स्याही (कलिमन्) का एक भी दाग रह गया तो एक भी पैसा न मिलेगा।

बूढ़े राजा दशरथके राज्यमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सब एकसे सुखी थे।

विद्वान होना और राजा होना एक से नहीं हैं।

अनुशीलनी—२८

इनके अर्थ बताकर समस्त पदोंका विग्रह करो और समासके नाम बताओ—

निजात्मजानां पाण्डुपुत्राणां च पुन: विग्रह: न भवेत् इति धृतराष्ट्र: कृष्णोपदेशेन पाण्डवेभ्य: राज्यार्धम् अयच्छत् । देवर्षय: सर्वे सुन्दोपसुन्दयो: दुराचरणै: अखिद्यन्त । कण्वनारदविश्वामित्रा: ऋषय: कृष्णस्य दर्शनेच्छया द्वारिकामगच्छन । स पुत्रस्य शुभोदन्तमाकर्णयत् परमानन्दं चान्वभवत् । नारदप्रेरणया ध्रुव: मधुवनम आगच्छत् । अर्जुन, धीराणां सुख:दुखे, लाभालाभौ, जयाजयौ च समौ, अत: युद्धायोद्यतो भव । शरणागतानां रक्षणं साधूनां परमधर्म: । अङ्गुष्ठहीन:, एकलव्य: अस्त्रप्रयोगेऽसमर्थ: अजायत । गजमृगव्याघ्रश्रृगाला अन्ये च श्वापदा: सिंहान्तिकम् आगच्छन् । धनमदोन्मत्तो नर: यद्यप्यनेकानि पापान्याचरति तथापि सर्वश्लाघितो भवति ।

हे दारिद्र्य, नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्कृपान्वित: ।
सर्वान् पश्याम्यहं देव, न मां कश्चन पश्यति ॥
भवन्ति नम्रास्तरव: फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्नम्रतग: सदा घना: ॥
परोपकाराय सतां विभूतय: ॥
न त्यजन्ति रुतं मञ्जु पिका वायससंगमात् ।
अतृणे पतितो वह्नि:, स्वयमेवोपशाम्यति ॥
न युक्तं कूपखननं प्रदीप्ते वह्निना गृहे ॥
छेत्तु: पार्श्वगतां छायां नोपसंहरते द्रुम: ।
लक्ष्मीवसति जिह्वाग्रे जिह्वाग्रे मित्रबान्धवा: ।
बन्धनं चैव जिह्वाग्रे जिह्वाग्रे मरणं ध्रुवम् ॥
काक: कृष्ण: पिक: कृष्ण: को भेद: पिककाकयो: ।
वसंतकाले सम्प्राप्ते काक: काक: पिक: पिक: ॥
विद्या विनयोपेता हरति न चित्तानि कस्य मनुजस्य ।
काञ्चन-मणिसंयोगान् न जायते कस्य लोचनानन्द: ॥

२—इनका अनुवाद समस्त पदों द्वारा करो—

मेरे हाथसे, नीली गायका, बादलकी तरह काला, कमलकी तरह कोमल, कृपण पुरुषोंका, अपने घरसे, दिवालीके दिनमें, मोहन, गोपाल और देवदत्त के लिए, घने जंगलमें, गहरे कुएँसे।

३—इन वाक्योंमें रिक्त स्थानों में ऐसे पद रक्खो कि परले पदसे मिल कर वे समस्त पद बनें और वाक्य पूर्ण हो जाय।

यशोदायै—वलयं रोचते। रावण:—बाणेन अम्रियत। सारथे, रथे—तुरगौ योजय। अस्य शिशो:—कमलं मां प्रीणयति।

४—समास किसे कहते हैं? उसके कितने भेद हैं? द्वन्द्व और कर्मधारय समासके लक्षण और उदाहरण बताओ। तत्पुरुषके कितने भेद हैं? अलुक् तत्पुरुष और नञ् तत्पुरुषके दो दो उदाहरण दो।

महापुरुष, चतुरकन्या—इनमें कौन कौन विशेष कार्य हुआ है?

५—इनमें सन्धिच्छेद करो—

निजात्मजानाम्, कृष्णोपदेशेन, राज्यार्धम्, देवर्षय:, दर्शनेच्छया, शुभोदन्त:, जयाजयौ, मदोन्मत्त:, फलोद्गमै:, नवाम्बुभि:, जिह्वाग्रे, विनयोपेता।

२—समासप्रकरण—

४—बहुव्रीहि समास

२६५—बहुव्रीहि समास दो वा अधिक पदोंका होता है। यह समास विशेषणका रूप धारण करता है और सदा अपने विशेष्यका बोध कराता है। इसके विग्रहवाक्यमें यत् (सर्वनाम) की प्रथमासे भिन्न किसी न किसी और विभक्तिका रूप अवश्य रहता है और उसके लिंग और वचन समासके विशेष्यके रहते हैं। जैसे—'दत्तधन:' का अर्थ है वह पुरुष जिसे धन दिया हो। इसमें न दत्त पदकी प्रधानता है और न धनकी, प्रधानता है उस पुरुषकी। इसका विग्रह होगा-दत्तं (दिया है) धनं (दौलत) यस्मै (जिसे) स दत्तधन:। महाबाहु:-महान् बाहु: यस्य स:। (बड़ी भुजा जिसकी।)

२६६—बहुव्रीहि समासके विग्रहमें जब सबके सब पद (यत् से भिन्न) प्रथमान्त हों तो उसे सामानाधिकरण बहुव्रीहि कहते हैं। जैसे—सुन्दरं मुखं यस्या: सा सुन्दरमुखी। प्रफुल्लानि कमलानि यस्मिन् तत् प्रफुल्लकमलम् (सर:)।

कर्मधारय भी समानाधिकरण होता है। उसमें भी सब पद प्रथमान्त होते हैं, परन्तु उसमें अन्तिम पद प्रधान रहता है । परन्तु बहुव्रीहिमें अन्य पद प्रधान रहता है। जैसे—यदि हम कहें 'पीताम्बरमानय' तो लानेवाला पीला कपड़ा लायेगा। क्योंकि पीताम्बरका अर्थ है (पीतम् अम्बरम्=पीताम्बरम्, कर्मधारय) पीला कपड़ा। परन्तु यदि कहा जाय कि 'पीताम्बरं हरिमानय।' तो हरिको लायेगा, कपड़ेको नहीं, क्योंकि यही पीताम्बरम् का अर्थ है (पीतम् अम्बरं यस्य, जिसका पीला कपड़ा है, उसको)। इसी प्रकार 'प्रफुल्लकमलम्' का जब अर्थ होगा 'खिला हुआ कमल' तो यह कर्मधारय समास होगा और जब इसका अर्थ होगा 'खिले हुए कमलोंका तालाब' तब यह बहुव्रीहि होगा।

२६७—बहुव्रीहि समासके विग्रहमें जब सबके सब पद भिन्न भिन्न विभक्तियोंके हो तो उसे व्यधिकरण बहुव्रीहि कहते हैं। जैसे—चक्रं पाणौ यस्य स चक्रपाणिः। दण्डः हस्ते यस्य स दण्डहस्तः। कण्ठे कालः यस्य स कण्ठेकालः । (यहाँ कण्ठे की विभक्तिका लोप नहीं होता)।

२०२—बहुव्रीहि समासमें सप्तम्यन्त पद, विशेषण, सर्वनाम और क्तान्तपद समासके पूर्व रहते हैं। जैसे—सप्तम्यन्त पद, कण्ठे कालः यस्य स कण्ठेकालः। (हस्तवाचक शब्द पहले नहीं रहते।) **विशेषण**, विचित्रा आकृतिः यस्य स विचित्राकृतिः। **सर्वनाम**, सर्वं श्वेतं यस्य स सर्वश्वेतः। क्तान्त, कृतं कृत्य येन स कृतकृत्यः।

बहुव्रीहि समासके ये प्रधान प्रकार हैं।

द्विपद, बहुपद, संख्योत्तरपद, संख्योभयपद, सहपूर्वपद।

१—द्विपद—आरूढः वानरः यं स आरूढवानरः (वृक्षः)। उद्धृतः असिर्येन स उद्धृतासिः (योधः)। उपहृतः पशुः यस्मै स उपहृतपशुः। निर्गताः जनाः यस्मात् तत् निर्गतजनं (नगरम्)। सुन्दराणि फलानि यस्य स सुन्दरफलः (वृक्षः) विद्यमानं जलं यस्मिन् तत् विद्यमानजलं (सरः)।

२०३—यदि किसी क्तान्त पदके पूर्व कोई *उपसर्ग* **जुड़ा हो तो क्तान्त पदका विकल्पसे** *लोप* **हो जाता है। जैसे—**

१—द्विपद—प्रपतितानि पर्णानि यस्य स प्रपतितपर्णः [प्रपर्णः] वृक्षः। प्रकृष्टा छाया यस्मिन् तत् प्रकृष्टच्छायम् [प्रच्छायम्] उद्यानम्। निर्गता घृणा यस्मात् स निर्गतघृणः [निर्घृणः] पुरुषः। निर्गतं तेजो यस्य स निर्गततेजाः [निस्तेजाः] पुमान्।

२—बहुपद—पराक्रमेण उपार्जिता संपद् येन स पराक्रमोपार्जितसम्पद् [पुरुष:] । नयनाभ्याम् ईक्षितं दृश्यमनेन स नयनेक्षितदृश्य: ।

३—संख्योत्तरपद—दशानां समीपे [उप] ये सन्ति ते उपदशा: ।

विंशते: आसन्ना: आसन्नविंशा: । चत्वारिंशत: अधिका: अधिकचत्वारिंशा:

(हलन्त संख्यावाचकोंके अन्तिम हल् और विंशति के ति का लोप हो जाता है। शेष संख्यावाचकोंके अन्तिम स्वरको अ हो जाता है।)

४—संख्योभयपद—द्वौ वा त्रयो वा द्वित्रा: । द्वि: आवृत्ता: दश द्विदशा: ।

५—सहपूर्वपद—सह तृतीयान्त पदके साथ समस्त होता है और सह को विकल्पसे स हो जाता है। पुत्रेण सह वर्तमान:—सपुत्र:, सहपुत्र: । अनुजेन सह वर्तमान:=सानुज:, सहानुज: ।

जिनके ई या ऊ को क्रमश: इय् या उव् न होता हो उनके तथा ऋ-अन्त समस्त पदोंके अन्तमें क जोड़ा जाता है। बहुनदीक: [देश:], रूपवद्वधूक:, ईश्वरकर्तृकम् ।

द्विगु (Numeral Appositional Compound)

२०४—जिस समासमें *समाहार* (Collective idea, Aggregate) का बोध हो और उसका पूर्व पद *संख्यावाचक* हो, उसे *द्विगु* समास कहते हैं।

द्विगु समासके अन्तमें नपुंसकलिंग और एकवचन आता है। जैसे—चतुर्युगम् । इसमें चतुर् का युग के साथ समास है। इसका विग्रह है—चतुर्णां युगानां समाहार:—चतुर्युगम् । त्रयाणां भुवनानां समाहार:-त्रिभुवनम् । पञ्चानां रात्रीणां समाहार:-पञ्चरात्रम् , पञ्चपात्रम् , पञ्चगवम् ।

२०५—*अकारान्त* द्विगु कभी कभी *ईकारान्त* हो जाता है।

ईकारान्त होने पर यह नदीवत् स्त्रीलिंगमें होता है। यथा—त्रयाणां लोकानां समाहार:-त्रिलोकी। शतस्य अब्दानां समाहार:-शताब्दी। सप्तानां शतानां समाहार:-सप्तशती, अष्टानाम् अध्यायानां समाहार:-अष्टाध्यायी ।

अव्ययीभाव (Adverbial Compound)

२०६—अव्ययीभाव समास उन दो पदोंमें होता है जिनमें पहला पद प्रायः अव्यय होता है और दूसरा नाम।

दोनों पद समस्त होकर अव्यय बन जाते हैं और उनके अन्तमें सदा नपुंसकलिंगकी प्रथमाका एकवचन रहता है।

इस के विग्रहमें अव्ययके स्थानपर प्रायः उसके अर्थका ही प्रयोग किया जाता है। यथा—विष्णोः पश्चात्—अनुविष्णु। मक्षिकाणाम् अभावः निर्मक्षिकम्।

२०७—अव्ययीभाव समस्त पदके अन्तका दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है।

(आ, ई, ऊ को क्रमशः अ, इ, उ, ए, ऐ को इ और ओ, औ. को उ होता है।)

लतानां पश्चात्—अनुलतम्। नद्याःसमीपे—उपनदि (उपनदम् भी होता है।) गवां पश्चात्—अनुगु।

अव्ययीभावके कुछ उदाहरण

हरौ—अधिहरि (विभक्त्यर्थ)। कृष्णस्य समीपम उपकृष्णम् (समीप)। मक्षिकाणाम् अभावः निर्मक्षिकम् [अभाव]। हिमस्य: अत्ययः अतिहिमम् [समाप्ति]। अतियौवनम्। रथस्य पश्चात्–अनुरथम् [पश्चात्]। चक्रेण युगपत्–सचक्रम् (यौगपद)। अहनि अहनि प्रत्यहम् [वीप्सा]। प्रतिग्रामम्। शक्तिम् अपि अनतिक्रम्य—यथाशक्ति, यथाबलम्। अक्ष्णोः समीपे–समक्षम्। अक्ष्णोः प्रति=प्रत्यक्षम्, परोक्षम्।

अभ्यास

ससीतालक्ष्मणो रामः कतिपयान्यहानि पञ्चवट्यामुषित्वा ततः प्रातिष्ठत। समाही जातस्ते कृतप्रतिज्ञस्य अधुनापि प्रतिज्ञातं न पूरितं भवता। आश्विनस्य चैत्रस्य चाद्ये नवरात्रे दुर्गामहोत्सवः भवति। प्रफुल्लिताम्भोजेऽत्र सरसि सारससमूहः मधुरं रौति। महाबाहुना वृकोदरेण भीमेन निकृत्तशिरसो दुर्योधनसहोदराः रणांगणे पतिता वर्तन्ते। पीताम्बरं, पल्लवकरं, सुभुजं, चारुनेत्रं हरिं भजेयम् हरिहरः भुवन्। अष्टाध्याया पाणिनिप्रणीता अद्यापि संस्कृतशब्द-

शास्त्रे उन्नतमं पदमारोहति । तस्यां सभायामासन्नचत्वारिंशा: श्रोतारोऽविद्यन्त । आङ्गलानां भारते कृतप्रवेशानां केवलं काश्चित् शताब्य: एव संजाता: । सत्यं, द्वापर:, त्रेता, कलिश्चेति चतुर्युगम् । स्वर्गः, मर्त्य:, पाताल इति त्रिभुवनम् ।

भक्त्या हि तुष्यन्ति महानुभावा: ।
उत्पद्यन्ते विलीयन्ते निर्धनानां मनोरथा: ।
असिद्धार्था निवर्तन्ते नहि धीरा: कृतोद्यमा: ॥
अल्पबीजं हतं क्षेत्रं अल्पविद्यो महामद: ॥
अभक्तीकृतशक्ति: शक्तोऽपि जनस्तिरस्क्रियां लभते ।
अपि धन्वन्तरिर्वैद्य: किं करोति गतायुषि ॥
प्रत्यहं पर्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मन: ॥
उपानद्गूढपादस्य ननु चर्मावृतेव भू: ॥
भिक्षुकक्षाविनिक्षिप्त: किमिक्षुर्नीरसो भवेत् ॥
यस्य नास्ति विवेकस्तु केवलं यो बहुश्रुत: ।
न स जानाति शास्त्रार्थान् दर्वी पाकरसानिव ॥

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो:—

प्राचीन कालमें महाराज दशरथ एक ऐसा राजा था जिसकी आज्ञाको कोई नहीं टाल सकता था ।

स्वामी दयानन्दकी सौवरसी (शताब्दी) के उत्सवपर अनगणित लोग ऐसे भी थे जिनका आर्य-समाजसे कोई सम्बन्ध न था ।

राजाके पास जाकर उस स्त्रीने, जिसका कोई सहायक न था, अपनी ददभरी (दर्दभरी) कहानी सुनाई ।

मृत्युपर्यन्त (आमरणम) संसारके सुख दुःख रहते हैं परन्तु मृत्युके पश्चात् उनसे मुक्ति मिल जाती है ।

यह जंगल गंगाके किनारेके साथ कोसों चला जाता है ।

इस नगरमें तीन घर ऐसे लोगोंके हैं जिन्हें धनकी कमीका अनुभव नहीं होता। वरना (अन्यथा) शेष सब ऐसोंके हैं जिन्हें दिनमें एक बार भी भरपेट भोजन नहीं मिलता ।

इस पाठशालामें लगभग चालीस, लड़के और चालीससे ज्यादा

लड़कियां पढ़ती हैं, तो भी अध्यापक तीन चार ही हैं।

देखो उस चौराहे (मनुष्पथ) पर इतने लोग क्यों जमा हैं ?

इस फूलकी गन्ध कमलकी तरह है और इसका वर्ण भी लाल है; तो भी यह कमल नहीं हैं।

जिस पुरुषका चित्त निराश हो जाता है वह कोई काम दिलसे नहीं कर सकता।

युद्धमें जिनके हाथ पांव कट जाते हैं वे निकम्मे (निष्क्रिय) हो हो जाते हैं, उन्हें सरकारसे गुज़ारे (आजीविका) के लिए कुछ न कुछ मिलता है।

जब सूरजकी रोशनी तेज़ होती है तो उसके सामने कोई देख भी नहीं सकता।

बागमें जब आम बौरने (मञ्जरित) लगते हैं तो कोयलें आकर उनपर मीठे स्वरसे गाती हैं।

अनुशीलनी—२६

१—बहुव्रीहि और अव्ययीभाव समासोंके लक्षण और उदाहरण भी बताओ।

२—बहुव्रीहि और कर्मधारयमें क्या भेद है ? उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करो।

३—समानाधिकरण बहुव्रीहि और व्यधिकरण बहुव्रीहिका भेद सोदाहरण बताओ।

४—संख्योत्तरपद बहुव्रीहि, संख्योभयपद बहुव्रीहि, सहपूर्वपद बहुव्रीहि, इनके उदाहरण लिखो।

५—अक्षि को अक्ष और गन्ध को गन्धि कब होता है ?

६—तीन ऐसे द्विगुसमस्त पद बताओ जिनके अन्तमें ई हो।

७—इन समस्तपदोंका विग्रह करो :—

अन्वक्षम्, उपवनम्, यथाबलम्, सशस्त्रम्, त्रिपथम्, परोक्षम्, पञ्चरात्रम्, व्यूढोरस्कः, रामाभिधः, युधिष्ठिरादयः, मृगाक्षी, पूर्णकामा, निकृत्तारातिशिराः, रम्याकृतयः, अवाप्तभगवत्कृपाः, बहुधनः।

८—इनके लिए समस्त पद दो :—

जिसके पास बहुत धन है, जिसका चित्त ठिकाने नहीं, जिन दोनोंने युद्ध कर लिया है, जिसके हाथ कट गए थे, चमकते हुए चांद वाली, मरी हुई माता

वाली, चार मुखों वाला, लम्बी पूंछ वाला, नदीके पास, रथके पीछे, किनारे किनारे, लोगोंके पीछे।

कारकप्रकरण-२

पीछे कहा गया है कि विभक्ति दो प्रकार की होती है—कारक-विभक्ति और उपपद-विभक्ति। कारक छः होते हैं—कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण। यहां पर प्रत्येक कारकका लक्षण, विशेष प्रयोग और उपपद विभक्तियोंके प्रयोग बताये जाते हैं—

प्रथमा—

२०८—(क) क्रियाका *उक्त कर्ता* (कर्तृवाच्यमें कर्त्ता) *प्रथमामें* होता है। यथा—देवः पठति। कुक्कुटौ युध्येते। बालाः हसन्ति।

(ख) किसी शब्दको बताना हो तो उसे *प्रथमान्त* लिखते हैं। यथा—देवः, हरिः, घटः।

(ग) किसी शब्दके लिङ्गका ज्ञान कराना हो तो उसके अन्तमें उस लिङ्गकी *प्रथमाका एकवचन* रखते हैं। तटः, तटी, तटम्।

(घ) परिमाणका बोध कराना हो तो परिमाणवाचक शब्दके अन्तमें *प्रथमा* लगाते हैं। द्रोणः, प्रस्थम्।

(ङ) क्रियाका *उक्तकर्म* (कर्मवाच्य क्रियाका कर्म) *प्रथमामें* होता है। जैसे—कृष्णेन हतः कंसः। रामलक्ष्मणाभ्यां प्रविष्टा लङ्का।

(च) संबोधन *प्रथमामें* होता है। हे राम, भो बालाः।

(छ) अव्यय के साथ *प्रथमा* होती है। जैसे—दशरथो नाम (इति) राजा आसीत्। विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयम् छेत्तुमसाम्प्रतम्।

द्वितीया

२०९—(क) क्रियाका *अनुक्त कर्म* (कर्तृवाच्य क्रियाका)

द्वितीयामें होता है। जनाः चन्द्रं पश्यन्ति।

(ख) किसी देश, काल वा मार्गवाचक शब्दके साथ द्वितीयान्त कर्म आता है, यदि क्रियाबोधित कार्यमें कोई व्यवधान न हो। यथा—स सर्वां रात्रिं कूजन् अस्वपत्। क्रोशं गिरिः तिष्ठति। देवः त्रीन् दिवसान मद्‌गेहे न्यवसत्।

(ग) गत्यर्थ धातुओंके योगमें जिधर गति हो तत्स्थानवाचक शब्दके साथ चेष्टा के अर्थमें द्वितीया या चतुर्थीका प्रयोग होता है। यथा—नगरं नगराय वा गच्छति। परन्तु मनसा हरिं व्रजति।

उपपदविभक्ति

२१०—इन पदोंके योगमें द्वितीया आती है।

[१] उभयतः (दोनों ओर), परितः, सर्वतः, अभितः (सब तरफ)। यथा—उभयतः पन्थानं वृक्षश्रेणी वर्तते। गुरुं परितः (सर्वतः) शिष्याः तिष्ठन्ति।

[२] धिक् (धिक्कार)। यथा—धिक् तान् ये पित्रोरादेशम् अवमन्यन्ते।

[३] समया, निकषा (समीप)। यथा—वासुदेवं समया ऽर्जुनः बद्धाञ्जलिरतिष्ठत्।

[४] अन्तरेण (विना, संबन्धमें)। यथा—त्वामन्तरेण को मे वराकस्य रक्षकः। नृपमन्तरेण प्रजानाम् किं मतम्?

[५[विना (बगैर)। यथा—विना ईश्वरभक्तिं न मुक्तिः। (विनाके साथ तृतीया या पञ्चमी भी आती है।)

(६) प्रति (ओर)। यथा—गृहं प्रति चलितः।

[७] अनु (पीछे)। यथा—जपम् अनु प्रावर्षत्।

[८] अभि (समीप)। यथा—ग्रामम् अभि वर्तते कूपः।

२११—कुछ धातुओंके साथ दो कर्मोंका प्रयोग हो सकता है। उनमें एक कर्म *मुख्य* (Direct) रहता है और दूसरा *गौण* (Indirect)। गौण कर्मको सङ्गत अर्थके अनुसार किसी दूसरी विभक्तिमें भी रखा जा सकता है। द्विकर्मक धातु ये हैं—

दुह् याच् पच् दण्ड् रुधि (रुध्) प्रच्छि (प्रच्छ्) चि ब्रू शासु (शास्) जि मन्थ् मुषः।

नी हृ कृष् वह् इत्येते धातवः स्युर्द्विकर्मकाः॥

इन धातुओंके अर्थोंके यदि कोई और धातु होंगे तो वे भी द्विकर्मक होंगे। यथा—ब्रू धातुका अर्थ कहना है, अतः कथ्, भाष् आदि 'कहना' अर्थके धातु भी द्विकर्मक होंगे।

गोपालः गां (गोः) पयो दोग्धि। भिक्षुकः धनिकं (धनिकात्) भोजनं याचते (भिक्षते)। सूदः गोधूमम् (गोधूमस्य) अपूपं पचति। नृपः चौरं (चौराय) शतं दण्डयति। व्रजम् (व्रजे) अवरुणद्धि गाम्। पान्थः तं नरं (नरात्) पन्थानं पृच्छति। वृक्षम् (वृक्षस्य) पुष्पाणि अवचिनोति। यतिः गृहस्थान् (गृहस्थेभ्यः) धर्मं ब्रूते, (शास्ति)। द्यूतकारः तं नरं (नरात्) शतं जयति। यशोदा पयः (पयसः) नवनीतं मथ्नाति। स कितवः तम् अध्वगं (अध्वगात्) सर्वं धनम् अमुष्णात्। अजापालः अजान् ग्रामं [ग्रामाय] नयति—वहति—कर्षति।

२१२—यदि द्विकर्मक क्रियाको कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्यमें बदलना हो तो दुह् से मुष् पर्यंत धातुओंका *गौणकर्म* और नी हृ, कृष्, वह् धातुओं का *मुख्यकर्म प्रथमामें* बदल जाता है।

यथा—

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
गां पयः दोग्धि।	गौः पयः दुह्यते।
शतं जयति देवदत्तम्।	देवदत्तः शतं जीयते।
गोपः अजां ग्रामं नयति।	गोपेन अजा ग्रामं नीयते।

अभ्यास

विना परिश्रमके कभी किसीका कोई भी काम सफल हुआ है जो दैवका होता ?

इस नदीके दोनों ओर इतने घने वृक्ष हैं कि यदि कोई उनमें रास्ता भूल जाय तो निकलना कठिन होगा।

धिक्कार है उन दुष्टोंको जो शत्रुओंसे मिलकर अपने देशको हानि पहुंचाते हैं।

जब वह घरकी ओर चला तो मित्रोंके वियोगसे उसकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा बहने लगी।

इस गांवके पास एक शीतल जलवाला कुआँ है, जहांपर यात्री लोग अपनी प्यास बुझाते हैं।

ग्वाला इस गायका दूध दोह कर इस शहरमें बेचेगा।

छात्र गुरुसे पाठ पूछ कर उसे याद कर रहा है।

तृतीया

२१३—[क] *करणमें* तृतीया *विभक्ति* आती है। करण दो प्रकार का है—वाह्य और आभ्यन्तर। शरीरावयव आभ्यन्तर करण है और उससे भिन्न वाह्य। यथा—(आभ्यन्तर) भक्तः मनसा हरिं भजति। स करेण संकेतयति। चक्षुषा पुस्तकम् अवलोकयति। पादाभ्यां चलति। (वाह्य) दण्डेन कुक्कुरं ताडयति।

[ख] *अनुक्तकर्ता* (कर्मवाच्य क्रियाका कर्ता) *तृतीयामें* आता है यथा—तया गृहिण्या गृहकार्याणि सुचारु निष्पाद्यन्ते। अर्जुनेन कर्णः हतः।

[ग] *मार्ग* वा *समयके* बोधक शब्दोंमें तृतीया होती है, यदि अभीष्ट कार्य उस मार्ग वा समयमें समाप्त हो गया हो। यथा—

२१३—(क, ख) कर्तृकरणयोस्तृतीया। (ग) अपवर्गे तृतीया

अह्ना मया अष्टाध्यायी समाप्ता। निरन्तरं चलता तेन क्रोशेन इदं पुस्तकम् अधीतम्।

[घ] यदि *अङ्ग*में *विकार* बताना हो उसमें तृतीया आती है। यथा—अक्ष्णा काणोऽयं गर्दभः। शिरसा खल्वाटोऽयं वणिक्। कर्णाभ्यां बधिरोऽसौ बालः।

[ङ] किसी *चिह्न* वा लक्षणके द्वारा यदि किसीका ज्ञान कराना हो, तो लक्षणवाचक शब्दमें तृ*तीया* आती है। यथा—जटाभिः असौ तापसः प्रतीयते। शिखया असौ हिन्दुः।

[च] जिसके नामसे *शपथ* ली जाती है, उस नामके वाचक शब्दमें तृ*तीया* आती है। जैसे—भगवच्चरणैः शपे यदहं नापराधी।

[छ] *मूल्यवाचक* शब्दके साथ तृ*तीया* या चतु*र्थी* आती है। जैसे—चतुर्भि रूप्यकैः क्रीतं पुस्तकम्। सहस्राय रूप्यकेभ्यः क्रीतं मया गृहम्।

(ज) किसी कार्यका *हेतु* बतानेमें भी तृ*तीया* आती है। जैसे—पुण्येन दृष्टः भवान्। स पठनेन काशीं प्रचलितः।

[झ] *किम्*, *कार्यम्* *प्रयोजनम्* इनके योगमें तृ*तीया* आती है। जैसे—तस्य धनेन किं यो न ददाति। तृणेन कार्यं भवतीश्वराणाम्। कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान्। बलवतां निर्बलैः न प्रयोजनम्।

[ञ] *हीन*, *न्यून* आदिके योगमें तृतीया आती है। जैसे—धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः। त्रिभिर्माषैर्न्यूनमिदं रजतखण्डम्।

उपपदविभक्ति

२१४—[क] सह [*साथ*] और इसी अर्थ के अन्य पद *साकम्*,

(घ) येनाङ्गविकारः। (ङ) इत्थम्भूतलक्षणे। (ज) परिक्रयणे सम्प्रदानमन्यतरस्याम। (झ) हेतौ। २१४—(क) सहयुक्तेऽप्रधाने।

सार्धम्, समम् के योगमें *तृतीया* आती है। जैसे—आर्यः शिष्यैः साकम् अरण्यं याति। रामेण सह जानकी प्रचलिता। मया समं को युद्धक्षेत्रं प्रति प्रस्थातुमुद्यतः।

[ख] अलम् [बस] और कृतम् (बस) के योगमें *तृतीया* आती है। जैसे—अलं महीपाल, तव श्रमेण। कृतमेवंविधैः प्रलापैः।

अभ्यास

जिस प्रकार कृष्णसे अपना मामा कंस मारा गया, उसी प्रकार अर्जुनसे अपना ही भाई कर्ण यमलोक भेजा गया।

मैंने एक ही दिनमें साल भरका पढ़ा हुआ पाठ दोहरा लिया।

देखो कैसा दैवी घटना है कि इस अवसरपर ये जो तीन नर एकत्र हुए हैं इनमें एक आंखका काना, दूसरा कानोंका बहिरा और तीसरा टांगका लंगड़ा है।

यह भिखारी नहीं, लंबी लंबी जटाओंसे कोई साधु प्रतीत होता है।

कचहरीमें उस दुष्टको अपने लड़केकी शपथ लेते हुए ज़रा भी संकोच न हुआ।

इसने अपनी बाईसिकल एक सौ तीस रुपयोंसे खरीदी है और मैंने केवल पचपनसे।

उस मनुष्यका क्या प्रयोजन जो समयपर धोखा दे जाय।

जब मैं घरसे चला तो मेरे साथ मेरा फुफेरा भाई और मासीकी लड़की भी थी।

इन बातोंको छोड़ो, इनसे मेरे कान फटे जा रहे हैं।

चतुर्थी

२१५—[क] *सम्प्रदान* में *चतुर्थी* आती है। जैसे—ब्राह्मणाय गां ददाति। न शूद्राय मतिं दद्यात्।

२१६—इन धातुओंके साथ *चतुर्थी* आती है।

[क] रुच् और स्वद् [अच्छा लगना] के योगमें, जिसे अच्छा लगे, उसमें—मह्यं रोचते तक्रम्। रामाय स्वदते यवागूः।

[ख] धृ [ऋणी होना to owe] के प्रयोगमें उत्तमर्ण [creditor] में—मोहनः मह्यं शतं धारयति।

[ग] क्रुध् के योगमें—पिता पुत्राय क्रुध्यति।

(क्रुध् से पूर्व उपसर्ग होगा तो द्वितीया होगी। किं मां संक्रुध्यसि ?)

[घ] द्रुह् [बुराई करना] के योगमें—रावणो रामायाद्रुह्यत्।

[ङ] कहना-अर्थ वाले *कथ्, ख्या, शंस्* आदि धातुओंके योगमें—कथयामि ते तुभ्यम् (वृत्तम्)। शंस मे [मह्यम्] तस्य प्रवृत्तिम्।

[च] भेजना-अर्थ वाले *प्र-हि* और *वि-सृज्* धातुओंके योगमें, जिसकी ओर भेजा जाय, उसमें—रामेण दूतो भरताय विसृष्टः। पित्रे इमं सन्देशं प्राहिणोत्।

उपपद-विभक्ति

२१७—इन पदोंके साथ *चतुर्थी* आती है।

[क] *अलम्* [समर्थ] और इसी अर्थके अन्य पद *प्रभुः, समर्थः, शक्तः* -आदि के योगमें। अलम् अहम् अस्मै दुष्टाय। शक्तोऽसि तस्मै दुस्साध्यायापि कार्याय। प्रभुर्मल्लो मल्लाय।

[ख] *नमः* के योगमें—नमः शङ्कराय।

[ग] *स्वस्ति* [कल्याण] के योगमें—स्वस्ति प्रजाभ्यः।

[घ] *स्वाहा* [अग्नि द्वारा देवताओंको बलि देनेमें प्रयुक्त] के योगमें—इन्द्राय स्वाहा।

स्वधा (मृत पितरोंको बलि देनेमें प्रयुक्त) के योगमें—पितृभ्यः स्वधा।

२१६—(क) रुच्यर्थानां प्रीयमाणः। (ख) धारेरुत्तमर्णः। (ग—च) क्रुध-द्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यम्प्रति कोपः। २१७—(क-घ) नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगाच्च।

अभ्यास

विश्वामित्रने यज्ञ आरंभ करनेसे पहले रामको अनेक तरहके अस्त्रोंके चलानेकी विद्या दी।

मुझे तो भाई, आम इतने अच्छे नहीं लगते जितने अंगूर।

मैंने इस साहूकारके तीन सौ रुपये अब भी देने हैं, जो मैंने अपने विवाह पर खर्च करनेके लिए लिए थे।

रावणने रामसे द्रोह किया तो उसका नाश हुआ।

मैं अकेला ही इस दुष्टको दंड देनेको काफी हूँ।

घरसे चलनेसे पहले देवदत्तने एक नौकर भाईकी ओर भेजा कि वह उसे भी बुला लाये।

इस बेचारेका पिता सदा इसपर क्रोध करता रहता है, यद्यपि इस जैसा पितृभक्त कोई ही होगा।

पञ्चमी

२१८—*अपादानमें पञ्चमी* आती है। अपादान दो प्रकार का होताहै—चल और अचल। (चल) धावतो गजात् पतत्याधोरणः। कम्पमानात् वृक्षात् पुष्पाणि पतन्ति। (अचल) गृहाद् आगच्छति। पर्वताद् अवतरति केसरी।

२१९—(क) *जुगुप्सा* (घृणा), *विराम* और प्रमाद—अर्थ वाले धातुओंके योगमें *पञ्चमी* होती है। जैसे—पापाद् जुगुप्सते ईश्वरभक्तः। विरमास्माद् दुस्साहसात्। स्वधर्मात् प्रमाद्यन्ति दुर्जनाः।

(ख) *भय, लज्जा और निवारण* (हटाना) अर्थके धातुओंके योगमें *पञ्चमी* होती है। जैसे—शूराः यमाद् अपि न बिभ्यति। कुलटाः परपुरुषेभ्योऽपि न लज्जन्ते। यवेभ्यः गां निवारय।

(ग) जिन धातुओंका अर्थ *उत्पन्न होना* (जन्, प्र+भू)

२१६—(क) जुगुप्सा-विराम-प्रमादार्थानामुपसंख्यानम्। (ख) भीत्रार्थानां भयहेतुः। वारणार्थानामीप्सितः। (ग) जनिकर्तुः प्रकृतिः। भुवः प्रभवः।

है, उनके योगमें *पञ्चमी* आती है। जैसे—गोमयाद् वृश्चिका जायन्ते। हिमवतः जाह्नवी प्रभवति।

(घ) यदि किसी वस्तुका किसी दूसरी वस्तुसे *विनिमय* (तबदीली) हो तो जिससे विनिमय होता है, उसमें *पञ्चमी* होती है। जैसे—तण्डुलेभ्यः कार्पासं प्रतियच्छति।

उपपद-विभक्ति

२२०—इन पदोंके साथ पञ्चमी आती है—

(क) *अन्य, इतर* (दूसरा) के योगमें--सुमित्राद् अन्यः (इतरः) को मां विपदः उद्धरेत।

[ख] *आरात्* [समीप] के योगमें--आराद् मे गृहात् एकः कूपः।

[ग] *ऋते* [बिना] के योगमें--श्रमादृते विद्या नायाति। [ऋते के योगमें द्वितीया भी आती है। ज्ञानम् ऋते न सुखम्।]

[घ] *प्रभृति* (लेकर), *आरभ्य* (लेकर) के योगमें—भीमवासरात् प्रभृति [आरभ्य] मया स्वाध्यायः न कृतः।

[ङ] *बहिः* (बाहर) के योगमें—ग्रामाद् बहिः सुरम्यं देवायतनम्।

[च] *अनन्तरम्* (पश्चात्), *परम्* (पश्चात्) के योगमें—यौवनाद् अनन्तरं वार्धकम्। अस्मात् ग्रामात् परं मे निवासः।

[छ] *पृथक्, विना, नाना* के योगमें द्वितीया, *तृतीया* वा *पञ्चमी* आती है। पृथग् ईश्वरभक्तिं न मुक्तिः। विनोद्योगेन कार्यसिद्धिः न भवति। नाना नारीं निष्फला लोकयात्रा।

अभ्यास

घरके शिखरपर पतंग उड़ाते उड़ाते वह वहांसे गिरकर मर गया।

२२०—(क-च) अन्यारादितरर्ते दिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते।
(छ) पृथग्विनानानाभिस्तृतीयान्यतरस्याम्]।

जो ईश्वरपर श्रद्धा रखते हैं वे पापसे घृणा करते हैं और अपने कर्तव्यसे प्रमाद नहीं करते।

जो वास्तविक शूर होते हैं वे शत्रुओंसे तो क्या, यमसे भी नहीं डरते।

इस स्त्रीने फटे पुराने कपड़ोंसे एक सुन्दर पिटारी बदली है।

आजकल मेरे घर ऐसी विपत्ति आई है कि ईश्वर ही इससे मुझे बचाये तो बचाये।

जैसे बचपनके बाद जवानी आती है, वैसे ही जवानीके भी बाद बुढ़ापा आता है।

शनिवारसे लेकर शुक्रवार तक मैंने निराहार व्रत रक्खा, जलका एक बूंद तक नहीं पी।

सप्तमी

२२१—*अधिकरणमें सप्तमी* आती है । जैसे—तिलेषु तैलं विद्यते। कटे आस्ते। वनेषु सिंहाः विचरन्ति।

[क] *समुदायमें* से यदि किसीको *चुना जाय* तो समुदाय-वाचक पदमें *सप्तमी* अथवा *षष्ठी* होती है। जैसे—नृपु (नृणां) द्विज उत्तमः। अकिञ्चनेषु अल्पधनः श्रेयान्। मूर्खेषु अल्पज्ञः उत्तमः। कवीनां (कविषु) कालिदासः श्रेष्ठः।

[ख) *स्निह् , अनुरञ्ज्* (प्रेम होना,) *अभिलष्* (इच्छा करना *रम्* (इच्छा करना) *विश्वस्* -इन धातुओं के योगमें *सप्तमी* आतीहै। जैसे—पिता पुत्रे स्निह्यति। अशुद्धप्रकृतौ नृपे जनता न अनुरज्यते। तापसकन्यायां ममाभिलाषः। प्रभुः भृत्ये न विश्वसिति।

भावे (सति) सप्तमी

२२२—यदि किसी कार्यके होनेका समय किसी दूसरे

२२१—(क) यतश्च निर्धारणम्।

२२२—यस्य च भावेन भावलक्षणम्। षष्ठी चानादरे।

कार्यके समयसे जाना जाय तो दूसरे कार्यके *कर्तामें सप्तमी* होती है और उस (दूसरे) कार्य की क्रिया कृदन्त होती है जिसका लिंग, विभक्ति (सप्तमी) और वचन कर्ता (सप्तम्यन्त) के अनुसार होते हैं। जैसे—पुत्रे मृते स संसारात् विरक्तोऽभवत् । इस वाक्यमें उसकी संसारसे विरक्ति का काल उसके पुत्रकी मृत्युके कालसे ज्ञात होता है। अतः 'पुत्र' में सप्तमी और उसकी कृदन्तक्रिया 'मृत' में भी सप्तमी और 'पुत्र' के अनुसार लिंग और वचन हैं। ऐस वाक्योंमें कृदन्त क्रियाके साथ उसके लिंग और वचनके अनुसार 'सत्' शब्दका प्रयोग करते हैं। इसीलिये इसे 'सति सप्तमी' कहते हैं। जैसे—पुत्रे मृते सति स निराशोऽभवत्। रावणादिषु पराजितेषु (सत्सु) रामः लङ्कां प्राविशत्। जानक्यां भूमौ प्रविष्टायां (सत्यां) रामः शोकार्त्तोऽभवत् ।

ऐसे वाक्यों में यदि अनादर *अवधीरण* (disregard) का बोध कराना हो तो सप्तमी या *षष्ठी* होती है। जैसे—पश्यति गुरौ वा पश्यतो गुरोः (पश्यन्तं गुरुमनादृत्य) शिष्येणाविनयः कृतः।

सप्तमी और षष्ठी का प्रयोग 'यद्यपि' के अर्थमें होता है । जैसे—प्रलपति दशरथे (प्रलपतः दशरथस्य) राघवोऽयोध्यामत्यजत् ।

अभ्यास

घर जल जाने पर वह बेघर हो गया और निराश होकर परदेश चला गया।

कर्णके मर जानेपर कुन्तीने ऐसा विलाप किया कि उसे सुनकर पत्थर भी मानों पिघल गये।

मैं उसे रोकता रहा तो भी उसने अपनी मनमानी की, तभी तो उसका उसे ऐसा फल मिला है।

कहते हैं मनुष्यमात्रमें ब्राह्मण उत्तम होता है, क्योंकि सबकी शिक्षाका भार उसीपर होता है।

शकुन्तलासे दुष्यन्तको इतना स्नेह हो गया था कि वह आश्रमको छोड़नेका नाम भी न लेता था।

जैसे तिलोंमें तेल व्यापक है उसी तरह ईश्वर भी सर्वत्र व्यापक है।

षष्ठी

२२३—षष्ठीको अन्तमें इसलिए रखा है कि इसे कारक नहीं माना जाता। इसके द्वारा संज्ञाओंमें *सम्बन्धका बोध* होता है, क्रिया के साथ नहीं। जैसे—जनकस्य दुहितरम् दशरथस्य पुत्रः परिणीतवान्।

२२४—*विधि-कृदन्तों* (तव्य, अनीय, य) के साथ *तृतीया* वा *षष्ठी* आती है। जैसे—मया (मम) सेव्यो हरिः। त्वया (तव) गृहं गन्तव्यम्।

२२५—*तुल्यार्थ* शब्दोंके साथ *तृतीया* वा *षष्ठी* आती है। जैसे—मात्रा (मातुः) सदृशी इयं बाला।

अभ्यास

तुझे यह काम आज करना ही पड़ेगा।

यह बालिका आकृतिसे अपनी माताके सदृश मालूम होती है।

रामका भाई मेरा चाचा और मोहनका भतीजा लगता है।

कई बार घरके लोगोंसे मनुष्यका इतना प्रेम नहीं होता जितना पर पुरुषोंसे हो जाता है।

इनका अनुवाद संस्कृतमें करो:—

जब महाराजकी सवारी बाज़ार (राजवीथी) से गुजरी तो सड़कके दोनों ओर लोगोंकी भीड़ जमा हो गई।

विना अर्जुन के भीष्म दादाको कौन जल पिलानेको समर्थ था।

बिना भगवानके मुझ बेचारीको कौन इस विपत्तिसे निकालेगा?

महाभारतके युद्धके समय कुरुक्षेत्रके मैदानमें दोनों पक्षोंके योद्धा हाथोंमें धनुष और कन्धोंपर तरकस (तूणीर) बांधे खड़े थे।

२२४—कृत्यानां कर्तरि वा।

२२५—तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्याम्।

पहले पैदल (पादात) थे, उनके बाद घुड़सवार (अश्वारोह), उनके पीछे रथ और रथोंके बाद हाथी खड़े थे।

सोमवारसे लेकर वीरवार तक मैंने जलके सिवा न कुछ खाया और न कुछ पिया।

आज इतनी वर्षा हो रही है कि आज घरसे निकलना (विष्क्रमण) मानो बीमारीको बुलाना (निमन्त्रण) है।

मैंने तीन साल संस्कृतके सिवा और कुछ नहीं पढ़ा, तब मुझे उसका थोड़ा सा ज्ञान हुआ।

यह पर्वत छः कोस तक लगातार इसी तरह चला जाता है, बीच बीचमें कहीं ऊँचा हो जाता है और कहीं नीचा।

छात्रने गुरुसे जो प्रश्न पूछा था वह बहुत कठिन था, तभी तो गुरु जी ने सोचनेमें तीन घन्टे लगाये।

यह लड़की फूल चुन चुन कर सुन्दर माला बना रही है और उसे अपनी मालकिनसे भेंट करेगी।

चाहे वह लड़की आंखसे अंधी है तो भी उसका मुख कमलके समान सुन्दर और हृदय दर्पणके समान स्वच्छ है।

उस नौकरसे क्या काम जो समयपर धोखा दे।

रावणके मरनेपर मनुष्यों ही ने नहीं वरन् (अपितु) देवतोंने भी आनन्द मनाया।

चौकमें सिपाही (रक्षापुरुष) देख रहा था तो उस बदमाश (धूर्त) ने मेरी रुपयांको गांठ (ग्रन्थि) काट ली।

घरके जल जानेपर कुआं खोदनेसे क्या लाभ।

अनुशीलनी—३०

१—कारक कितने प्रकार के हैं।

२—कारक विभक्ति और उपपद विभक्ति किसे कहते हैं?

३—करण, सम्प्रदान, अधिकरण—इनके लक्षण और उदाहरण लिखो।

४—इनके साथ कौन कौन विभक्ति आती है? वाक्योंमें प्रयोग करो :

प्रति, विना, तुल्यम्, धिक्, अन्तरा, प्रभृति, स्वाहा, पृथक्, ऋते, अन्तरेण, अलम्, कृते, सह, नमः।

५—कर्तृ-तृतीया और करण-तृतीयाका भेद वाक्यों द्वारा स्पष्ट करो।

६—भावे सप्तमी, अवधीरण-षष्ठी और निर्वाचन-सप्तमी के उदाहरण दो।

७—सम्बन्धको कारक क्यों नहीं मानते? सप्रमाण बताओ।

८—क्रुध्, युध्, ईर्ष्य्, रुच्, स्वद्, असूय्—इनके साथ जो जो विभक्तियां आती हैं, उनका प्रयोग वाक्यों में करो।

९—इनमें रिक्त स्थानोंको भरो—

ईश्वरं——को मां रक्षितुं क्षमः। मह्यं—न रोचते, परं दधि—।——भवतः कार्यं निष्पादितम्। जनकः पुत्रम्—, यतः तेन तस्याज्ञा न ——। निरक्षरेण पुत्रेण—। मया एतत् वस्त्रम् एकेन—क्रीतम्। जटाभिः असो —— प्रतीयते।—एवंविधैः निष्प्रयोजनैरालापैः। कथय मे——पुरातनीमेकामाख्यायिकाम्। —जनकं कन्याविक्रेतारम्।

१०—कुछ द्विकर्मक धातु बता कर उनका प्रयोग वाक्योंमें करो।

११—इन वाक्योंमें भावे सप्तमी लगाकर बदलो—

यदा रामः वनं प्राप्तः तदा सर्वे वनवासिनः प्रासीदन्। यदा तस्य विवाहः संजातः, तदा पितृगृहं त्यक्तवान्। कर्णः यदा पराजितः तदा दुर्योधनस्याशा भग्ना।

विशेषणोंके आगे तारतम्य-बोधक तद्धितप्रत्यय

२२८—दो पुरुष वा पदार्थोंमें से यदि एकके गुण दूसरेकी अपेक्षा न्यून या अधिक बताने हों तो वहाँ *तुलनावाचक* (Comparative Degree) का प्रयोग होता है। दो से अधिक पुरुष वा पदार्थोंमें से यदि एकके गुण सबकी अपेक्षा अधिक वा न्यून बताने हों तो वहां *अतिशयवाचक* विशेषण (Superlative Degree) का प्रयोग होता है।

२२९—तुलनावाचक विशेषण बनानेके लिए *तर* (तरप्) प्रत्यय है और अतिशयवाचक बनाने के लिए *तम* (तमप्)।

जैसे—रामः हरिश्च द्वौ एव पटू, परं हरिः रामात् पटुतरः। सर्वे एव इमे वृक्षाः लघवः, परम् अयं वृक्षः सर्वेषु लघुतमः।

अनयोरश्वयोरयं रक्तोऽश्वो द्रुततरः। हस्ती सर्वेषु जीवेषु स्थूलतमः।

तर और तम इन अर्थोंमें सब विशेषणोंके अन्तमें आते हैं।

कई अव्यय, उपसर्ग और संज्ञा शब्दोंके परे भी तर और तम आते हैं। उत्+तर=उत्तरः, उत्+तम=उत्तमः, अतितरः, अतितमः। उच्चैस्तरः, उच्चैस्तमः। पाचकतरः, पाचकतमः। कुमारतरः, कुमारतमः।

उपसर्ग और अव्ययों के बाद तर और तम लगाने पर वे विशेषण हो जाते हैं। उत्तरः, उत्तमः, उच्चैस्तरः, उच्चैस्तमः—ये विशेषण हैं।

परन्तु जिनके बाद तराम् और तमाम् जोड़े जाते हैं वे अव्यय (क्रिया-विशेषण) ही बने रहते हैं। उच्चैस्तमाम् उत्पतति। सुतराम्, नितराम्।

कभी कभी क्रियापदोंके बाद भी क्रियाविशेषण के अर्थमें तराम् और तमाम् लगाये जाते हैं। जैसे—पठतितराम्, पठतितमाम्।

२२८—गुणवाचक विशेषणके अन्तमें तुलना अर्थमें ईयस् और अतिशय अर्थमें इष्ठ भी आते हैं।

२२९—ईयस् और इष्ठ से पूर्व यदि कोई स्वर हो तो उसका और यदि कोई व्यञ्जन हो तो उस व्यञ्जन और उसके पूर्ववर्ती स्वरका लोप हो जाता है। जैसे—पटु+ईयस्=पट्+ईयस्=पटीयस्, पटु+इष्ठ=पटिष्ठ। लघु+ईयस्=लघीयस् लघु+इष्ठ=लघिष्ठ। महत्+ईयस्=मह्+ईयस्=महीयस्, महत्+इष्ठ=महिष्ठ। बलिन्+ईयस्=बलीयस्, बलिन+इष्ठ=बलिष्ठ।

२३०—ईयस् और इष्ठसे पूर्व पृथु, मृदु, कृश, दृढ़ में ऋ को र हो जाता है। जैसे—पृथु+ईयस्=प्रथु+ईयस्=प्रथ्+ईयस्=प्रथीयस्, मृदु+इष्ठ=म्रदु+इष्ठ=म्रद्+इष्ठ=म्रदिष्ठ। कृश—ईयस्=क्रशीयस्। दृढ़—द्रढीयस्—द्रढिष्ठ।

२३१—ईयस् और इष्ठ से पूर्व मत्, वत्, विन् का लोप हो जाता है। बलवत्+ईयस्=बल+ईयस्=बलीयस्—ब[illegible]। धनवत्-धनीयस्—धनिष्ठ। यशस्विन् ईयस्=यशीयस्—यशिष्ठ।

इन रूपोंमें विशेष परिवर्तन होते हैं।

युवन्	युवक	यवीयस्	यविष्ठ
		कनीयस्	कनिष्ठ
अल्प	छोटा, थोड़ा	अल्पीयस्	अल्पिष्ठ
		कनीयस्	कनिष्ठ
प्रशस्य	श्लाघ्य	ज्यायस्	ज्येष्ठ
		श्रेयस्	श्रेष्ठ
वृद्ध	पुराना	ज्यायस्	ज्येष्ठ
		वर्षीयस्	वर्षिष्ठ
अन्तिक	समीप	नेदीयस्	नेदिष्ठ
वाढ	अच्छा	साधीयस्	साधिष्ठ
प्रिय	प्यारा	प्रेयस्	प्रेष्ठ
स्थिर	निश्चल	स्थेयस्	स्थेष्ठ
स्फिर	मोटा	स्फेयस्	स्फेष्ठ
गुरु	भारी	गरीयस्	गरिष्ठ
दीर्घ	लंबा	द्राघीयस्	द्राघिष्ठ
बहु	बहुत	भूयस्	भूयिष्ठ
स्थूल	मोटा	स्थवीयस्	स्थविष्ठ
दूर	दूर	दवीयस्	दविष्ठ
ह्रस्व	छोटा	ह्रसीयस्	ह्रसिष्ठ
क्षिप्र	शीघ्र	क्षेपीयस्	क्षेपिष्ठ
क्षुद्र	छोटा	क्षोदीयस्	क्षोदिष्ठ
बहुल	बहुत	बंहीयस्	बंहिष्ठ

इनके स्त्रीलिङ्ग-रूप ईकारान्त होकर गरीयसी आदि नदी की तरह और नपुंसकलिङ्ग-रूप गरीयः आदि मनस् की तरह होंगे।

अभ्यास

वासस्सु ऊर्णावस्त्रं शीतनिवारकतमम्, कौशेयं च म्रदिष्ठम्। कदाचित् बलमपि कार्यसाधने गरीयः, गरिष्ठा तु सर्वत्र बुद्धिरेव। नानात्यासु अनासु दमयन्तीं चारुतमा, भर्तर्यनुरक्ततमा चासीत्। दशरथस्य तिसृषु

भार्यासु कौसल्या ज्येष्ठा, कैकेयी मध्यमा, सुमित्रा च कनिष्ठासीत् । गरुत्मान् यथोच्चैस्तराम् आकाशे उत्पतति न तथान्यो विहगः । कार्ये सुतरां सम्पादिते न कदापि कर्तुः पश्चात्तापो जायते ।

सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः सर्पात् क्रूरतरः खलः ॥
महत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति ॥
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ॥

इनका अनुवाद संस्कृत में करो:—

पांच पांडवोंमें युधिष्ठिर सबसे बड़ा था और सहदेव सबसे छोटा, शेष तीन एक दूसरे से बड़े छोटे थे।

हिमालय पर्वतोंमें सबसे ऊँचा और लंबा है, इसमें कई शहर बसे हुए हैं।

पशुओंमें सबसे तेज़ चलने वाला (द्रुततमगामिन्) हरिण है और सबसे धीमा चलने वाला (मन्दतमगति) हाथी है।

यह रसोइया भोजन बहुत अच्छा बनाता है। भूख न होनेपर भी खाना छोड़नेको जी नहीं चाहता।

वृन्दावनके मन्दिर दूसरे मन्दिरोंसे अधिक सुन्दर हैं, परन्तु जगन्नाथका मन्दिर सबसे सुन्दर और विशाल है।

मेरा दुपट्टा (दुकूल) तुम्हारेसे अच्छा है, किन्तु सबसे अच्छा तो वह है जो सरलाने ओढ़ा हुआ है।

माता पिताको सबसे छोटा लड़का दूसरे लड़कोंसे अधिक प्यारा होता है।

अनुशीलनी—३१

१—इन शब्दोंके तुलनावाचक और अतिशयवाचक रूप लिखो—बहु, स्थूल, महत्, बलवत्, बहुल, पटु, यशस्विन्, उच्चैस्, पचति, पठन्ति।

२—क्रियाओंके साथ कौनसे अतिशयवाचक प्रत्यय लगाये जाते हैं?

३—गरिष्ठ, द्राघिष्ठ, ज्येष्ठ, म्रदिष्ठ, यवीयस्, प्रेयस्, साधिष्ठ, गरीयस्—इनमें किस किस शब्दके साथ कौन कौनसा प्रत्यय लगा हुआ है?

४—तीन ऐसे उदाहरण दो जिनमें ईयस् और इष्ठ से पूर्व किसी शब्दमें ऋ को र हुआ हो।

५—क्रिया और अव्ययोंको तारतम्यका रूप बनानेके लिये उनके साथ कौन कौन प्रत्यय आते हैं? उदाहरणोंसे स्पष्ट करो।